हस्तप्रतों में उपलब्ध प्राचीन पाठों (शब्द-रूपों) के आधार पर
भाषिक दृष्टि से पुनःसम्पादित

आचाराङ्ग

प्रथम श्रुत-स्कन्ध : प्रथम अध्ययन

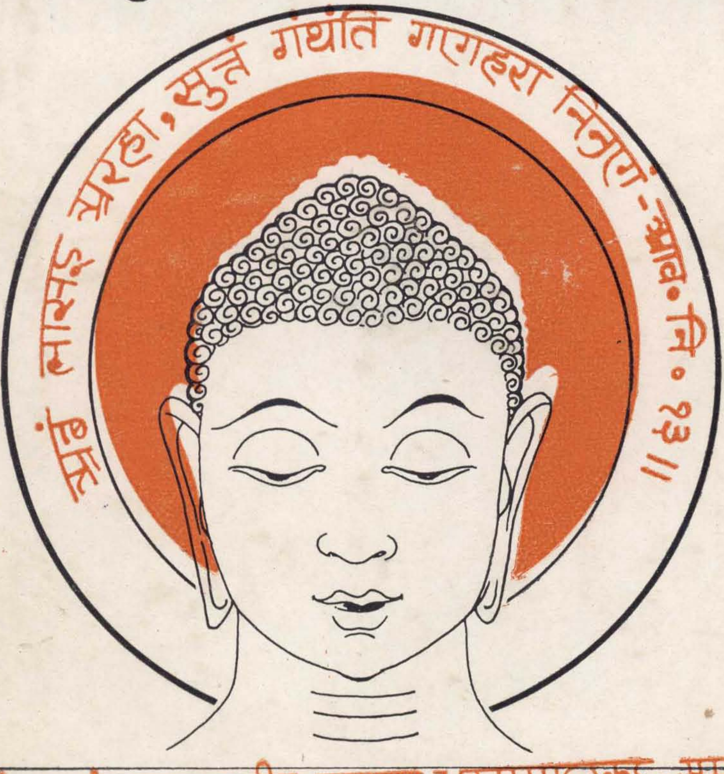

भगवं च णं अद्धमागहीए भासाए धम्ममाइक्खइ - समवा. सू. ३४

संपादक : के. आर. चन्द्र

प्राकृत जैन विद्या विकास फंड
अहमदाबाद

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

जैन संघ के लिए गौरवरूप घटना

भगवान् महावीर की भाषा अर्धमागधी थी, यह तो आगमों एवं परंपरा में अतिप्रसिद्ध एवं स्वीकृत बात है । मुख्य बात है यहां भाषा- परिवर्तन की : भगवान् की भाषा बदल कैसे गई ? अर्धमागधी के अवशेष भी न मिले इस हद तक महाराष्ट्री प्रविष्ट हो गई, यह कैसे ?

लगता है कि जैसे भगवान् ने लोकभाषा को प्राधान्य दिया था उसी तरह हमारे पूर्वाचार्यों ने भी समय के एवं देशों के परिवर्तन के साथ साथ बदलती हुई लोकभाषा को प्राधान्य दिया और मरहट्ठी प्राकृत के यानी महाराष्ट्री प्राकृत भाषा के बढ़े हुए व्यवहार को लक्ष्य में लेते हुए आगमों को भी उसी भाषा में ढलने दिये । आखिर तो वे थे धर्मग्रंथ और उनका प्रयोजन था भगवान् के तत्त्वोपदेश को लोकहृदय तक पहुँचाना । वह तो लोकभोग्य या लोकप्रिय भाषा के जरिये ही हो सकता था ।

किन्तु इस प्रक्रिया में भगवान् की मूल जबान हमारे पास न रह सकी । अर्धमागधी महदंश में नामशेष हो गई । आज जो कुछ मिलता है वह फुटकर अवशेषों से ज्यादा नहीं और ऐसे अवशेषों को इधर उधर से ढूंढना-जुटाना यह तो एक पुरातत्त्वविद् का सा कार्य है ।

मैं कहना चाहूँगा कि जैसे एक पुरातत्त्वविद् पथरे-ठीकरों को ढूंढते-ढूंढते अतीत के गुप्त-लुप्त वैभव को उजागर कर देता है, ठीक उसी तरह हमारे भाषा-पुराविद् डो.के.ऋषभचन्द्र (के.आर.चन्द्र) अर्धमागधी भाषा के विषय में खोज कर रहे हैं। **आचारांग का प्रथम अध्ययन** उन्होंने जिस परिश्रम से तैयार कर दिखाया है, **वह सचमुच हमारे लिए आश्चर्यजनक है और पूरे जैन संघ के लिए गौरवरूप भी** । भगवान् की खुद की भाषा और उनके प्रयुक्त शब्द सुनने-पढ़ने को मिले इससे बढ़कर और कौनसा गौरव हमारे लिए — एक जैन के लिए हो सकेगा भला ?

मैं चाहता हूँ कि डो.चन्द्रजी आचारांग के पूरे प्रथम श्रुतस्कन्ध को इसी ढंग से तैयार करें । **उनका यह प्रदान शकवर्ती (ऐतिहासिक) व युगों तक चिरंजीव रहेगा**, इसमें मुझे कोई शंका नहीं है ।

अंत में, भगवान् महावीर की कृपा उन पर सदैव बरसें और वे जिनागम की इस ढंग की सेवा करते करते अपना कल्याण पा लें ऐसी शुभकामना व्यक्त करता हूँ ।

-विजयशीलचन्द्रसूरि

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

विद्या विकास फण्ड, ग्रन्थाङ्क - १३

आचाराङ्ग : पढम सुत-खंध
पढम अज्झयन

[हस्तप्रतों में उपलब्ध प्राचीन शब्द-रूप (पांठों) के आधार पर भाषिक दृष्टि से पुनः सम्पादन]

डॉ. के. आर. चन्द्र
भूतपूर्व अध्यक्ष
प्राकृत-पालि विभाग, भाषा साहित्य भवन
गुजरात युनिवर्सिटी, अहमदाबाद-३८०००९

प्रकाशक
प्राकृत जैन विद्या विकास फंड
अहमदाबाद
१९९७

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

प्रकाशक
डॉ. के. आर. चन्द्र
मानद मंत्री
प्राकृत जैन विद्या विकास फंड
अहमदाबाद-३८००१४

प्रत ५००

ई. सन् १९९७

मूल्य : रू. १५०-००

मुद्रक :
क्रिश्ना ग्राफिक्स
किरीट हरजीभाई पटेल
९६६, नारणपुरा जूना गाँव, अहमदाबाद-३८००१३
(दूरभाष : ७४८४३९३)

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

DEDICATED
To
The Loving Memory of My
Reverend Teacher

LATE DR. HIRALAL JAIN
M.A., D.Litt.

Editor of The ṢAṬKHAṆḌĀGAMA

Doyen of Apabhraṁśa Studies

Editor of old texts like **Sāvayadhammadohā, Pāhuḍadohā, Ṇāyakumāracariu, Karakaṇḍacariu, Sudaṁsaṇacariu,** etc., etc.

Ex. Head of the Department of Sanskrit, Pali and Prakrit, Nagpur Mahavidyalay, Nagpur
&
Ex. Director of Vaishali Research Institute of Prakrit, Jainology and Ahiṁsā, Muzaffarpur (Bihar)
and
Ex. Professor and Head of the Department of Prakrit, Pali and Sanskrit, Jabalpur University, Jabalpur (M.P.)

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

Publisher's Note

This is the thirteenth publication and it is a matter of great satisfaction for our Society. For the author/editor of this work (i.e. the first chapter of the first part of the Ācārāṅga, the earliest and oldest composition in the Ardhamāgadhī Prakrit language) it is an event of great pleasure that it has been possible to complete this work inspite of various hurdles. It has been re-edited linguistically only which was a herculean task for any editor who would have undertaken to do so, as per the opinion of various scholars and particularly the late Āgama-Prabhākara Muni Shri Puṇyavijayaji and Pt. Shri Bechardasji Doshi. It took almost ten years to prepare this edition as it was indispensable first of all to sort out the archaic word-forms of the original Ardhamāgadhī Prakrit from the authentic published editions of the senior Ardhamāgadhī texts and whatever Mss. of the Ācārāṇga were accessible to the author. And for this thousands of word to word cards of textual readings were prepared and arranged alphabetically to ascertain the original form of the words.

To bring home the truth regarding the principles applied in editing this ancient text it was indispensable to do some spade-work for the conviction of the scholars and the orthodox clergy about the archaic form of the Ardhamāgadhī language and in that context our Society published three works, viz. (1) Prācīna Ardhamāgadhī kī Khoj meṁ, 1992, (2) Restoration of the Original Language of Ardhamāgadhī Texts, 1994 and Paramparāgata Prākṛta Vyākaraṇa Kī Samīkṣā aur Ardhamāgadhī, 1995 penned by the same author as well as a number of his articles in reputed journals.

We have appended purposefully at the end of this text opinions and reviews of the above mentioned three publications with a view to make the subject understand in its proper

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

perspective. We hope it would be immensely helpful in convincing the scholars and specially the Jain Monastic Order as to why the particular readings have been accepted and the others rejected (from the linguistic point of view). We believe that it is a step towards restoring tentatively the original form of the archaic language-speech that was spoken by Śramaṇa Bhagawān Mahāvīra. At the same time we are conscious enough that the re-edited text in question is not the last word but still research in this field is to be carried on by minutely going through a number of other Mss. and cūrnis which still preserve the archaic character of the language here and there.

Our Society is highly grateful to Pt. Shri Dalsukhbhai Malvaniya, doyen of Agamic studies and Prof. H. C. Bhayani, doyen of Prakrit studies for giving incentive as well as guiding the author for undertaking this kind of unparalalled work of historic importance, an epoch-making in the field of editing senior Ardhamāgadhī canonical texts.

We are also grateful to all the scholars and professors who could spare their precious time in expressing their Opinions and writing Reviews of the texts published, as mentioned above, relating to the Ardhamāgadhi Prākṛta, namely, the professors A.M. Ghatage , Pune, G. V. Tagare, Sangli, Nathmal Tatia, Ladnun, S.R. Banerjee, Calcutta, J.P. Thaker, Baroda, Shriranjansuridev and R.P. Poddar, Patna, M.A.Dhaky, Sagarmal Jain and S.C. Pandey, Varanasi, Sohanlal Patni, Sirohi, N. M. Kansara, Ahmedabad and a number of other professors.

We sincerely express our sense of gratitude to the Shreshthi Kasturbhai Lalbhai Smarak Nidhi, its trustees and the late Managing Trustee Shri Atmarambhai Sutaria who became instrumental in financing our earlier publications and this publication also in its initial stage of preparation from

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

Septr. 1984 to March, 1992

Our thanks are also due fo all those Prakrit (M.A) students of Dr. K.R.Chandra who prepared the word-cards, arranged them alphabetically and assisted him in correcting the proofs of the publications. In this context Miss Shobhna R.Shah M.A., M.Phil. deserves special mention as she has been working with the author continuously since long.

We would not forget to convey our thanks to the proprietors of the Printing Presses and their workers as well as designer-artists of the title cover-pages of our publications.

As regards this publication we are thankful to Shri Kirit Harjibhai Patel, Krishna Graphics and its workers for printing this text neatly and also to the artist Shri Jay Pancholi who prepared the design of the cover-page of this book. We also acknowledge with gratitude the liberality of the Jain Vishva Bharati Prakashan, the publisher of the 'ĀYĀRO' (ed. Muni Shri Nathmalji), 1974 A.D. for granting us the permission to adopt the 'title cover-page design' of that book.

Ahmedabad	**B. M. Balar**	**K.R.Chandra**
Mahavir Jayanti	President	Hon. Secretary
20-4-97		

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

सम्पादकीय

श्री महावीर जैन विद्यालय, बम्बई द्वारा प्रकाशित प्राचीनतम अर्धमागधी आगम-ग्रंथ आचारांग के पाठ और पाठान्तरों का ध्यान से अध्ययन करने पर ऐसा प्रतीत हुआ कि हस्तप्रतों में भाषिक दृष्टि से पाठान्तरों की बहुलता है और इस संस्करण में कई स्थलों पर प्राचीन शब्द-रूप पाठान्तरों में रखे गये हैं। ऐसा भी देखने को मिला कि एक ही शब्द के प्राचीन और परवर्ती काल के अलग अलग रूप एक साथ प्रयुक्त हुए हैं। अलग अलग संस्करणों में भी पाठों की एक-रूपता नहीं है। कहीं पर प्राचीन शब्द-रूप का प्रयोग है तो कहीं पर परवर्ती काल का शब्द है। हस्तप्रतों में भी इसी तरह की विषमता पायी जाती है। कहने का तात्पर्य यह है कि भाषा की प्राचीनता अक्षुण्ण नहीं रह सकी है। इस पर से ऐसा विचार आया कि अर्धमागधी के यथाशक्य मौलिक स्वरूप को स्थापित किया जाय और उसके आधार से नमूने के रूप में आचारांग के एक अध्ययन का भाषिक दृष्टि से सम्पादन किया जाय।

इस उद्देश्य की पूर्ति के लिए अर्धमागधी की प्राचीनता और उसके स्वरूप के विषय में तीन ग्रंथ प्रकाशित किये गये। प्रथम ग्रंथ 'प्राचीन अर्धमागधी की खोज में, १९९२' प्रकाशित किया गया। इसमें मुख्यतः अर्धमागधी प्राकृत के काल और उसके प्रदेश पर प्रकाश डाला गया है। दूसरे ग्रंथ ' रेस्टोरेशन ओफ दी ओरिजिनल लैंग्वेज ओफ अर्धमागधी टेक्स्ट्स, १९९४' में दश शब्दों के हस्तप्रतों में उपलब्ध विविध स्तर के अनेक शब्द-रूपों का अध्ययन किया गया है और इस निष्कर्ष पर पहुंचा गया है कि कभी कभी प्राचीन ताड़पत्र की प्रतियों में परवर्ती काल के शब्द-रूप मिलते हैं तो कभी कभी परवर्ती काल की कागज़ की प्रतों में प्राचीन शब्द-रूप प्राप्त होते हैं। ऐसी अवस्था में जहां पर भी प्राचीन शब्द-रूप मिलता हो उसे ही क्यों नहीं स्वीकृत किया जाना चाहिए? तीसरे ग्रंथ 'परंपरागत प्राकृत व्याकरण की समीक्षा और अर्धमागधी, १९९५' में यह दर्शाया गया है कि मध्यवर्ती अल्पप्राण व्यंजनों का प्रायः लोप और महाप्राण व्यंजनों का 'ह' कार में प्रायः परिवर्तन के प्राकृत वैयाकरणों के नियम अर्धमागधी प्राकृत पर कितने प्रमाण में लागू हो सकते हैं तथा जिन जिन कारकों के एक से अधिक विभक्ति-प्रत्यय प्राकृत

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

व्याकरणों में दिये गये हैं उनमें से कौन से प्राचीन और कौन से परवर्ती काल के हैं और अर्धमागधी जैसी प्राचीन प्राकृत भाषा के लिए कौन से प्रत्यय उपयुक्त माने जाने चाहिए ।

प्राचीन शब्द-रूपों की शोध के संबंध में एक और कार्य किया गया। प्राचीन माने जाने वाले आगम-ग्रंथों में से प्राचीन-शब्द रूपों का चयन करके (उनके कार्ड बनाकर) उनको अकारादिक्रम से जमाया गया जिससे इस सम्पादन में उनका यथास्थान उपयोग किया जा सकें । इस कार्य के लिए जिन ग्रंथों का चयन किया गया वे इस प्रकार हैं । श्री महावीर जैन विद्यालय, बम्बई द्वारा प्रकाशित आचारांग, सूत्रकृतांग, उत्तराध्ययन और दशवैकालिक तथा ला. द. भा. सं. विद्यामंदिर, अहमदाबाद द्वारा प्रकाशित इसिभासियाइं (ऋषिभाषितानि) ।

कहने का तात्पर्य यह है कि इस संपादन में जहाँ तक हो सके सभी तरह से प्राचीन शब्द-रूपों को ग्रहण करने का प्रयत्न किया गया है ।

इस सम्पादन कार्य को प्रारंभ करने और उसे सम्पन्न करने में पं. श्री दलसुखभाई मालवणिया और डो. ह. चू. भायाणी का जो मार्गदर्शन और सहयोग रहा है तथा उन्होंने जो प्रोत्साहन दिया है उसके लिए मैं उनका हृदयपूर्वक आभार मानता हूँ।

इस ग्रंथ को तैयार करने में कुमारी शोभना आर. शाह लगातार मेरी सहायता करती रही है । अत: उसका भी आभार मानता हूँ । इसके अतिरिक्त अन्य विद्यार्थिनियों प्रीति मेहता, जागृति पंड्या, गीता महेता, अरुणा भट्ट, आदि, आदि ने प्राचीन आगम ग्रंथों, पालि भाषा और अशोक के शिलालेखों के शब्दों के कार्ड तैयार करके जो सहयोग किया हैं उस कार्य के लिए उनका भी आभार मानता हूँ।

इस ग्रंथ को तैयार करते समय अन्य विद्वानों और मुनि महाराजों ने भी जो उपयोगी सलाह दी हैं उनका भी मैं अभारी हूँ ।

इसमें जिन जिन मुद्रित संस्करणों का उपयोग किया गया है उनके संपादकों एवं जिन जिन हस्तप्रतों का उपयोग किया गया है उन ज्ञानभंडारों एवं संस्थाओं का आभार मानता हूँ । विशेष करके ला. द. भारतीय संस्कृति विद्यामंदिर का और उसके संचालकों का तो अत्यन्त अभारी हूँ क्योंकि उस

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

संस्था के पुस्तकालय का मुझे पूरी स्वतंत्रता के साथ उपयोग करने दिया गया है। कतिपय हस्तप्रतों की फोटो अथवा जेरोक्स नकल उपलब्ध करवाने के लिए श्री लक्ष्मणभाई भोजक एवं स्वर्गीय श्री रमेशकुमार दलसुखभाई मालवणिया का भी मैं आभारी हूँ। इस प्रकार के कार्य में पूज्य मुनि श्री जंबूविजयजी (आगमों के संपादक) और पू. मुनि (अब आचार्यपद प्राप्त) श्री शीलचन्द्रविजयजी ने भी यथासंभव जो सहायता की हैं तदर्थ उनका भी बहुत आभारी हूँ।

इस ग्रंथ के प्रारंभ में महत्वपूर्ण दो शब्द लिखने के लिए विद्वद्वर्य पं. श्री दलसुखभाई मालवणिया, प्रो. डॉ. ए. एम. घाटगे, प्रो. डॉ. हरिवल्लभ भायाणी, पू. मुनि श्री विजयशीलचन्द्रविजयजी (अब सूरिजी), इत्यादि का भी मैं अत्यन्त आभारी हूँ।

इस ग्रंथ के विषय में प्रकाशित होने के पूर्व इस संस्करण में रुचि लेकर जिन जिन विद्वानों ने अपने अपने बहुमूल्य अभिप्राय व्यक्त किये हैं (जिन्हें इसी ग्रंथ में समाविष्ट किया गया हैं) उन सभी सज्जनों का मैं हृदयपूर्वक अभार मानता हूँ।

इस प्रकाशन के प्रूफ संशोधन में कुमारी शोभना आर. शाह ने जो सहायता की है उसके लिए भी आभार प्रदर्शित करता हूँ।

अन्त में इस कार्य को सम्पादित करने में जिन जिन महानुभावों ने मुझे प्रोत्साहित किया, उपयोगी सलाह-सूचन दिया, एवं अन्य प्रकार से जो भी सहायता की उन सब का मैं हृदय-पूर्वक आभार मानना अपना एक पवित्र कर्तव्य-धर्म समझता हूँ।

सधन्यवाद,

भवदीय

-के. आर. चन्द्र

महावीर जयन्ती

चैत्र शुक्ल त्रयोदशी

अहमदाबाद

★दिनांक २०-४-९७

★ सामान्य प्रजा की जानकारी एवं जैन समाज की जागृति के लिए दिनांक २७-४-९७ अहमदाबाद में इस ग्रंथ के विमोचन का जो कार्यक्रम आचार्य श्री विजयशीलचन्द्रसूरिजी ने आयोजित किया हैं उसके लिए उनका और सहयोग करनेवाली संस्थाओं का आभार मानते हुए मुझे हर्ष होता है।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

अर्धमागधी का मूल स्वरूप निर्णीत करने का स्तुत्य प्रयास

भगवान महावीर ने अपना उपदेश अर्धमागधी भाषा में दिया था— यह बात भगवतीसूत्र से सुप्रसिद्ध है । अतएव डो. चन्द्रा जो अर्धमागधी की खोज में व्यस्त हैं, उनका ध्यान आचारांग के प्रथम श्रुतस्कंध की ओर जाय यह स्वाभाविक है । उन्होंने आचारांग के प्रथम अध्ययन को अर्धमागधी भाषा में रूपान्तरित करने का जो प्रयत्न किया है वह प्रशंसनीय है । उसे देखने का सुअवसर मुझे मिला है यह मेरा सद्भाग्य है और अध्ययन करने के बाद यह अब मैं कह सकता हूँ कि डो. चन्द्रा ने जो किया है वह वे ही कर सकते हैं क्योंकि उनका ध्यान वर्षों से इस ओर है कि वास्तविक दृष्टि से अर्धमागधी भाषा का क्या स्वरूप हो । यह कार्य सरल नहीं है किन्तु डो. चन्द्रा ने अर्धमागधी भाषा के स्वरूप के विषय में अध्ययन किया है और अब उनके समक्ष उसका स्वरूप स्पष्ट हुआ है । अतएव वे इस बात को स्पष्ट रूप से कह सकते हैं कि अर्धमागधी भाषा का स्वरूप ऐसा है । आचारांग को लेकर उन्होंने जो कार्य किया है वह अपूर्व है और इसके लिए वे धन्यवाद के पात्र हैं ।

जैन आगमों की भाषा दुर्भाग्य से मात्र अर्धमागधी न रहकर महाराष्ट्री से बहुत प्रभावित हो गयी है । अत: आगमों की मूलभाषा के विषय में संशोधन हो यह प्रशंसनीय ही होगा और यह कार्य डो. चन्द्रा कर रहे हैं अतएव वे धन्यवाद के पात्र हैं यह नि:सन्देह है ।

अहमदाबाद
११-८-९६

—पं. दलसुख मालवणिया

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

A NEW DIRECTION IN JAINA CANONICAL RESEARCH

Since past several years Dr. K. R. Chandra has been examining and discussing the language and character of the preserved texts of the Śvetāmbara Āgamas, which are said in the earliest known Jain tradition, to have been in the Addhamāgahā Bhāsā, i.e. Ardhamāgadhī language. What were the characteristics of that Ardhamāgadhī ? The original language has undergone changes over centuries. How to arrive at or recover that original text ? How far does the information given about Ardhamāgadhī by traditional Prakrit grammars presents a real picture of the Āgamic Ardhamāgadhī ? These are the problems to which Dr. Chandra has addressed himself in his earlier writings. His present latest attempt aims at applying his resultant concept and principles of restoration to one small part of the Ardhamāgadhī texts by way of a sample demonstration, viz. the first chapter of the first *Aṁga*, the *Āyāraṁga*, which scholars have accepted as the earliest among the Āgama texts.

Dr. Chandra goes about the task he has undertaken here in a quite systematic manner. First he presents a concordance of the orthographic variants *sūtra*-wise from the editions of the Mahavir Jain Vidyalay, Āgamodaya Samiti, Jain Vishvabharati, from Śīlāṅka's commentary and from several earliest known Mss. of the 13th, 14th and 15th century. Next he has documented variation between writing the nasal consonant as dot or a homo-organic nasal, between *n* and *ṇ*, between preservation, voicing or elision of an intervocalic stop (or the stop constituent of an aspirate stop).

Next follows the restored text of *Āyāraṁga* 1 on the basis of the available 'archaic' readings. In the fourth section is given statistical information about certain phonetic changes as seen in earlier and later forms. A complete alphabetical index of all the word-forms of the restored text is given. Finally, there has been presented in parallel columns the restored text along with the corresponding texts according to the known earlier editions.

Thus Dr. Chandra's present work succeeds, substantiated

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

as it is by evidence based on comparative documentation and assessment of all available textual data, in giving as a glimpse of some phonological and morphological features of the original Āgamic Ardhamāgadhi, of which we find a later form in the Eastern Aśokan.

Let us earnestly hope this important research work is further taken up by other students of the Ardhamāgadhi canon, at least with regard to the seniors of the canon, i.e. the texts of the first two canonical stages (see Suzuko Ohira : *A Study of the Bhagavatīsūtra*, chapter I), for which Dr. Chandra has given the lead and has demonstrated the method.

Due to the inevitable impact of the dominant literary medium firstly in the times of the Mathurā recension (literary Śauraseni)and secondly during the times of Valabhī recension (literary Mahārāṣṭrī), several phonological and morphological traits of the original became gradually altered. Modern researches in the history of the development of Middle Indo-Aryan help us in ascertaining the original readings from the preserved text tradition.

This is of course one of the several aspects of the task of restoring the Āgamic texts. Tracing and locating old words and meanings, expressions, phrases, verses, stylistic devices, themes, legends and tales that are specific and commonly shared by the early stratum of the Ardhamāgadhī and the Pāli canonical texts, along with the chronological stratification (besides the help available from the Eastern Aśokan) are other requisites for forming a sound, authentic and trustworthy idea of the original character of the Āgamic texts and the historical changes they have undergrone. Considerable work of course has been already done by numerous scholars in this direction, which requires to be vigorously furthered.

Ahmedabad —Prof. H. C. Bhayani
September 25, 1996

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

A CONSTANT CONTINUOUS, AND LAUDABLE EFFORT

Excuse me being so late in expressing my views on your **constant continuous and laudable effort** to build up the earliest structure of Ardhamāgadhī as seen in the oldest books of the canon, particularly Āyāraṁga and Sūyagaḍaṁga. **I agree with you whole-heartedly** and **express my admiration at the labour you have taken to go into the statistical evidence for your conclusions.**

You have confined yourself to the phonology of the language and you have included a few grammatical forms and a few rare words. **You merit greatest praise for your work** and the assumption that the oldest Ardhamāgadhī retained the old Indo-Aryan stops like k, t and p as also, g, d, and b as does Pali in most cases. You will have also to consider the retention of nasal 'n' (dental) which is the only nasal in Pāli and it rarely uses 'ṇ' (cerebral nasal). The clusters 'ṇṇ' and 'nn' are used without distinction and one may consider the dental cluster 'nn' as earlier than 'ṇṇ'.

BORI, (Pune)
24-10-96

–Prof. A. M. Ghatage

मान्य भाई,

जिनागमों के क्षेत्र में आपका उल्लेखनीय योगदान है। इस पर हम सबको गर्व है और हम सब आपके प्रति गहन सामाजिक कृतज्ञता का अनुभव करते हैं।

इन्दौर
३-६-९४

– नेमीचंद जैन
(संपा. तीर्थंकर)

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

Dear Dr. Chandraji,

Many thanks for your letter No.288 dt. 22-5-92. I received the book *'Prācīna Ardhamāgadhī kī Khoja meṅ'* in due time. **It is an excellent piece of research**. It throws enough light on ancient Ardhamāgadhī language of the Jaina Scriptures. **Is it possible for you to edit the 1st part of the Ācārāṅga-sūtra applying the principles formulated in your book ? It will be a monumental work if done by you.**

Ladnun — -Nathmal Tatia
31-2-92

ધર્મલાભ, વિસ્તારથી પત્ર આજે મળ્યો. **મારે અભ્યાસ કરવો પડશે.** તમારા ઘણા ઘણા શ્રમ માટે ખૂબ ખૂબ અભિનંદન. **કરો આચારાંગનું કામ હું ખૂબ રાજી છું.** દેવગુરુકૃપાથી સુખસાતા છે. તમને પણ સદા હો.

આદરીયાણા, વિરમગામ, ગુજરાત — જંબૂવિજય
૨૨-૭-૯૨ (જૈન આગમોના વિદ્વાન્ સંપાદક મુનિશ્રી)

विद्वद्वर श्री के. आर. चन्द्रा,

सादर धर्मलाभ,

...लेख देखा । **सचमुच में यह बहुत उत्तम प्रयास है** । हमारे आगमग्रन्थ की मूल भाषा व शब्दावली क्या थी, क्या होनी चाहिए, इस विषय को लेकर चल रहा **यह अन्वेषण हमें अपने तीर्थंकरों की निजी बानी तक पहुँचा सकती है** । मैं आपको धन्यवाद के साथ इस विषय को **पूर्ण रूप देकर पूरे आचारांग (भाग १) के पाठ को इस ढंग से तैयार करने का अनुरोध करता हूँ** ।

महुवा (गुजरात) — शीलचन्द्रविजय
२२-१२-९२ (सूरिसम्राट श्री नेमिसूरीश्वरजी के समुदाय के विद्वान् मुनि श्री)

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

जैन संघ के लिए गौरवरूप घटना

[श्रमण भगवान् महावीर के मौलिक उपदेश जिस पुस्तक में ग्रंथस्थ है उस 'आचारांग' यानी जैन अर्धमागधी आगम साहित्य के प्राचीनतम ग्रंथ का भाषिक दृष्टि से पुनः सम्पादित संस्करण के विषय में आचार्य श्री विजयशीलचंद्रसूरिजी]

भगवान् महावीर की भाषा अर्धमागधी थी, यह तो आगमों एवं परंपरा में अतिप्रसिद्ध एवं स्वीकृत बात है। मुख्य बात है यहां भाषा- परिवर्तन की : भगवान् की भाषा बदल कैसे गई ? अर्धमागधी के अवशेष भी न मिले इस हद तक महाराष्ट्री प्रविष्ट हो गई, यह कैसे ?

लगता है कि जैसे भगवान् ने लोकभाषा को प्राधान्य दिया था उसी तरह हमारे पूर्वाचार्यों ने भी समय के एवं देशों के परिवर्तन के साथ साथ बदलती हुई लोकभाषा को प्राधान्य दिया और मरहट्ठी प्राकृत के यानी महाराष्ट्री प्राकृत भाषा के बढ़े हुए व्यवहार को लक्ष्य में लेते हुए आगमों को भी उसी भाषा में ढलने दिये। आखिर तो वे थे धर्मग्रंथ और उनका प्रयोजन था भगवान् के तत्त्वोपदेश को लोकहृदय तक पहुँचाना। वह तो लोकभोग्य या लोकप्रिय भाषा के जरिये ही हो सकता था।

किन्तु इस प्रक्रिया में भगवान् की मूल जबान हमारे पास न रह सकी। अर्धमागधी महदंश में नामशेष हो गई। आज जो कुछ मिलता है वह फुटकर अवशेषों से ज्यादा नहीं और ऐसे अवशेषों को इधर उधर से ढूंढना-जुटाना यह तो एक पुरातत्त्वविद् का सा कार्य है।

मैं कहना चाहूँगा कि जैसे एक पुरातत्त्वविद् पथरे-ठीकरों को ढूंढते-ढूंढते अतीत के गुप्त-लुप्त वैभव को उजागर कर देता है, ठीक उसी तरह हमारे भाषा-पुराविद् डॉ.के.ऋषभचन्द्र (के.आर.चन्द्र)अर्धमागधी भाषा के विषय में खोज कर रहे हैं। **आचारांग का प्रथम अध्ययन** उन्होंने जिस परिश्रम से तैयार कर दिखाया है, **वह सचमुच हमारे लिए आश्चर्यजनक है और पूरे जैन संघ के लिए गौरवरू प भी**। भगवान् की खुद की भाषा और उनके प्रयुक्त शब्द सुनने-पढ़ने को मिले इससे बढ़कर और कौनसा गौरव हमारे लिए – एक जैन के लिए हो सकेगा भला ?

मैं चाहता हूँ कि डॉ.चन्द्रजी आचारांग के पूरे प्रथम श्रुतस्कन्ध को इसी ढंग से तैयार करें। **उनका यह प्रदान शकवर्ती (ऐतिहासिक) व युगों तक चिरंजीव रहेगा,** इसमें मुझे कोई शंका नहीं है।

अंत में, भगवान् महावीर की कृपा उन पर सदैव बरसें और वे जिनागम की इस ढंग की सेवा करते करते अपना कल्याण पा लें ऐसी शुभकामना व्यक्त करता हूँ।

–विजयशीलचन्द्रसूरि

[सूरिसम्राट् श्री विजयनेमिसूरीश्वरजी के समुदाय के श्री विजयसूर्योदयसूरीश्वरजी के शिष्य]

कदम्बगिरि तीर्थ
पालिताणा, गुजरात
२०५३, मार्गशार्ष शुदि ३
२३-१२-९६

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

(મૂળ લખાણ ગુજરાતી ભાષામાં)

—आगम-प्रभाकर मुनि श्री पुण्यविजयजी का मत—

उपलब्ध हस्तप्रतों में

जैन आगमों की अर्धमागधी भाषा में आगत विकृतियाँ

Views of Āgama-prabhākara Munī Śrī Puṇyavijayajī

On the Form of the Original Language of Jain Ardhamāgadhī Texts as it is found

ALTERED IN THE PRESERVED MANUSCRIPTS

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

विद्वद्वर्य मुनि श्री पुण्यविजयजी द्वारा संपादित 'कल्पसूत्र' में से उद्धृत अंश*

१. ભાષા અને મૌલિક પાઠો (પૃષ્ઠ ૩-૪)

પ્રતિઓમાં ભાષાદષ્ટિએ અને પાઠોની દષ્ટિએ ઘણું સમવિષમપણું છે..... **અશુદ્ધ પાઠોની વિશે તો પૂછવાનું જ શું હોય ?**

કોઈ પણ જૈન આગમની મૌલિક પ્રાચીન કે અર્વાચીન સાદ્યંત સાંગોપાંગ અખંડ શુદ્ધ પ્રતિ એક પણ આપણા સમક્ષ નથી. તેમ જ ચૂર્ણિકાર-ટીકાકાર આદિએ કેવા પાઠો કે આદર્શોને અપનાવ્યા હતા **એ દર્શાવનાર આદર્શ પ્રતિઓ**

---

१. भाषा और मौलिक पाठ

भाषा और पाठों की दृष्टि से प्रतिओं में बड़ी ही समविषमता है .... **अशुद्ध पाठों के विषय में तो कहना ही क्या ?**

किसी भी जैन आगम की एक भी मौलिक प्राचीन या अर्वाचीन साद्यंत सांगोपांग अखंड शुद्ध प्रति अपने समक्ष नहीं है। तथा च चूर्णिकार-टीकाकार आदि ने **कैसे** पाठ और आदर्शों को अपनाया था ऐसा दर्शानेवाली आदर्श प्रतियाँ

---

1. Language and Original Text

From the points of view of language and text there is great disparity in the manuscripts, **what to say about corrupt readings.**

There is before us not a single original old or young manuscript which is wholly, entirely and perfectly correct. And that kind of **sources (having original readings) are also not before** us which can guide us to rely on the text and

---

★ कल्पसूत्र (गुजराती भाषांतर साथे), साराभाई मणिलाल नवाब, अहमदाबाद, ई.स. १९५२। गुजराती भाषा में उद्धृत मूल अंश है। उसका अनुवाद हिन्दी और अंग्रेजी भाषा में दिया गया है - संपादक

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

પણ આપણા સામે નથી. આ કારણસર મૌલિક ભાષા ને તેના મૌલિક પાઠોના સ્વરૂપનો નિર્ણય કરવો આપણા માટે અતિ દુષ્કર વસ્તુ છે. અને એ જ કારણને લીધે આજના દેશી-પરદેશી ભાષાશાસ્ત્રજ્ઞ વિદ્વાનોએ આજની અતિ અર્વાચીન હસ્તપ્રતોના આધારે **જૈન આગમોની ભાષા વિષે જે કેટલાક નિર્ણયો બાંધેલા છે કે આપેલા છે એ માન્ય કરી શકાય તેવા નથી.** જર્મન વિદ્વાન ડૉ. એલ. આલ્સડર્ફ મહાશય ચાલુ વર્ષમાં જેસલમેર આવ્યા ત્યારે તેમની સાથે આ વિષયની ચર્ચા થતાં તેમણે પણ આ વાતને માન્ય રાખીને જણાવ્યું હતું કે **"આ વિષે પુનઃ ગંભીર વિચાર કરવાની જરૂરત છે"** (પૃષ્ઠ. ૩).

भी हमारे सामने नहीं हैं । इस कारण मौलिक भाषा और उसके मौलिक पाठों के स्वरूप के बारे में निर्णय करना हमारे लिए अति दुष्कर बात है । इसी कारण से आधुनिक देशी और परदेशी भाषा-शास्त्रीय विद्वानों ने आज की अति अर्वाचीन हस्तप्रतों के आधार से जैन आगमों की भाषा के विषय में जो कितने ही निर्णय लेकर प्रस्तुत किये हैं उन्हें मान्य रखना योग्य नहीं माना जा सकता। जर्मन विद्वान डॉ. एल. आल्सडर्फ महाशय चालू वर्ष में जब वे जैसलमेर आये तब उनके साथ इस विषय में चर्चा की जाने पर उन्होंने भी इस बात को मान्य रखकर कहा था–**"इस विषय में पुनः गंभीर विचार करने की आवश्यकता है"** ।

---

the manuscripts that were used by the authors of the *cūrṇis* and the commentaries (in Prakrit and Sanskrit respectively). Because of that it is very difficult for us to decide the original form of the textual readings and that of the language too. And also for that reason **whatever conclusions have been arrived at and given currency about the actual form of the language of the Jain canonical texts by the modern Indian and Western scholars are not worth recognition.** When the German scholar of great repute Dr. Ludwig Alsdorf visited Jaisalmer this year the situation was discussed with him and he also admitted that **there was imperative need to reconsider the whole problem seriously.**

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

ચૂર્ણિકાર મહારાજ સામે જે કેટલાક પાઠો હતા તે આજની ટીકા વાંચનારને નવા જ લાગે તેવા છે (પૃષ્ઠ ૪).

૨. પ્રતિઓમાં શબ્દ પ્રયોગોની વિભિન્નતા (પૃષ્ઠ ૫-૭)

અર્વાચીન પ્રાકૃતમાં "क-ग-च-ज-त-द-प-य-वां प्रायो लुक्" (સિદ્ધહેમ. ૮-૧-૧૭૭) આ નિયમનું અનુસરણ જેવું જોવામાં આવે છે તેવું અને તેટલું પ્રાચીન કાળમાં ન હતું તેમજ "ख-घ-थ-ध-भाम् (સિદ્ધહેમ. ૮-૧-૧૮૭) વગેરે નિયમોને પણ એટલું સ્થાન ન હતું. **આ કારણસર પ્રાચીન**

चूर्णिकार महाराज के सामने जो कितने ही पाठ थे वे आज की टीका पढ़नेवाले को नये ही प्रतीत होंगे—ऐसे पाठ हैं ।

२. प्रतियों में शब्द-प्रयोग की विभिन्नता

अर्वाचीन (यानी परवर्ती काल की महाराष्ट्री) प्राकृत भाषा में (मध्यवर्ती व्यंजन) "क-ग-च-ज-त-द-प-य-व" के लोप के नियम का अनुसरण जिस प्रकार से देखने को मिलता है वैसा और उस प्रमाण में प्राचीन काल में नहीं था। उसी प्रकार (मध्यवर्ती महाप्राण व्यंजन) "ख-घ-थ-ध-भ" (को 'ह'कार में बदलने के) वगैरह नियमों (सिद्धहेम. ८-१-१७७ और १८७) को भी इतना स्थान प्राप्त नहीं था। **इस कारण से प्राचीन प्राकृत और अर्वाचीन प्राकृत में**

The readers of the commentaries that are before us today would find the texual readings therein quite different from those that were before the *cūrṇikāras*, i.e. the Prakrit commentators (of the bygone centuries).

2. Disparity in the use of words (phonological) in the manuscripts.

The frequency that we find in the dropping off of medial consonants- k, g, c, j, t, d, p, y, v-in the younger Prakrit and the loss of the element of occlusion (i.e. the change of aspirates into 'h') from "kh, gh, th, dh, bh" (as per Hema. 8.1.177 and 187), these rules were not applicable to that extent in the older Prakrit (i.e. Ardhamāgadhī). **On account of that one**

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

પ્રાકૃત અને અર્વાચીન પ્રાકૃતમાં ઘણીવાર શબ્દ પ્રયોગોની બાબતમાં સમ-વિષમતા જોવામાં આવે છે (પૃષ્ઠ ૫).

આ પાઠભેદો સ્વાભાવિક રીતે જ થઈ ગયા નથી. **પરંતુ પાછળના આચાર્યોએ જાણીબુઝીને પણ આ શબ્દ-પ્રયોગોને સમયે સમયે બદલી નાખ્યા છે;** અથવા પ્રાચીન પ્રાકૃત ભાષાના પ્રયોગો સાથેનો સંપર્ક ઓછો થવાને લીધે જ્યારે મુનિવર્ગ સહેલાઈથી તે તે શબ્દ-પ્રયોગોના મૂળને સમજી શકતા ન હોવાથી શ્રીઅભયદેવાચાર્ય, શ્રી મલયગિરિ આચાર્ય વગેરેને તે તે શબ્દ-પ્રયોગો બદલી નાખવાની આવશ્યકતા જણાઈ અને તેમણે તે તે શબ્દ-પ્રયોગોને

अनेक बार शब्द-प्रयोगों के विषय में सम-विषमता देखने को मिलती है।

ये पाठ-भेद स्वाभाविक रूप से ही नहीं हुए हैं, **परंतु बाद के आचार्यों ने जानबुझकर ही इन शब्द-प्रयोगों को समय समय पर बदल डाला है;** अथवा प्राचीन प्राकृत भाषा के प्रयोगों के साथ का संपर्क कम हो जाने के कारण जब मुनिवर्ग सरलता से उन उन शब्द-प्रयोगों के मूल को नहीं समझ सके तब श्री अभयदेवाचार्य, श्री मलयगिरि आचार्य, इत्यादि को उन उन शब्द-प्रयोगों को बदलने की आवश्यकता प्रतीत हुई और उन्होंने उन उन शब्द-प्रयोगों को बदल भी दिया हैं। **ऐसा करने से ग्रंथ का विषय समझने**

---

finds disparity in the spelling and form of the same words used in the older and younger Prakrits.

This kind of change in the readings of the text (phonological) has not been due to a natural process but **these changes in the spellings of the words (consonantal) have been brought about intentionally by the later pontiffs at different times;** or on account of losing contact with the original forms of the ancient Prakrit when the community of monks was unable to understand the original forms of the language (Amg.) Śrī Abhayadevācārya, Ācārya Śrī Malayagiri, etc. felt necessity to change old forms (into younger forms) and they have transformed the older word-forms. **By doing that it became**

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

બદલી પણ નાખ્યા છે. આમ કરવાથી ગ્રંથનો વિષય સમજવામાં સરળતા થઈ, પરંતુ બીજી બાજુ જૈન આગમોની મૌલિક ભાષામાં ઘણું જ પરિવર્તન થઈ ગયું, જેને લીધે આજે 'જૈન આગમોની મૌલિક ભાષા કેવી હતી' તે શોધવાનું કાર્ય દુષ્કર જ થઈ ગયું. આ પરિવર્તન માત્ર અમુક આગમ પુરતું મર્યાદિત નથી, પરંતુ દરેક દરેક આગમમાં અને એથી આગળ વધીને ભાષ્ય-ચૂર્ણી ગ્રંથોમાં સુદ્ધા આ ભાષા-પરિવર્તન દાખલ થઈ ગયું છે. એટલે જૈન આગમોની મૌલિક ભાષાના શોધકે જૈન આગમ-ભાષ્ય આદિની જુદા જુદા કુલની પ્રતિઓ એકત્ર કરીને અતિ ધીરજથી નિર્ણય કરવાની જરૂરત છે.......................................(જુદા જુદા ભંડારોની

में सरलता हो गई, परंतु दूसरी तरफ जैन आगमों की मूल भाषा में बड़ा ही परिवर्तन आ गया, जिससे "जैन आगमों की मूल भाषा कैसी थी" उसे खोज निकालने का कार्य दुष्कर हो गया। यह परिवर्तन मात्र अमुक आगम तक ही मर्यादित नहीं है परंतु हरेक हरेक आगम में और उससे भी आगे बढ़कर भाष्य चूर्णी ग्रंथों में भी यह भाषा-परिवर्तन प्रवेश कर गया है। अतः जैन आगमों की मौलिक भाषा के संशोधक को जैन आगम, भाष्य आदि की अलग अलग कुल की प्रतियां इकट्ठी करके अति धीरज के साथ निर्णय करने की जरुरत है।...

---

convenient to understand the subject-matter easily, but on the other hand the original language of the Āgamas underwent a major change and due to that it became very difficult to find out "what was the original form of the language". This transformation is not limited to any one Āgama text but it has intruded each and every canonical text including the commentarial works (bhāṣya-cūrṇi). Therefore, it requires great patience on the part of a researcher to investigate the original features of the language by collecting the variant readings from the manuscripts of different groups of the above mentioned works. (On having gone through various manuscripts of different repositories (bhaṇḍāras) Puṇyavijayaji comes to the

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

જુદી જુદી હસ્તપ્રતો જોઈને મુનિ શ્રી પુણ્યવિજયજી જણાવે છે કે) આ બધા અવલોકનને પરિણામે ય **જૈન આગમોની મૌલિક ભાષાનું વાસ્તવિક દિગ્દર્શન કરાવવું અશક્ય પ્રાય છે, તેમ છતાં આ રીતે એ ભાષાના નજીકમાં પહોંચી શકવાની જરૂર શક્યતા છે** (પૃષ્ઠ ૬).

.... વિવિધ કારણોને આધીન થઈને **જૈન આગમોની મૌલિક ભાષા પણ ખીચડું જ બની ગઈ છે.** એટલે જૈન આગમોની મૌલિક ભાષાનું અન્વેષણ કરનારે ઘણી જ ધીરજ રાખવી જરૂરી છે (પૃષ્ઠ ૭).

૩. નિર્યુક્તિ અને ચૂર્ણિની ભાષા (પૃષ્ઠ ૧૪-૧૫)

અહીં પ્રસંગોપાત જૈન મુનિવરોની સેવામાં સવિનય પ્રાર્થના છે કે—

(अलग अलग भंडारों की अलग अलग हस्तप्रतों का निरीक्षण करके मुनि श्री पुण्यविजयजी दर्शाते हैं कि) इस सारे अवलोकन के बाद भी **जैन आगमों की मूल भाषा का वास्तविक दिग्दर्शन करवाना प्रायः अशक्य है । ऐसा होते हुए भी उस भाषा के नज़दीक पहुंचने की संभावना अवश्य है ।**

...... विविध कारणों के आधीन होकर **जैन आगमों की मूल भाषा खिचड़ी ही बन गई है ।** अतः जैन आगमों की मूल भाषा का अन्वेषण करने वाले को बहुत ही धैर्य रखने की आवश्यकता बनी रहती है ।

३. निर्युक्ति और चूर्णि की भाषा

प्रसंगोपात् यहाँ पर जैन मुनिवरों की सेवा में सविनय प्रार्थना है कि—

---

conclusion that) **It has become impossible to demonstrate the real form of the original language of the Jain canonical literature but even then it is possible to find out tentatively the actual form of the language.** Under the influence of various factors the **language of the Jaina Āgamas has become hotchpotch (of variou dialects)** and consequently a researcher who wants to investigate the original features of the language should possess great patience.

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

જૈન આગમો અને તે ઉપરના નિર્યુક્તિ-ભાષ્ય-ચૂર્ણી આદિ વ્યાખ્યા ગ્રંથોનું વાસ્તવિક અધ્યયન અને સંશોધન કરવા ઇચ્છનારે **પ્રાકૃત આદિ ભાષાના ગંભીર જ્ઞાન માટે શ્રમ લેવો જોઈએ. આ જ્ઞાન માટે માત્ર ભગવાન શ્રી હેમચંદ્રાચાર્યકૃત 'પ્રાકૃત વ્યાકરણ' બસ નથી. પ્રાકૃત ભાષાના અગાધ સ્વરૂપને જોતાં શ્રી હેમચંદ્રકૃત પ્રાકૃત વ્યાકરણ એ તો પ્રાકૃત ભાષાની બાલપોથી જ બની જાય છે (પૃષ્ઠ ૧૪).**

જૈન આગમોના અધ્યયન અને સંશોધન માટે જેટલી ભાષા-જ્ઞાનની

जैन आगम और उस पर के निर्युक्ति-भाष्य-चूर्णि आदि व्याख्या ग्रंथों का वास्तविक अध्ययन और संशोधन करने के इच्छुक व्यक्ति को **प्राकृत आदि भाषा के गंभीर ज्ञान के लिए परिश्रम करना चाहिए । इस प्रकार के ज्ञान के लिए सिर्फ भगवान् श्री हेमचन्द्राचार्यकृत 'प्राकृत व्याकरण' ही पर्याप्त नहीं है । प्राकृत भाषा के अगाध स्वरूप को देखते हुए श्री हेमचन्द्राचार्यकृत 'प्राकृत व्याकरण' तो प्राकृत भाषा की एक बालपोथी के समान है ।**

जैन आगमों के अध्ययन और संशोधन के लिए जितने भाषा-ज्ञान की

---

3. Language of the *Niryukti*s and *Cūrṇi*s

In this context a request is hereby being made to the reverend Jain monks that one who wants to have precise knowledge of Prakrit language of the Jaina *Āgamas* and *niryukti-bhāṣyas* as well as *cūrṇis* **should take pains to do hard labour in this field. For acquring this type of knowledge the treatise on Prakrit grammar by Hemacandrācārya is not sufficient.** On taking into account the intricate distinct features of the Prakrit language the grammar on Prakrit by Hemacandra is like a school primer. As much minute knowledge of linguistics is essential for the study and research of the Jain canonical literature that much acquaintance of the science of writing (orthography)

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

આવશ્યકતા છે તેટલી જ જરૂરીયાત **ઉત્તરોત્તર લેખકદોષાદિને કારણે અશુદ્ધિના ભંડારરૂપ બની ગએલ જૈન આગમો અને તે ઉપરના નિર્યુક્તિ-ભાષ્ય આદિ વ્યાખ્યા-ગ્રંથોના અધ્યયન આદિ માટે પ્રાચીન ગ્રંથસ્થ લિપિ અને તેમાંથી લેખકોએ ઉપજાવી કાઢેલા ભ્રામક પાઠો કે વિવિધ પ્રકારના લિપિદોષોના જ્ઞાનની પણ છે.**

આ લિપિની મૌલિકતા અને લેખકોએ કરેલી વિકૃતિઓનું ભાન જેટલું વિશેષ એટલી જ ગ્રંથ-સંશોધનમાં સરળતા રહે છે (પૃષ્ઠ ૧૫).

आवश्यकता है उतना ही ज्ञान इस तथ्य का भी होना चाहिए कि **उत्तरोत्तर काल में ([illegible]हियों के) लिपिकारों के दोषादि के कारण अशुद्धियों के भंडाररूप जैन आगम और उस पर लिखी गयी निर्युक्ति-भाष्य आदि व्याख्या-ग्रंथों के अध्ययन के लिए प्राचीन (ग्रंथों की) लिपिशास्त्र का ज्ञान और उसमें से लिपिकारों के द्वारा कल्पित भ्रामक पाठों** के सम्बंध में विविध प्रकार के लिपि-दोषों के ज्ञान की भी उतनी ही आवश्यकता है । इस लिपि का मौलिक स्वरूप और लिपिकारों के द्वारा की गयी विकृतियों की जितनी **विशेष समझ** उतनी ही ग्रंथ के पाठों के संशोधन में सरलता रहती है ।

---

is also necessary. Due to scribal errors corrupt textual readings were presumed by the copyists and **consequently a number of mistakes were committed by the later copyists.** As a result of that the language of the Jaina *Āgamas*, *niryuktis* as well as *bhāṣyas* (commentarial works) has become a mess of mistakes of corruptions. The extent to which we are conversant with the original character of the script and its deformation by the scribes that much simpler it would be in editing correctly the text of these ancient works.

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

ग्रंथ-संकेत

अचू.	दशवैकालिकसूत्र पर अगस्त्यसिंह की चूर्णि
आगमो.	आगमोदय समिति, महेसाणा का संस्करण
आचा.	आचाराङ्गसूत्र (आयारंगसुत्तं, मजैवि. १९७७; आयारो (अंगसुत्ताणि-१), जैविभा. वि. सं. २०३१, ई.स. १९७४ आचाराङ्गसूत्र, वा. शुब्रिंग, १९१०; आगमो. १९१६)
आचाचू.	आचाराङ्गचूर्णि, रिषभदेव केशरीमल, रतलाम, १९४१
आचावृ.	आचाराङ्ग पर शीलाङ्काचार्य की वृत्ति, आगमो. १९१६
आवचू.	आवश्यकचूर्णि, रिषभदेव केशरीमल, रतलाम, १९२८
इसिभा.	देखो ऋषिभा.
उत्तरा.	उत्तराध्ययनसूत्र, देखो दशवै.
ऋषिभा.	ऋषिभाषितानि (इसिभासियाइं), वा. शुब्रिंग, ला. द. भा. संस्कृति विद्यामंदिर, अहमदाबाद, १९७४.
चू.	चूर्णि
चूपा.	चूर्णिपाठ
जैविभा.	जैन विश्व भारती, लाडनूं का संस्करण
दशवै.	दशवैकालिकसूत्र (दसवेयालियसुत्तं, उत्तरज्झयणाइं, आवस्सयसुत्तं), मजैवि. १९७७
नीशीथचू.	नीशीथसूत्रचूर्णि, सन्मति ज्ञानपीठ, आगरा, १९५७-६०
पउमचरियं	प्राकृत टेक्स्ट सोसायटी, वाराणसी, १९६२
पञ्चावृ.	पञ्चाशकवृत्ति
पा.	पाठ
पाटि.	पादटिप्पण
पाठा.	पाठान्तर

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

पिशल.	कम्पेरेटिव ग्रामर ओफ द प्राकृत लैंग्वेजेज, आर. पिशल (सुभद्र झा), मोतीलाल बनारसीदास, दिल्ली, १९६५
पृ.	पृष्ठ
प्रति	आचाराङ्ग, सूत्रकृताङ्ग, उत्तराध्ययन और दशवैकालिक (मजैवि.) में उपयोग में ली गयी प्रतियां
प्रति*	हमारे द्वारा उपयोग में ली गयी प्रतियों का संकेत
मजैवि.	महावीर जैन विद्यालय, बम्बई का संस्करण
वसुदेवहिंडि	वसुदेवहिण्डिप्रथमखण्डम्, आत्मानन्द सभा, भावनगर, १९३०
वृ.	वृत्ति
वृद्ध.	दशवैकालिकसूत्र पर वृद्धविवरणम्
शी.	शीलाङ्काचार्यवृत्ति (जिस प्रति के पहले शी. जुड़ा है उस प्रति में शीलाङ्काचार्य-वृत्ति से सम्मत पाठ)
शु.	वाल्थर शुब्रिंग महोदय द्वारा सम्पादित आचाराङ्गसूत्र, लीपजिग, १९१०
सं	जिस प्रति के आगे सं. जुड़ा है वहां पर उस प्रति में संशोधित पाठ
समवा.	समवायाङ्गसूत्र, आगमो. १९१८
सूत्रकृ.	सूत्रकृताङ्गसूत्रम्, मजैवि. १९७८
स्था.	स्थानाङ्गसूत्र, आगमो. १९१८-२०

हस्तप्रत-संदर्भ-संकेत

इस ग्रंथ के संपादन में जिस सामग्री का उपयोग किया गया है वह इस प्रकार है -

श्री महावीर जैन विद्यालय, बम्बई द्वारा प्रकाशित आचाराङ्गसूत्र (इ. स. १९७७) के सम्पादन में जिन प्रतियों का उपयोग किया गया है और उनमें से जो पाठान्तर दिये गये हैं उनका इस संस्करण में उल्लेख किया गया है । उस ग्रंथ के अनुसार प्रतियों का संक्षिप्त परिचय इस प्रकार है—

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

ताड़पत्र की प्रतियां

सं.	संघवी पाडा ज्ञान भंडार, पाटण, वि. सं. १३वीं शती
शां.	श्री शांतिनाथ ताड़पत्रीय जैन ज्ञान भंडार, खंभात, वि. सं. १३०३
खं.	श्री शांतिनाथ ताड़पत्रीय जैन ज्ञान भंडार, खंभात, वि. सं. १३२७
खे.	खेतरवसी पाडा भंडार, पाटण
संदी.	संघवी पाडा ज्ञान भंडार, पाटण, वि.सं. १४६७
जे.	श्री जिनभद्रसूरि जैन ज्ञान भंडार, जैसलमेर, वि. सं. १४८५

कागज़ की प्रतियां

जै.	जैन साहित्य विकास मंडल, बम्बई
हे १, २, ३,	श्री हेमचन्द्राचार्य जैन ज्ञान भंडार, पाटण
इ.	जैन श्वेताम्बर संघ, इडर, वि. सं. १५५२
ला, ला १	लालभाई दलपतभाई भारतीय संस्कृति विद्यामंदिर, अहमदाबाद

आचाराङ्ग की जो जो प्रतियां हमें स्वयं को देखने को मिल सकीं उनका हमने उपयोग किया हैं और उनका परिचय इस प्रकार है—

खं १	देखिए ऊपर 'शां', वि. सं. १३०३
खं ३	देखिए ऊपर 'खं', वि. सं. १३२७
जे.	देखिए ऊपर 'जे', वि. सं. १४८५
पू.	भांडारकर ओरियन्टल रीसर्च इंस्टीट्यूट, पूना, नं ७८, वि. सं. १३४८ (शुब्रिंग महोदय द्वारा आचाराङ्ग के सम्पादन में उपयोग में ली गयी प्रति)
ला.	श्री मुक्तिविजय जैन लाइब्रेरी (की भेंट में दी गयी ला. द. भा. सं. विद्यामंदिर) की कागज़ की प्रति, नं. १८७७२ पन्द्रहवीं शती

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

अनुक्रमणिका

	पृष्ठ
Dedication	iii
Publisher's Note	v
सम्पादकीय	viii
इस संस्करण के विषय में विविध विद्वान	xi
जैन आगमों की अर्धमागधी भाषा में आगत विकृतियों के सम्बन्ध में मुनिश्री पुण्यविजयजी का मत	xvii
ग्रंथ-संकेत	xxvi
हस्तप्रत संदर्भ संकेत	xxvii
विभाग-१	१
(अ) Introduction	
(ब) प्रस्तावना	
विभाग-२	१३
आचाराङ्ग के शब्द-पाठों की विविध संस्करणों, हस्तप्रतों, अन्य आगम-ग्रंथों तथा आगमेतर प्राचीन प्राकृत ग्रंथों के शब्द-पाठों के साथ तुलना	
विभाग-३	७३
आचाराङ्ग के प्रथम श्रुत-स्कंध के प्रथम अध्ययन का भाषिक दृष्टि से पुनः सम्पादन	
विभाग-४	१५७
शब्दों में ध्वनिगत परिवर्तन	
विभाग-५	१६७
प्रथम अध्ययन के सभी शब्दरूपों की अनुक्रमणिका	
विभाग-६	१९७
विभिन्न संस्करणों के पाठों की तुलना	
परिशिष्ट Appendix	

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

PUBLICATIONS OF 'PRAKRIT JAIN VIDYA VIKAS FUND' AHMEDABAD

१. भारतीय भाषाओं के विकास और साहित्य की समृद्धि में श्रमणों का महत्वपूर्ण योगदान : के. आर. चन्द्र, १९७९, रू. 10-00

२. प्राकृत-हिन्दी कोश : के. आर. चन्द्र (पाइयसद्दमहण्णवो की किंचित् परिवर्तित आवृत्ति), १९८७, रू. 120-00

३. English Translation of Kouhala's Līlāvaī-Kahā - Prof. S. T. Nimkar, 1988, रू. 30-00

४. नम्मयासुंदरीकहा (श्री महेन्द्रसूरिकृत, हिन्दी अनुवाद सहित), के. आर. चन्द्र, १९८९, रू. 40-00

५. आरामशोभा रासमाला (गुजराती) : प्रो. जयंत कोठारी, १९८९, रू. 90-00

६. जैनागम स्वाध्याय : पं. दलसुखभाई मालवणिया (गुजराती), १९९१ रू. 100-00

७. जैनधर्म स्वाध्याय: पं. दलसुखभाई मालवणिया (गुजराती), १९९१, रू. 40-00

८. जैन आगम साहित्य : संपा. के. आर. चन्द्र, १९९२, रू. 100-00

९. प्राचीन अर्धमागधी की खोज में : के. आर. चन्द्र, १९९२, रू. 32-00

१०. Restoration of the Original Language of Ardhamāgadhī Texts : K. R. Chandra, 1994, रू. 60-00

११ परम्परागत प्राकृत व्याकरण की समीक्षा और अर्धमागधी : के. आर. चन्द्र, १९९५, रू. 50-00

१२. Jain Philosophy and Religion : K.R. Chandra, 1996, रू. 12-00

१३. आचाराङ्ग : प्रथम श्रुत-स्कंध : प्रथम अध्ययन (हस्तप्रतोंं में उपलब्ध प्राचीन पाठों (शब्द-रूपों) के आधार पर पुनः संम्पादित, १९९७, रू. 150-00

१४. इसिभासियाइं (ऋषिभाषितानि), अशेष शब्द-रूप कोश (प्रेस में)

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

विभाग-१

(अ) Introduction

(ब) प्रस्तावना

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

विभाग-1 (अ) Introduction*

The **Ācārāṅga** is the oldest **Ardhamāgadhī** Text of the **Śvetāmbara** Canonical literature but its language has undergone constant changes at the hands of readers and copyists from generation to generation due to influence of the changing form of the popular Prakrit language, and also on account of the influences of the grammatical treatises of post-dated grammarians. There is no uniformity of language (see in Section 2 Comparative Tables of Variant Readings, specially in the spellings of the words, i. e. in the phonology) in any published edition or in the availble Mss. (whether palm-leaf or paper) of the text. One comes across Prakrit forms of three different stages, sometimes in the same sentence, verse, paragraph or chapter, occasionally archaic and younger forms go together. Additionally there are soemtimes younger forms in older texts and older forms in younger texts of **Ardhamāgadhī** as well as Mss.

---

* Readers are requested to go through the following three works of the author published by **Prakrit Jain Vidya Vikas Fund, Ahmedabad-15**

1. प्राचीन अर्धमागधी की खोज में, 1991-1992
2. **Restoration of the Original Language of Ardhamāgadhī Texts, 1994**
3. परम्परागत प्राकृत व्याकरण की समीक्षा और अर्धमागधी, 1995

Their study will be helpful in understanding properly the method followed in preparing this edition and reconstituting the oldest form of the language of the text as far as possible.

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

In preparing this edition the **Ācārāṅga** published by the **Mahāvīra Jaina Vidyālaya,** Bombay (MJV) has been made the base of our text because in it there has been made use of a number of manuscripts in comparison with other editions. Moreover it preserves on a large scale medial consonants which is lacking in other editions. Inspite of these merits still at a number of places there are readings which deserve replacement by older forms which are available in the manuscripts of this text itself or in other older **Ardhamāgadhī** texts. For this purpose, i.e. for the restoration of archaic forms, a word to word index of forms from the five older **Ardhamāgadhī Āgama** texts, viz. **Ācārāṅga, Sūtrakṛtāṅga, Ṛṣibhāṣitāni, Uttarādhyayana** and **Daśavaikālika** was prepared. With the help of this data younger forms **(Mahārāṣṭrī)** are replaced by older **(Ardhamāgadhī)** ones.

In support of this kind of replacement we have quoted particular **Ardhamāgadhī** texts or quotations in them from other texts where the concerned forms are traced. Once an older form is quoted again it is generally not mentioned for support at other places of its recurrence. In this way original medial consonants are restored in a number of cases.

Further we have not changed the initial and medial dental nasal '*n*' to cerebral nasal '*ṇ*'. Conjuncts like '*jña*', '*nya*' and '*nna*' are represented by '*nna*' in place of cerebral '*ṇṇa*' which is specially a feature of **Mahārāṣṭrī Prakrit.** Original nasal in a conjunct with the consonant

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

of the same class is preferred to the **anuswāra.**

Nominal case suffixes, mas. nom. sg. *-e*, neu. nom. accu. plu. *-ni*, inst. sg. *-ena* and *-tā*, abl. sg. *-to*, inst. plu. *-hi*, loc. plu. *-su*, etc. are preferred to *-o*, *-iṁ*, *enaṁ* and *-ā*, *-o*, and *-hiṁ*, *-suṁ* respectively, i.e. whatever is linguistically older that is preferred to younger one.[1]

Verses are preserved according to the edition of the **Ācārāṅgasūtra** by Walther Schubring.[2]

Whichever reading of the MJV. edition of the **Ācārāṅga** is replaced in this text is given in the foot-note.

To sum up it has been tried as far as possible to restore that reading of the text which is linguistically an archaic form and is properly supported by its occurence in the manuscripts of the text itself or other older published Amg. Agamic texts.

However, it is to be sincerely admitted that this edition is also not the last and final one. It is possible that new material might come into light and in that case revision of the text-constitution would be the desideratum.

K. R. Chandra

---

1. See the concerned topics in the text No. 3 quoted *supra* in the foot-note on the page No. 1.
2. Leipzig, 1910. In Kommission bei F.A. Brockhaus.

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

विभाग-1 (ब) प्रस्तावना

एक अनुरोध

[आंचारांग के इस तरह के नये तरीके से संपादन को योग्य रूप से समझने के लिए प्राकृत भाषा के विद्वानों और पाठकों से सर्वप्रथम एक नम्र अनुरोध है कि अर्धमागधी भाषा के प्राचीन एवं मूल स्वरूप को जानना आवश्यक है और इस सम्पादित संस्करण के पाठों को पचाने के लिए पूर्व भूमिका के रूप में मेरे तीनों ग्रन्थों (प्रकाशक : प्राकृत जैन विद्या विकास फंड, अहमदाबाद-380015)—

1. प्राचीन अर्धमागधी की खोज में, 1991-92
2. Restoration of the Original Language of Ardhamāgadhī Texts, 1994 और
3. परंपरागत प्राकृत व्याकरण की समीक्षा और अर्धमागधी, 1995

को पढ़ने का कष्ट करें जिससे स्वीकृत पाठों को समझने में किसी प्रकार की भ्रान्ति न हो।]

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

प्रस्तावना

जैन अर्धमागधी आगम साहित्य के आचारांग, सूत्रकृतांग, ऋषिभाषितानि, उत्तराध्ययन के कतिपय अध्ययन और दशवैकालिकसूत्र प्राचीनतम रचनाएँ मानी गयी हैं। उनमें भी विषय, शैली और भाषिक दृष्टि से आचारांग का प्रथम श्रुतस्कंध सबसे प्राचीन रचना है। प्रो. याकोबी के अनुसार इन प्राचीन रचनाओं का समय ई.स. पूर्व तीसरी सदी है। इस मन्तव्य के अनुसार प्राचीन आगम ग्रंथों की भाषा भी प्राचीन होनी चाहिए, परंतु इन ग्रंथों के उपलब्ध संस्करणों और प्रतियों में सर्वत्र ऐसा नहीं पाया जाता है ।

भ. महावीर और भ. बुद्ध एक ही काल में विद्यमान थे। परंतु पालि भाषा और अद्यावधि प्रकाशित जैन आगमों की अर्धमागधी में बहुत अन्तर है। सम्राट् अशोक के पूर्वी भारत के शिलालेखों की भाषा के साथ भी अर्धमागधी पूर्णतः समानता नहीं रखती है, हाँ कितने ही प्रयोग ऐसे हैं जो उससे साम्य रखते हैं। अर्धमागधी आगमों की भाषा में इतना परिवर्तन क्यों आ गया। कारण स्पष्ट है — मौखिक परंपरा, बदलती हुई जन-भाषा और परवर्ती प्राकृत व्याकरणकारों का पंडितों और लेहियों पर प्रभाव पड़ा और स्थलान्तर से भी भाषा के रूप बदलते गये। किसी प्रत में प्राचीन रूप मिलता है तो किसी प्रत में परवर्ती रूप मिलता है, कभी ताड़पत्र की प्रत में परवर्ती रूप तो कभी कागज़ की प्रत में प्राचीन रूप मिलता है, जिससे स्पष्ट है कि प्रतों की पीढी दर पीढी नकल करते समय भाषा में परिवर्तन आते गये।

'आगमोदय समिति' के आचारांग के संस्करण की जब 'महावीर जैन विद्यालय' के संस्करण के साथ तुलना करते हैं तो स्पष्ट होता है कि अनेक जगह मध्यवर्ती अल्पप्राणों और महाप्राणों को म.जै.वि. के संस्करण में पुनः स्थापित किया गया हैं। मुनि श्री जम्बूविजयजी ने आचारांग की भूमिका में इस बात को स्पष्ट किया ही है। मुनि श्री पुण्यविजयजी का भी ऐसा ही मन्तव्य रहा है कि आगमों की भाषा खिचड़ी बन गयी है। उनके अनुसार प्राचीन काल में मध्यवर्ती अल्पप्राण का लोप और मध्यवर्ती महाप्राण का 'ह' इतने प्रमाण में नहीं था। मुनि श्री जम्बूविजयजी के म. जै. वि. के आचारांग के संस्करण में कुछ हद तक भाषा की प्राचीनता स्थापित हो सकी है। अब उसी प्रक्रिया को भाषाविज्ञान और कालक्रम

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

की दृष्टि से और आगे बढ़ाने का यह प्रयत्न है। अर्थात् भ. महावीर की जो मूल वाणी थी उस तक पहुंचने का यह एक और प्रयत्न है। इससे यह भी नहीं मान लेना चाहिए कि यह नया संस्करण पूर्णतः अपरिवर्तनीय है। नयी नयी सामग्री और प्रमाण मिलने पर जैसे जैसे नये नये संस्करण तैयार किये जाते हैं उसी परंपरा से और भी नया संस्करण भविष्य में बन सकता है, इस तथ्य को भूलना नहीं चाहिए।

इस संस्करण को तैयार करनें में आचारांग के म.जै.वि. के संस्करण को मूल आदर्श प्रत के रूपमें रखा गया है। इसका कारण यह है कि यही एक ऐसा संस्करण है जिसमें (मुनि श्री पुण्यविजयजी ने अनेक ताड़पत्रों और कागज़ की प्रतियों से जो पाठान्तर लिये थे उन्हीं के अनुसार) अनेक प्रतियों से पाठान्तर दिये गये हैं जबकि अन्य संस्करणों में इतनी प्रतियों का उपयोग नहीं हुआ है। आचारांग के इस संस्करण को ध्यान से पढ़ने पर ऐसी प्रतीति हुई कि अभी भी पाठों के संशोधन की पर्याप्त आवश्यकता है क्योंकि इस संस्करण में अभी भी भाषा के दो या तीन स्तर दिखते हैं, सर्वत्र भाषिक प्राचीनता नहीं है। उदाहरणार्थ :-
लोक, लोग लोय; अत्ता, आता, आया; णरग, णिरय, निरय; पाय, पाद; कोध, कोह; मेधावी, मेहावी; अन्नतर, अण्णतर, अण्णयर; आगतो, आगओ; भगवता, भगवया; अन्नतरीतो, अन्नतरीओ; दिसातो, दिसाओ; कप्पति, कप्पइ, इत्यादि।

कभी कभी समस्या उत्पन्न हो जाती है कि हस्तप्रतों या प्रकाशित संस्करणों में से कौनसा पाठ (विभिन्न पाठान्तरों के कारण) उपयुक्त माना जाय।

आचारांग के उपोद्घात के वाक्य के पाठों को ही लीजिए। सूत्रकृतांग में (2. 2. 694) पाठ इस प्रकार है – 'सुतं मे आउसंतेणं भगवता एवमक्खातं' जबकि आचारांगसूत्र जो सूत्रकृतांग से प्राचीन माना जाता है उसमें पाठ इस प्रकार मिलता है – 'सुयं मे आउसं तेणं भगवया एवमक्खायं'। स्पष्ट है कि कौनसा पाठ भाषिक दृष्टि से प्राचीन है और कौन सा परवर्ती काल का बदला हुआ पाठ है। हालाँ कि हमारे ख्याल से 'आउसंते णं' पाठ होना चाहिए।[3]

---

3. इस संबंध में विस्तृत चर्चा के लिए देखिए, 'श्रमण', जुलाई – सितम्बर, 1995 (पा.वि. शोध संस्थान, वाराणसी, 5) में प्रकाशित मेरा लेख—अर्धमागधी भाषा में सम्बोधन का एक विस्मृत शब्द-प्रयोग 'आउसन्ते'।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

'औपपादिक' के लिए पांच पाठान्तर 'उववाइए, उववातिए, उववादिए, ओववातिए और ओववादिए' मिलते हैं। किसे मूल प्राचीन पाठ मानना और किसे परवर्ती काल का पाठ मानना ?

'यथा' के लिए 'जधा, अधा, अहा और जहा' ये चार पाठ मिलते हैं। 'अधा' पाठ प्राचीन एवं इसमें पूर्वी भारत की भाषिक विशेषता है तो फिर क्यों नहीं 'अधा' पाठ ही स्वीकृत किया जाय जो भ. महावीर के समय और स्थलके अनुरूप होगा।

'क्षेत्रज्ञ' शब्द के लिए आचारांग में 'खेयण्ण' जैसा पाठ मिलता है जबकि सूत्रकृतांग में 'खेतन्न' जैसा प्राचीन पाठ मिलता है। वैसे इस शब्द के लगभग 10-11 प्राकृत रूपान्तर आचारांग और सूत्रकृतांग की हस्तप्रतों में मिलते हैं—खेयण्ण खेअण्ण, खेदण्ण, खित्तण्ण, खेतण्ण, खेत्तण्ण, खेदन्न, खेत्तन्न, खेतन्न, और खेयन्न, खेअन्न। ये सभी रूप क्या एक ही समय में किसी एक ही जगह पर प्रचलित होंगे, जरा विचार कीजिए ?

सप्तमी एक वचन के तीन विभक्ति प्रत्यय मिलते हैं,—स्सि,-अंसि और -म्मि। इन विभक्तियों वाले 'लोक' शब्द के सात रूप मिलते हैं-
लोगस्सि, लोकंसि, लोगंसि, लोयंसि, लोकम्मि, लोगंमि और लोयंमि। इनमें से प्रथम रूप विभक्ति प्रत्यय की दृष्टि से सबसे प्राचीन है तो क्या इसे स्वीकार किया जाय या नहीं ?[4]

दन्त्य नकार

म.जै.वि. के जो आगम ग्रंथ मुनि श्री पुण्यविजयजी ने सम्पादित किये हैं उनमें (उतराध्ययन, दशवैकालिक, इसिभासियाई, आदि में) प्रारंभिक दन्त्य नकार बहुधा मिलता है जबकि मुनिश्री जम्बूविजयजी के आचारांग के संस्करण में दन्त्य नकार के स्थान पर बहुधा मूर्धन्य णकार मिलता है। यह हेमचन्द्राचार्य के प्राकृत व्याकरण के अनुरूप भी नहीं है। उसमें उदाहरण रूप दिये गये शब्दों में 9 में से 8 में प्रारंभिक नकार मिलता है। उन्होंने स्पष्ट कहा है कि मध्यवर्ती नकार भी आगम ग्रंथों में कहीं कहीं पर मिलता है, परंतु म.जै.वि. के आचारांग में इसकी

4. संबंधित प्रसंगों की चर्चा ऊपर बतलायी गयी तीनों पुस्तकों में की गयी है।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

सर्वथा कमी है। यह भी हेमचन्द्राचार्य के व्याकरण के प्रतिकूल ही है।

ला.द.भा.सं. विद्या मंदिर, अहमदाबाद के अनुभवी एवं विद्वान् लिपिशास्त्री श्री लक्ष्मणभाई भोजक के अनुसार प्राचीन काल की लिपि में दन्त्य नकार '⊥' इस प्रकार लिखा जाता था और मूर्धन्य णकार 'I' इस प्रकार लिखा जाता था। परन्तु लगभग चौथी शताब्दी अर्थात् गुप्त काल से अक्षरों के ऊपर शिरोरेखा लगायी जाने लगी तब नकार पर भी शिरोरेखा लगायी जाने लगी और तब नकार '⊥' पर शिरोरेखा 'I' आ जाने से नकार और णकार एक समान हो गये। अतः यह भी एक प्रबल कारण है कि तबसे भ्रान्ति के कारण प्राकृत में नकार के बदले में णकार का प्रचलन बढ़ता गया हो। प्राचीन शिलालेखों के प्रामाण्य के अनुसार पूर्वी भारत की प्राचीन प्राकृत भाषाओं में दन्त्य नकार की जगह पर मूर्धन्य णकार का प्रयोग उपयुक्त नहीं लगता है, अतः इस संस्करण में मध्यवर्ती नकार का प्रयोग यथावत् रखा गया है जो प्राचीनता का द्योतक है। सर्वत्र णकार में बदला जाना महाराष्ट्री प्राकृत का लक्षण है (न कि अर्धमागधी प्राकृत का) जो दक्षिण एवं पश्चिम भारत की विशिष्टता रही है।[5]

ताड़पत्र की प्रतियों में 'अधा, तधा, इध' जैसे प्राचीन पाठ मिलते हुए भी उनकी जगह पर मुनि श्री जम्बूविजयी ने 'जहा, तहा, इह' जैसे पाठ स्वीकार किये हैं (देखिए -- आचारांग (मजैवि.) की भूमिका, पृ. 44) जो अर्धमागधी भाषा के पाठ नहीं हैं परंतु महाराष्ट्री प्राकृत के पाठ हैं।

अर्धमागधी प्राकृत भाषा का मूल स्वरूप परिस्थापित करने के इस प्रयत्न में प्रस्तुत संपादन में जो सिद्धान्त अपनाये गये हैं वे इस प्रकार हैं[6]—

1. प्रारंभिक मूल दन्त्य नकार को मूर्धन्य णकार में नहीं बदला है। शुब्रिंग महोदय के संस्करण में भी मूल नकार यथावत् रखा गया है।

---

5. आगमों की हस्तप्रतों और चूर्णी जैसे ग्रंथों में मध्यवर्ती नकार के प्रयोग मिलते हैं। देखिए मेरी पुस्तक – 'परंपरागत प्राकृत व्याकरण की समीक्षा और अर्धमागधी', 1995 में नकार विषयक अध्याय नं. 7 और 8.

6. इसके लिए प्रस्तावना में प्रारंभ में बतलाये गये मेरे तीनों ग्रंथों को पढ़ना अनिवार्य है।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

2. ज्ञ = न्न रखा गया है, जैसे कि शुब्रिंग महोदय की पद्धति रही है। प्रारंभ में इसके लिए नकार रखा गया है।
3. न्य, न्न = न्न अपनाया गया है।
4. सजातीय व्यंजनों के साथ संयुक्त रूप में प्रयुक्त अनुनासिक व्यंजनों को यथावत् रखा गया है जो एक प्राचीन पद्धति है।
5. अन्य प्राचीन आगम ग्रंथो में जो कोई शब्द अपने मूल रूप में (यानि ध्वनि विकार रहित) मध्यवर्ती अल्पप्राण और महाप्राण सहित कहीं पर भी उपलब्ध हो रहा हो तो उस रूप को या उसके घोष रूप को प्राथमिकता दी गयी है। मध्यवर्ती अल्पप्राण व्यंजन के लोप और मध्यवर्ती महाप्राण के स्थान पर हकार से सामान्यतः दूर ही रहा गया है।
6. 'यथा' और 'तथा' के लिए 'अधा', और 'तधा' को प्राथमिकता दी गयी है।
7. कहीं—कहीं पर पालि भाषा के अनुरूप प्राचीन रूप मिलता हो तो उसे तिलांजलि नहीं दी गयी है।
8. पु. प्र. ए. व. के विभक्ति प्रत्यय -ए; नपु. प्र. द्वि. ब. व. के -नि, तृ. ए. व. के -एन और -ता, पं. ए. व. के -तो, तृ. ब. व. के -हि और स. ब. व. के -सु को (क्रमशः -ओ, - इं,-एणं एवं -आ, -ओ, -हिं और -सुं के बदले में) प्राथमिकता दी गयी है।
9. पद्यांश शुब्रिंग महोदय के आचारांग के संस्करण के अनुसार रखे गये हैं।
10. म.जै.वि. के आचारांग में स्वीकृत जिस पाठ को इस संस्करण में बदला गया है उसके समर्थन में नीचे पाद-टिप्पण में आचारांग में दिये गये पाठ या उसमें ही अन्य स्थल पर या अन्य आगम ग्रंथों में आनेवाले पाठ या उनके पाद-टिप्पण में प्राचीन ग्रंथों से उद्धृत पाठ दिये गये हैं। नीचे पाद-टिप्पण में म.जै.वि. का पाठ भी दिया गया है।

इसके अतिरिक्त आचारांग के अन्य संस्कारणों के ऐसे पाठ भी नीचे पाद-टिप्पण में दिये गये हैं [जैसे - म.जै.वि. (महावीर जैन विद्यालय), शु. (शुब्रिंग), आगमो. (आगमोदय समिति) और जै.वि.भा. (जैन विश्व भारती)]

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

जो हमारे द्वारा बदले गये पाठ का पूर्ण रूप से या आंशिक रूप में समर्थन करते हो।

11. म.जै.वि. के आचारांग का जो शब्द (या शब्दरूप) एक बार बदलकर उसके स्थान पर जो प्राचीन शब्द या रूप स्वीकार किया गया है उसके पुनः आगमन पर उसके समर्थन में फिर से प्राचीन पाठ पाद-टिप्पणों में नहीं दिये गये हैं।
12. अपवाद के रूप में जिस शब्द का प्राचीन रूप कहीं पर भी किसी भी प्राचीन आगम ग्रंथ में या चूर्णी में या अन्य प्राचीन आनुषंगिक ग्रंथ में नहीं मिलता हो तो उसे नहीं बदला गया है, जैसे- मोयन (मोचन)।
13. हमारे द्वारा स्वीकृत पाठ का अन्यत्र कहीं पर भी आगमों या आगमों की टीकाओं में समर्थन मिलता है तो उस पाठ को लेने का आग्रह रखा गया है।

के. आर. चन्द्र

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

विभाग - २

आचाराङ्ग के शब्द-पाठों की उसके विविध संस्करणों, हस्तप्रतों, अन्य आगम-ग्रंथों तथा आगमेतर प्राचीन प्राकृत ग्रंथों के शब्द-पाठों के साथ तुलना ।

Comparison of the word-forms of the text of Ācārāṅga with that of its various editions and manuscripts, other Agamic texts and older Prakrit texts.

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

1. महावीर जैन विद्यालय और आगमोदय समिति के संस्करणों के पाठों की तुलना

सूत्र नं.	महावीर जैन विद्यालय	आगमोदय समिति	
1	भवति	भवइ	
	पुरत्थिमातो	पुरत्थिमाओ	
	दिसातो	दिसाओ	
	आगतो	आगओ	
	पच्चत्थिमातो	पच्चत्थिमाओ	
	दिसातो	दिसाओ	
	उत्तरातो	उत्तराओ	
	दिसातो	दिसाओ	
	आगतो	आगओ	
	उड्ढातो	उड्ढाओ	
	दिसातो	दिसाओ	
	आगतो	आगओ	
	अधेदिसातो	अहोदिसाओ	
	आगतो	आगओ	
	अन्नतरीतो	अण्णयरीओ	
	दिसातो	दिसाओ	
	अणुदिसातो	अणुदिसाओ	
	आगतो	आगओ	
	णातं	णायं	
	णत्थि	नत्थि	
	चुते	चुए	
2	सहसम्मुइयाए	सहसंमइयाए	
	पुरत्थिमातो	पुरत्थिमाओ	

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

सूत्र नं.	महावीर जैन विद्यालय	आगमोदय समिति	
	दिसातो	दिसाओ	
	आगतो	आगओ	
	अन्नतरीओ	अण्णयरीओ	
	आगतो	आगओ	
	णातं	णायं	
	अणुसंचरति	अणुसंचरइ	
3	लोगावादी	लोयावादी	
4	काराविस्सं	कारवेसुं	
	यावि	आवि	
	समणुण्णे	समणुन्ने	
5	परिजाणितव्वा	परिजाणियव्वा	
6	अणुसंचरति	अणुसंचरइ	
	सहेति	साहेति	
	संधेति	संधेइ	
	पडिसंवेदयति	पडिसंवेदेइ	
7	पवेदिता	पवेइआ	
	जाती-	जाई-	
	दुक्खपडिघातहेतुं	दुक्खपडिघायहेउं	
	एतावंति	एयावंति	
10	दुस्संबोधे	दुस्संबोहे	
11	सिता	सिया	
12	समारंभमाणो	समारंभेमाणा	
	विहिंसति	विहिंसइ	
	भगवता	भगवया	
13	पवेदिता	पवेइया	
	जाती-	जाइ-	

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

सूत्र नं.	महावीर जैन विद्यालय	आगमोदय समिति	
	दुक्खपडिघातहेउं	दुक्खपडिघायहेउं	
	से	स	
	समारंभति	समारंभइ	
	समारंभावेति	समारंभावेइ	
	समणुजाणति	समणुजाणइ	
	अहिताए	अहिआए	
14	समट्ठाए	समट्ठाय	
	भगवतो	भगवओ	
	निरए	णरए	
	गढिए	गड्ढिए	
	पुढविकम्मसमारंभेणं	पुढविकम्मसमारंभेण	
	समारभमाणे	समारंभमाणे	
	विहिंसति	विहिंसइ	
15	पादमब्भे	पायमब्भे	
16	एत्थ	इत्थं	
	समारभमाणस्स	समारंभमाणस्स	
17	णेव	नेव	
	समारभेज्जा	समारंभेज्जा	
	समारभावेज्जा	समारंभावेज्जा	
	समारभंते	समारंभंते	
18	परिण्णायकम्मे	परिण्णातकम्मे	
19	णियागपडिवण्णे	नियायपडिवण्णे	
	वियाहिते	वियाहिए	
20	णिक्खंतो	निक्खंतो	
	अणुपालिया	अणुपालिज्जा	
	विजहित्ता	वियहित्ता	

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

सूत्र नं.	महावीर जैन विद्यालय	आगमोदय समिति	
22	अकुतोभयं	अकुओभयं	
	अब्भाइक्खेज्जा	अब्भाइक्खिज्जा	
	लोगं	लोयं	
	अब्भाइक्खति	अब्भाइक्खइ	
	लोगं	लोयं	
	विहिंसति	विहिंसइ	
24	जीवितस्स	जीवियस्स	
	जाती-मरण-	जाइ-मरण-	
	दुक्खपडिघातहेतुं	दुक्खपडिघायहेउं	
	समारभावेति	समारंभावेति	
	समारभंते	समारंभंते	
	अहिताए	अहियाए	
	अबोधीए	अबोहीए	
25	समुट्ठाए	समुट्ठाय	
	भगवतो	भगवओ	
	णातं	णायं	
	निरए	णरए	
	गढिए	गड्ढिए	
	उदयकम्मसमारंभेणं	उदयकम्मसमारम्भेणं	
	समारभमाणे	समारंभमाणे	
26	उदयणिस्सिया	उदयनिस्सिया	
	अणेगा	अणेगे	
	उदयं	उदय	
	चेत्थ	चेत्थं	
	अणुवीयि	अणुवीइ	
	पास	पासा	

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

सूत्र नं.	महावीर जैन विद्यालय	आगमोदय समिति	
	पवेदितं	पवेइयं	
	अदिण्णादाणं	अदिन्नादाणं	
27	पातुं	पाउं	
28	विउट्टंति	विउट्टन्ति	
	णो	नो	
	णिकरणाए	निकरणाए	
29	इच्चेते	इच्चेए	
30	समारभेज्जा	समारम्भेज्जा	
	समारभावेज्जा	समारंभावेज्जा	
	समारभंते	समारंभंते	
32	लोगं	लोयं	
	अब्भाइक्खति (4 बार)	अब्भाइक्खइ (4 बार)	
	लोगं	लोयं	
	खेत्तण्णे (4 बार)	खेयण्णे (4 बार)	
33	वीरेहि	वीरेहिं	
	संजतेहिं	संजएहिं	
	सता	सया	
	जतेहिं	जत्तेहिं	
	सदा	सया	
	गुणट्ठिते	गुणट्ठीए	
	पवुच्चति	पवुच्चइ	
	इदाणीं	इयाणिं	
	पमादेणं	पमाएणं	
34	अगणिकम्मसमारंभेणं	अगणिकम्मसमारम्भेणं	
	समारंभमाणे	समारभमाणे	
	विहिंसति	विहिंसंति	

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

सूत्र नं.	महावीर जैन विद्यालय	आगमोदय समिति	
35	जाती-मरण-	जाइ-मरण-	
	दुक्खपडिघातहेतुं	दुक्खपडिघायहेउं	
	समारभति	समारभइ	
	समारभावेति	समारंभावेइ	
	समणुजाणति	समणुजाणइ	
	अहिताए	अहियाए	
	अबोधीए	अबोहियाए	
36	समुट्ठाए	समुट्ठाय	
	भगवतो	भगवओ	
	णातं	णायं	
	निरए	णरए	
	गढिए	गड्ढिए	
	विहिंसति	विहिंसइ	
37	संति	सन्ति	
	पुढवि-णिस्सिता	पुढवि-निस्सिया	
	कट्ठ-णिस्सिता	कट्ठ-निस्सिया	
	संघातमावज्जंति (2बार)	संघायमावज्जन्ति (2बार)	
38	समारभमाणस्स	असमारंभमाणस्स	
	अंपरिण्णाता	परिण्णाया	
39	परिण्णाता	परिण्णाया	
40	मतिमं	मइमं	
	एसोवरते	एसोवरए	
	पवुच्चति	पवुच्चई	
41	यावि	आवि	
	लोगे	लोए	
	वियाहिते	वियाहिए	

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

सूत्र नं.	महावीर जैन विद्यालय	आगमोदय समिति	
	गुणासाते	गुणासाए	
42	वणस्सतिकम्मसमारंभेणं	वणस्सइकम्मसमारम्भेणं	
	वणस्सतिसत्थं	वणस्सइसत्थं	
	समारभमाणे	समारभमाणा	
	विहिंसति	विहिंसंति	
43	भगवता	भगवया	
	दुक्खपडिघातहेतुं	दुक्खपडिघायहेउं	
	वणस्सतिसत्थं	वणस्सइसत्थं	
	समारभति	समारंभइ	
	समारभावेति	समारंभावेइ	
	समणुजाणति	समणुजाणइ	
44	भगवतो	भगवओ	
	णिरए	णरए	
	गढिए	गड्ढिए	
	वणस्सतिकम्मसमारंभेणं	वणस्सइकम्मसमारंभेणं	
	वणस्सतिसत्थं	वणस्सइसत्थं	
	समारभमाणे	समारंभमाणे	
	विहिंसति	विहिंसंति	
45	जातिधम्मयं	जाइधम्मयं	
	मिलाति	मिलाइ	
	अणितियं	अणिच्चयं	
	चयोवचइयं	चओवचइयं	
	विप्परिणामधम्मयं (2 बार)	विपरिणामधम्मयं (2 बार)	
46	आरंभा	आरम्भा	
47	वणस्सतिसत्थं	वणस्सइसत्थं	
47	समारभेज्जा	समारंभेज्जा	
	वणस्सतिसत्थं	वणस्सइसत्थं	

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

सूत्र नं.	महावीर जैन विद्यालय	आगमोदय समिति	
	समारभावेज्जा	समारंभावेज्जा	
	वणस्सतिसत्थं	वणस्सइसत्थं	
	समारभंते	समारंभंते	
49	पोतया	पोयया	
	सम्मुच्छिमा	संमुच्छिमा	
	उववातिया	उववाइया	
	उब्भिया	उब्भियया	
	पवुच्चति	पवुच्चई	
	णिज्झाइत्ता	निज्झाइत्ता	
	परिणिव्वाणं	परिनिव्वाणं	
	भूताणं	भूयाणं	
	अस्सातं	अस्सायं	
	अपरिणिव्वाणं	अपरिनिव्वाणं	
	तसंति	तसन्ति	
	परितावेंति	परितावंति	
	सिता	सिया	
50	पवदमाणा	पवयमाणा	
	तसकायसमारंभेणं	तसकायसमारंभेण	
	समारभमाणे	समारभमाणा	
51	भगवता	भगवया	
	पवेदिता	पवेइया	
	परिवंदण	परिवन्दण	
	जाती–मरण–	जाई–मरण–	
	दुक्खपडिघायहेतुं	दुक्खपडिघायहेउं	
	समारभावेति	समारंभावेइ	
	समणुजाणति	समणुजाणइ	

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

सूत्र नं.	महावीर जैन विद्यालय	आगमोदय समिति	
	अहिताए	अहियाए	
	अबोधीए	अबोहीए	
52	समुट्ठाए	समुट्ठाय	
	भगवतो	भगवओ	
	णातं	णायं	
	निरए	णरएं	
	गढिए	गड्ढिए	
	तसकायकम्मसमारंभेणं	तसकायसमारंभेण	
	समारभमाणे	समारंभमाणे	
	वधेंति	हणंति	
	वधेंति	वहंति	
	वहेंति	वहंति	
	सोणिताए	सोणियाए	
	वधेंति	वहंति	
	सिंगाए	सिङ्गाए	
	नहाए	णहाए	
	अट्ठिए	अट्ठीए	
53	वधेंति	वहंति	
	भवंति	भवन्ति	
54	मेधावी	मेहावी	
	समारभेज्जा	समारंभेज्जा	
	समारभावेज्जा	समारंभावेज्जा	
	समारभंते	समारंभंते	
55	परिण्णातकम्मे	परिण्णायकम्मे	
56	पभू	पहू	
	आतंकदंसी	आयंकदंसी	
	जाणति	जाणइ	

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

सूत्र नं.	महावीर जैन विद्यालय	आगमोदय समिति	
	एतं तुलमण्णेसिं	एयं तुलमन्नेसिं	
	संतिगता	सन्तिगया	
57	लज्जमाणा	लज्जमाणे	
	पवदमाणा	पवयमाणा	
	समारभमाणे	समारंभमाणे	
58	भगवता	भगवया	
	पवेदिता	पवेइया	
	जाती-मरण-	जाई-मरण-	
	दुक्खपडिघातहेतुं	दुक्खपडिघायहेउं	
	समारभावेति	समारंभावेइ	
	समारभंते	समारंभंते	
	अबोधीए	अबोहीए	
59	भगवतो	भगवओ	
	गढिए	गड्ढिए	
	समारभमाणे	समारंभमाणे	
60	संपतंति	संपयंति	
	परियाविज्जंति	परियावज्जंति	
	अपरिण्णाता	अपरिण्णाया	
61	परिण्णाता	परिण्णाया	
	समारभेज्जा	समारंभेज्जा	
	समारभावेज्जा	समारंभावेज्जा	
	समारभंते	समारंभंते	
62	छज्जीवणिकाय-	छज्जीवनिकाय-	
	समारभेज्जा	समारंभेज्जा	
	समारभावेज्जा	समारंभावेज्जा	
	समारभंते	समारंभंते	
	छज्जीवणिकाय-	छज्जीवनिकाय-	

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

2. जैन विश्व भारती और महावीर जैन विद्यालय के संस्करणों के पाठों की तुलना

जैन विश्व भारती	महावीर जैन विद्यालय	मजैवि. सूत्र नं.
लोयं	लोगं	22
लोए	लोगे	41
महोवगरणं	महोवकरणं	79, 82
मूयत्तं	मूकत्तं	76
बहुगा	बहुया	82
एगयरं	एकयरं	96
लोयं	लोकं	140
भइणी	भगिणी	63
भवइ	भवति	1, 2, 52, 59, 79, 82
पुरत्थिमाओ	पुरत्थिमातो	1
दिसाओ	दिसातो	1
आगओ	आगतो	1
अणुसंचरइ	अणुसंचरति	2, 6
भगवया	भगवता	7, 13, 24, 35, 43, 51, 58, 89
पडिघायहेउं	पडिघातहेतुं	7, 13, 24, 35, 43, 58
एयावंति	एतावंति	8
जाई-	जाती-	7, 13, 24, 35, 43 51, 58
अहियाए	अहिताए	13, 24, 35
भगवओ	भगवतो	14, 25, 36, 44, 59
जीवियस्स	जीवितस्स	24, 191
पाउं	पातुं	27
मइमं	मतिमं	40, 92

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

जैन विश्व भारती	महावीर जैन विद्यालय	मजैवि. सूत्र नं.
ओववाइया	उववातिया	49
पवेइया	पवेदिता	51
एयं	एतं	56, 79, 85, 86
उन्नयमाणे	उण्णतमाणे	127
अवइन्ना	अवितिण्णा	183
सीयफास	सीतफास	187, 211, 215
मायण्णे	मातण्णे	273
आयावाई	आयावादी	3
लोगावाई	लोगावादी	3
पवेइय	पवेदित	7, 13, 26, 35, 43 51, 58, 74, 79
उयरं	उदरं	15
पमाएणं	पमादेणं	33, 76, 85
एगया	एगदा	64, 67, 79, 300 313
दायाया	दायादा	79, 82
सया	सदा	195
पवेइयं	पवेदितं	208
भेउर	भेदुर	224, 251
विही	विधी	276, (थ = ध)
मेहावी	मेधावी	54, 69, 209
अहियास	अधियास	99, 186, 286
अहे	अधे	191, 291, 320
साहु	साधू	200
नाभिगाहइ	णाभिगाहइ	71
नालं	णालं	81
णरगतिरिक्खाए	नरगतिरिक्खाए	84

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

जैन विश्व भारती	महावीर जैन विद्यालय	मजैवि. सूत्र नं.
न	ण	86, 95
ण	न	88, 89
उदयणिस्सिया	उदयनिस्सिया	26
संणिधाणसत्थस्स	संनिहाणसत्थस्स	210
अभिणिव्वुडच्चे	अभिनिव्वुडच्चे	224
बहुनडे	बहुणडे	151
सन्निहिसन्निचओ	संणिहिसंणिचओ	87
उन्नयमाणे	उण्णतमाणे	127
पहू	पभू	56
सरीरभेउ	सरीरभेदो	198
णिरामगंधो	णिरामगंधे	88
वासाणि	वासाइं	187
आसणगाणि	आसणगाइं	294
आगमेण	आगमेणं	173
तिविहेणं	तिविधेण	79
वीरेहिं	वीरेहि	33
अण्णयरंसि	अण्णयरंमि	96
चरे	चर	78
सहते	सहती	98
सेवए	सेवे	149
सोयए	सोएज्जा	89
विजहित्तु	विजहित्ता	20
इति संखाय	इति संखाए	75
समायाए	समादाय	161
परिण्णाए	परिण्णाय	188

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

3. आगमोदय समिति और जैन विश्व भारती के संस्करणों के पाठों की तुलना

आगमोदय समिति	जैन विश्व भारती	मजैवि. सूत्र नं.
लोयावादी	लोगावाई	3
लोयं	लोगं	32
नियायपडिवण्णे	णियागपडिवण्णे	19
वियहित्ता	विजहित्तु	20
णायं	णातं	1, 2
भवति	भवइ	2, 52, 59
भगवता	भगवया	7, 24, 35
विहिंसइ	विहिंसति	12, 23, 25, 36
अकुओभयं	अकुतोभयं	22
इच्चेए	इच्चेते	29
पवुच्चइ, -ति	पवुच्चति, -ती	33, 49
पवेदिता	पवेइया	35, 42
मिलाइ	मिलाति	44
वणस्सति	वणस्सइ	48
आतुरा	आउरा	49
समारंभावेइ	समारंभावेति	58
समणुजाणति	समणुजाणइ	58
आयावादी	आयावाई	2
कम्मावादी	कम्मावाई	3
किरियावादी	किरियावाई	3

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

आगमोदय समिति	जैन विश्व भारती	मजैवि. सूत्र नं.
उदरं	उयरं	15
पवदमाणा	पवयमाणा	34
णो, नो	नो, णो	1, 28
णेवण्णे	नेवण्णे	17
निक्खंतो	णिक्खंतो	20
णहाए	नहाए	52
नियया	णियया	81
नियगे	णियगे	81
नस्सइ	णस्सइ	81
नो	णो	83
नरगाए	णरगाए	84
नालं	णालं	85
न	ण	86
नेव	णेव	95
नत्थि	णत्थि	102, 105
पुढविनिस्सिया	पुढविणिस्सिया	36
अपरिनिव्वाणं	अपरिणिव्वाणं	49
वंकानिकेया	वंकाणिकेया	134
पंथनिज्झाई	पंथणिज्झाती	162
सव्वगायनिरोहे	सव्वगायणिरोधे	247
अभिनिव्वुडे	अभिणिव्वुडे	322
अन्नेसिं	अण्णेसिं	56

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

आगमोदय समिति	जैन विश्व भारती	मजैवि. सूत्र नं.
अन्नहा	अण्णहा	88
मन्नमाणे	मण्णमाणे	94
समण्णागय-	समन्नागय-	62
आरियपन्ने	आरियपण्णे	88
परिन्नाय	परिण्णाय	88
कालन्ने	कालण्णे	88
खेयन्ने	खेयण्णे	104
लोगसन्नं	लोगसण्णं	104
छिण्णं	छिन्नं	44
अदिन्नादाणं	अदिण्णादाणं	26
अहोदिसाओ	अहे वा दिसाओ	1, जैविभा. का पाठ स्वीकारने योग्य है।
साहेति	सहेति	6
जाइ-	जाई-	24, 35
पवुच्चई	पवुच्चइ	40
उक्वाइया	ओववाइया	49
परितावंति	परितावेंति	49
समारभति(इ)	समारंभति (इ)	24, 35, 51
चुए	चुओ	2
समुट्ठाय	समुट्ठाए	14, 25, 36
वियहित्ता	विजहित्तु	20

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

4. आचाराङ्ग (मजैवि.) और शीलाङ्काचार्य (आगमोदय) की वृत्ति के पाठ

(मजैवि. संस्करण, सूत्र नं.)		(शीलाङ्कवृत्ति)
प्रथम अध्ययन के पाठ		
सहसम्मुइयाएं	2	सहसम्मइयाए
काराविस्सं	4	कारवेसुं
णियागपडिवण्णे	19	नियागपडिवन्ने
णेव	22	नेव
विउट्टंति	27	विउट्टन्ति
णिकरणाए	28	निकरणाए
णेव	32	नेव
मेहावी	33	मेधावी
णोकरए	40	नोकरए
पडिलेहित्ता	49	पडिलेहेत्ता
अण्णेसिं	56	अन्नेसिं
दुगुंछणाए	56	दुगुञ्छणाए
छंदोवणीया	62	छन्दोवणीया
नवम अध्ययन के पाठ		
अहासुतं	254	अहासुयं
फरिसाइं	262	फरुसाइं
मातण्णे	273	मायन्ने
णिद्दं	281	निद्दं
णिधाय	299	निधाय
हतपुव्वो	302	हयपुव्वो

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

5. महावीर जैन विद्यालय, बम्बई के संस्करण और श्री शांतिनाथ ताड़पत्रीय जैन ज्ञानभंडार, खंभात की वि. सं. 1303 की 'खं. 1' प्रति के पाठों की तुलना

मजैवि.	सूत्र नं.	खं. 1
णो	1	नो
उववाइए (दो बार)	1	ओववातिए (दो बार)
एगेसिं	2	एकेसिं
उववाइए	2	ओववादिए
लोगंसि	8	लोकम्मि
पुढविकम्मसमारंभेणं	12	पुढविकम्मसमारंभेण
इहमेगेसिं	14	[illegible]मेकेसिं
णातं	14	नायं
निरए	14	नरए
णासमब्भे	15	नासमब्भे
समारभमाणस्स	16	समारंभमाणस्स
समारभेज्जा	17	समारंभिज्जा
णेवऽण्णेहिं	17	नेवन्नेहिं
समारभावेज्जा	17	समारंभाविज्जा
समारभंते	17	समारंभंते
णियागपडिवण्णे	19	नियायपडिवण्णे
णिक्खंतो	20	निक्खंतो
णेव (दो बार)	22	नेव (दो बार)
पवयमाणा	23	पवदमाणा

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

मजैवि.	सूत्र नं.	खं. 1
उदयकम्मसमारंभेणं	23	उदयकम्मसमारंभेण
समारभावेति	24	समारंभावेति
अण्णे	24	अन्ने
समारभंते	24	समारभमाणे
इहमेगेसिं	25	इहमेकेसिं
णातं	25	नायं
निरए	25	णरए
समारभमाणे	25	समारंभेमाणे
उदयणिस्सिया	26	उदयनिस्सिया
अदिण्णादाणं	26	अदिन्नादाणं
कप्पइ	27	कप्पति
णो	28	नो
णिकरणाए	28	निकरणाए
णेवण्णेहिं	30	नेवण्णेहिं
समारभावेज्जा	30	समारंभाविज्जा
ण	30	न
णेव (दो बार)	32	नेव (दो बार)
खेत्तण्णे	32	खेतण्णे
णातं	36	नायं
निरए	36	नरए
पुढविणिस्सिता	37	पुढविनिस्सिया
तणणिस्सिता	37	तणनिस्सिया

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

मजैवि.	सूत्र नं.	खं. 1
कट्ठ-णिस्सिता	37	कट्ठ-निस्सिया
गोमय-णिस्सिता	37	गोमय-निस्सिया
कयवर-णिस्सिया	37	कयवर-निस्सिआ
असमारभमाणस्स	38	असमारंभमाणस्स
णो	40	नो
वणस्सतिकम्मसमारंभेणं	42, 44	वणस्सइकम्मसमारंभेण
समारभावेंति	43	समारंभावेति
णिरए	44	नरए
छिण्णं (दो बार)	45	छिन्नं (दो बार)
णेव	47	नेव
समारभेज्जा	47	समारंभेज्जा
णेवण्णेहिं	47	नेवण्णेहिं
समारभावेज्जा	47	समारंभावेज्जा
णेवऽण्णे	47	नेवन्ने
अवियाणओ	49	अविजाणओ
णिज्झाइत्ता	49	निज्झाइत्ता
अण्णे	50	अन्ने
समारभावेंति	51	समारंभावेति
समारभमाणे	51	समारंभमाणे
इहमेगेसिं	52	इहमेकेसिं
णेव	54	ने (स ?) व
णेवण्णेहिं	54	नेवन्नेहिं

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

मजैवि.	सूत्र नं.	खं. 1
णेवऽण्णे	54	नेवण्णे
अण्णेहिं	58	अन्नेहिं
णिरए	59	निरए
असमारभमाणस्स	60	असमारंभमाणस्स
णेव	61	नेव
समारभेज्जा	61	समारंभेज्जा
णेवऽण्णेहिं	61	नेवण्णेहिं
णेवऽण्णे	61	नेवण्णे
अज्झोववण्णा	62	अज्झोववन्ना
सव्वसमण्णागत-पण्णाणेणं	62	सव्वसमन्नागय-पन्नाणेण
णो	62	नो
अण्णेसिं	62	अन्नेसिं
णेव	62	नेव
छज्जीवणिकायसत्थं (चार बार)	62	छज्जीवनिकायसत्थं (चार बार)
णेवण्णेहिं	62	नेवन्नेहिं
णेवऽण्णे	62	नेवन्ने

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

6. महावीर जैन विद्यालय, बम्बई के संस्करण और श्री शांतिनाथ ताड़पत्रीय जैन ज्ञानभंडार, खंभात की वि. सं. 1327 की 'खं. 3' प्रति के पाठों की तुलना

मजैवि.	सूत्र नं.	खं. 3 से मजैवि. के संस्करण में अनुल्लिखित पाठान्तर
आया उववाइए	1	आता उववादिए
अंतिए	2	अन्तिए
परिण्णायकम्मे	9	परिण्णातकम्मे
विरूवरूवेहिं	12	विरूवरूवेहि
पाणे	12, 14	पाणा
णाभिं	15	नाभिं
णेवऽण्णेहिं	17	नेवअन्नेहिं
गढिए	25	गड्ढिए
अपरिण्णाया	29	अपरिण्णाता
मेहावी	30	मेधावी
जे	32	ये
मेहावी	33	मेधावी
गढिए	36	गढिते
सत्थेहिं	36	सत्थेहि
णायं	44	नायं
छिण्णं (दो बार)	45	छिन्नं (दो बार)
मिलाति (दो बार)	45	मिलाइ (दो बार)
अण्णेसिं	56	अन्नेसिं
मेहावी	62	मेधावी
णेवऽण्णेहिं	62	णेव'ण्णेहि

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

7. महावीर जैन विद्यालय, बम्बई के संस्करण और भांडारकर ओरिएन्टल रीसर्च इन्स्टीट्यूट, पूना की ताड़पत्रीय वि. सं. 1348 की प्रति के पाठों की तुलना

मजैवि.	सूत्र नं.	पूना की प्रति
सण्णा	1	सन्ना
एवमेगेसिं	1	एवमेकेसिं
णातं	1	नातं
सहसम्मुइयाए	2	सहसम्मुदियाए
एवमेगेसिं	2	एवमेकेसिं
णातं	2	नायं
लोगावादी	3	लोकावाई
लोगंसि	8	लोकंसि
निरए	14	नरए
पुढविकम्मसमारंभेणं	12, 14	पुढविकम्मसमारंभेण
णिडालमब्भे	15	निलाडमब्भे
णिक्खंतो	20	निक्खंतो
इहमेगेसिं	25	इहमेकेसिं
निरए	25	नरये
णेव	32	नेव
खेत्तण्णे	32	खेयन्ने
णो	40	नो
अहं तिरियं	41	अधं तिरियं
अण्णेहिं	51	अन्नेहिं

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

मजैवि.	सूत्र नं.	पूना की प्रति
णातं	52	नायं
अण्णे	52	अन्ने
णेव	54	नेव
णेवऽण्णे	54	नेव'न्ने
णेवऽण्णेहिं	54	नेवन्नेहिं
णच्चा	56	नच्चा
अण्णेसिं	56	अन्नेसिं
अण्णेहिं	58	अन्नेहिं
अण्णे	58	अन्ने
णातं	59	नायं
णिरए	59	निरए
अण्णे	59	अन्ने
अण्णे	61	अन्ने
सव्वसमण्णागतपण्णाणेणं	62	सव्वसमण्णागयपन्नाणेणं
णो	62	नो
अण्णेसिं	62	अन्नेसिं
णेव	62	नेव
णेवऽण्णे	62	नेवऽन्ने
छज्जीवणिकायसत्थं	62	छज्जीवनिकायसत्थं
णेवऽण्णेहिं	62	नेवऽन्नेहिं
छज्जीवणिकायसत्थसमारंभा	62	छज्जीवनिकायसत्थसमारंभा

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

8. महावीर जैन विद्यालय, बम्बई के संस्करण और जेसलमेर की वि. सं. 1485 की ताड़पत्र की 'जे.' प्रति के पाठों की तुलना

मजैवि.	सूत्र नं.	'जे.' प्रति
सण्णा	1	सन्ना
णातं	1	नातं
एवमेगेसिं	1	एवमेकेसिं
णत्थि	1	नत्थि
सहसम्मुइयाए	2	सहसम्मुदियाए
एगेसिं	2	एकेसिं
णातं	2	नायं
लोगावादी	3	लोकावाई
समारंभमाणो	12	समारंभेमाणा
निरए	14	नरए
णिक्खंतो	20	निक्खंतो
पवेदितं	26	पवेतियं
णेव	32	नेव
खेत्तण्णे	32	खेयन्ने
कट्ठणिस्सिता	37	कट्ठनिस्सिया
गोमयणिस्सिता	37	गोमयनिस्सिया
उद्दायंति	37	उद्दायन्ति
णो	40	नो
अहं तिरियं	41	अध तिरियं
अहं तिरियं	41	अधं तिरियं
णिज्झाइत्ता	49	निज्झायत्ता
परिणिव्वाणं	49	परिनिव्वाणं

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

मजैवि.	सूत्र नं.	'जे.' प्रति
अपरिणिव्वाणं	49	अपरिनेव्वाणं
विरूवरूवेहिं	50	विरूवरूवेहि
अण्णेहिं	51	अन्नेहिं
अण्णे	51	अन्ने
समुट्ठाए	52	समुट्ठाय
णातं	52	नायं
अण्णे	52	अन्ने
हिययाए	52	हितयाए
णेव	54	नेव
णेवऽण्णेहिं	54	नेव'न्निहिं
णेवऽण्णे	54	नेवऽन्ने
णच्चा	56	नच्चा
अण्णेसिं	56	अन्नेसिं
अण्णे	57	अन्ने
अण्णेहिं	58	अन्नेहिं
अण्णे	58	अन्ने
णातं	59	नायं
अण्णे	59	अन्ने
सव्वसमण्णागतपण्णाणेणं	62	सव्वसमण्णागयपन्नाणेणं
णो	62	नो
अण्णेसिं	62	अन्नेसिं
णेव	62	नेव
छज्जीवणिकायसत्थं	62	छज्जीवनिकायसत्थं
णेवऽण्णेहिं	62	नेवन्नेहिं
णेवऽण्णे	62	नेवऽन्ने

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

9. महावीर जैन विद्यालय, बम्बई के संस्करण और ला. द. भा. संस्कृति विद्यामंदिर, अहमदाबाद को भेंट में मिली श्री मुक्तिविजय जैन लाइब्रेरी की 15 वीं शती की कागज़ की 'ला.' प्रति (नं. 18772) के पाठों की तुलना

मजैवि.	सूत्रनं.	'ला.' प्रति.
सण्णा	1	सन्ना
उववाइए	1	उववातिते
सहसम्मुइयाए	2	सहसंमदियाए
अण्णेसिं	2	अन्नेसिं
एवमेगेसिं	2	एवमेकेसिं
णातं	2	नायं
उववाइए	2	उववाइते
लोगावादी	3	लोकावाई
लोगंसि	8	लोकंसि
पुढविकम्मसमारंभेणं	12	पुढविकम्मसमारंभेण
अण्णे	14	अन्ने
णाभि	15	नाभि
णिडालमब्भे	15	निडालमज्झे
णिक्खंतो	20	निक्खंतो
महावीहिं	21	महावीही
लोगं	22	लोकं
अण्णेहिं	24	अन्नेहिं
अण्णे	24	अन्ने
इहमेगेसिं	25	इहमेकेसिं
निरए	25	नरए

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

मजैवि.	सूत्र नं.	'ला.' प्रति.
अणगाराणं	26	अणगाराण
अदिण्णादाणं	26	अदिन्नादाणं
कप्पइ	27	कप्पति
अपरिण्णाया	29	अपरिण्णाता
परिण्णाय	30	परिन्नाय
मेहावी	30	मेधावी
अण्णे	30	अन्ने
ण	30	न
णेव (दो बार)	32	नेव (दो बार)
खेत्तण्णे	32	खेअन्ने
खेत्तण्णे (तीन बार)	32	खेयन्ने (तीन बार)
अगणिकम्मसमारंभेणं	34	अगणिकम्मसमारंभेण
समारंभमाणे	34	समारभमाणे
तणणिस्सिता	37	तणनिस्सिया
पत्तणिस्सिता	37	पत्तनिस्सिया
कट्ठणिस्सिता	37	कट्ठनिस्सिया
गोमयणिस्सिता	37	गोमयनिस्सिया
णो	40	नो
अहं तिरियं (दो बार)	41	अधं तिरियं (दो बार)
अण्णे	42	अन्ने
परिण्णा	43	परिन्ना
अण्णे	43, 44	अन्ने
णिरए	44	निरए
छिण्णं (दो बार)	45	छिन्नं (दो बार)
परिण्णाया	46	परिण्णाता

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

मजैवि.	सूत्र नं.	'ला.' प्रति.
मेहावी	47	मेधावी
अण्णेहिं	47	अन्नेहिं
अण्णे	47	अन्ने
परिण्णाया	48	परिन्नाया
परिण्णायकम्मे	48	परिन्नायकम्मे
संसेयया	49	संसेतया
णिज्झाइत्ता	49	निज्झाइत्ता
परिणिव्वाणं	49	परिनेव्वाणं
अण्णे	50	अन्ने
अण्णेहिं	51	अन्नेहिं
अण्णे	51	अन्ने
समुट्ठाए	52	समुट्ठाय
अण्णे	52	अन्ने
हिययाए	52	हितयाए
णेव	54	नेव
णेवऽण्णेहिं	54	नेवन्नेहिं
अण्णेसिं	56	अन्ने (से ?) सिं
अण्णे	56	अन्ने
अण्णेहिं	58	अन्नेहिं
अण्णे	58	अन्ने
आयाणीयं	59	आताणीयं
णातं	59	नायं
अपरिण्णाता	60	अपरिन्नाया
परिण्णाता	60	परिन्नाता

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

मजैवि.	सूत्र नं.	'ला.' प्रति.
परिण्णाय	61	परिन्नाय
अण्णेहिं	61	अन्नेहिं
अण्णे	61	अन्ने
परिण्णाया	61	परिन्नाया
परिण्णायकम्मे	61	परिन्नायकंमे
णो	62	नो
अण्णेसिं	62	अन्नेसि
णेव	62	नेव
णेवऽण्णेहिं	62	नेवन्नेहिं
छज्जीवणिकायसत्थं (तीन बार)	62	छज्जीवनिकायसत्थं(तीन बार)
छज्जीवणिकायसत्थसमारंभा	62	छज्जीवनिकायसत्थसमारंभा
परिण्णाया	62	परिन्नाया
परिण्णायकम्मे	62	परिन्नायकम्मे

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

10. शुब्रिंग महोदय द्वारा सम्पादित आचाराङ्ग (1910 A. D.) के संस्करण में भांडारकर ओरिएन्टल रीसर्च इन्स्टीट्यूट, पूना की वि. सं. 1348 की ताड़पत्रीय प्रति में से अनुल्लिखित पाठान्तर

पृ. पंक्ति	शुब्रिंग-संस्करण का पाठ	पूना की प्रति का पाठान्तर	मजैवि. का पाठ और सूत्र नं.	
1.2	भवइ	भवति	भवति	1
5	एवमेगेसिं	एवमेकेसिं	एवमेगेसिं	1
6	नायं	नातं	णातं	1
6	भवइ	भवति	भवति	1
8	सहसम्मुइयाए	सहसंमुदियाए	सहसम्मुइयाए	2
10	एवमेगेसिं	एवमेकेसिं	एवमेगेसिं	2
11	भवइ	भवति	भवति	2
11	अणुसंचरइ	अणुसंचरति	अणुसंचरति	2
13	लोगावाई	लोकावाई	लोगावादी	3
18	सहेइ	सहेति	सहेति	6
19	भगवया	भगवता	भगवता	7
21	लोगंसि	लोकंसि	लोगंसि	8
2.1	जस्सेए	जस्सेते	जस्सेते	9
5	आउरा	आतुरा	आतुरा	10
5	परियावेन्ति	परितावेंति	परितावेंति	10
13	समारभइ	समारंभति	समारंभति	13
17	भवइ	भवति	भवति	14

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

पृ. पंक्ति	शुब्रिंग-संस्करण का पाठ	पूना की प्रति का पाठान्तर	मजैवि. का पाठ और सूत्र नं.	
22	विहिंसइ	विहिंसंति	विहिंसति	14
25	उयरं	उदरं	उदरं	15
3.3	जस्सेए	जस्सेते	जस्सेते	18
10	वियहित्तु	विजहित्तु	विजहित्ता	20
15	लोगं (दो बार)	लोयं (दो बार)	लोगं (दो बार)	22
21	अइन्नायाणं	अदिण्णादाणं	अदिण्णादाणं	26
27	अब्भाइक्खइ	अब्भाइक्खति	अब्भाइक्खति	32
5. 32	रमन्ति	रमंते	रमंति	62

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

11. आचाराङ्ग की जेसलमेर की वि. सं. 1485 की ताड़पत्रीय 'जे.' प्रति जिसका मजैवि. के संस्करण में सूत्र नं. 1 से 31 तक उपयोग किया गया है, परंतु कुछ पाठान्तरों का उल्लेख नहीं हो पाया है वे इस प्रकार हैं ।

मजैवि.	सू. नं.	मजैवि. के संस्करण में 'जे.' प्रति के अनुल्लिखित पाठान्तर
सण्णा	1	सन्ना
णातं	1	नातं
एवमेगेसिं	1	एवमेकेसिं
णत्थि	1	नत्थि
सहसम्मुइयाए	2	सहसम्मुदियाए
एगेसिं	2	एकेसिं
णातं	2	नायं
लोगावादी	3	लोकावाई
समारंभमाणो	12	समारंभेमाणा
निरए	14	नरए
णिक्खंतो	20	निक्खंतो
पवेदितं	26	पवेतियं

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

12. आचाराङ्ग के कुछ संस्करणों में अनुनासिक व्यंजन का स्ववर्ग के व्यंजन के साथ संयुक्तरूप में प्रयोग के उदाहरण

मजैवि.	सूत्र नं.	अन्य संस्करण	
संकुचए	1. 243	सङ्कुचए	आगमो.
संखाय	1. 250	सङ्खाय, (सङ्ख्या)	आगमो.
सिंगाए	1. 52	सिङ्गाए	आगमो.
विगिंचमाणे	1. 129	विगिञ्चमाणे	शु.
संलुंचमाणा	1. 298	संलुञ्चमाणा	शु.
लुंचिसु	1. 303	लुञ्चिसु	शु. आगमो.
विउंजंति	1. 200	विउञ्जन्ति	शु.
अंजू	1. 170	अञ्जू	शु, शी.
भंजगा	1. 178	भञ्जगा	शु, शी.
भुंजित्था	1. 271, 272	भुञ्जित्था	शु, आगमो.
भुंजे	1. 313	भुञ्जे	शु, आगमो
भुंजंते	1. 237	भुञ्जन्ति	आगमो.
		भुञ्जते	शु.
भुंजह	1. 204	भुञ्जह	शु.
पलालपुंजेसु	1. 278	पलालपुञ्जेसु	आगमो, शी.
विउट्टंति	1. 28	विउट्टन्ति	आगमो, शु.
संति	1. 37	सन्ति	आगमो, शु.
तसंति	1. 49	तसन्ति	आगमो, शु.
भवंति	1. 53	भवन्ति	आगमो, शु.
समारंभेणं	1. 25, 35, 42	समारम्भेणं	आगमो.
आरंभा	1. 46	आरम्भा	आगमो.

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

13. आचाराङ्ग (मजैवि.) में दन्त्य 'नकार' का 'णकार' जबकि सूत्रकृताङ्ग (मजैवि.) में 'नकार'

आचाराङ्ग	सूत्र नं.	सूत्रकृताङ्ग	सूत्र नं.
णच्चाण	314	नच्चाण	206
णिक्खंत	20, 199	निक्खंत	434
णिदाण	584	निदाण	739
णियम	77	नियम	199, 682
णिरामगंध	88	निरामगंध	356
णिरालंबण	804	निरालंबण	714
णिस्सार	119	निस्सार	406
अभिणिव्वट्ट	181	अभिनिव्वट्ट	650, 732, 733
अभिणिव्वुड	224, 228,322	अभिनिव्वुड	100, 109,435,476
अहोणिसं	768	अहोनिसं	751
जीवणिकाय	745	जीवनिकाय	749, 751
अण्णत्थ	157	अन्नत्थ	280, 393
अण्णहा	89, 159, 176	अन्नहा	73, 384
सुण्णागार	204	सुन्नागार	125, 126

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

14. आचाराङ्ग (आगमो.) के प्रथम अध्ययन की निर्युक्ति-गाथाओं में दन्त्य नकार के प्रयोग

★ **प्रारंभिक नकार (गाथा नं. 1 से 171)**

न	4, 63, 82, 83, 135, 143
नत्थि	66, 98, 99, 153
नर	97
नव	20, 30
नवण्ह	18
नवम	34
नवमग	22, 32
नवर	5
नाणत्त	80, 81
नाणत्ती	106, 116, 126, 152, 164
नाणाविह	133
नाम	40, 55, 58, 69, 76
निउण	89 (दो बार)
निओय	143
निक्खम	159
निक्खमण	90, 158
निक्खिव	4 (दो बार), 88, 104
निक्खिवण	92
निक्खेव	2, 3, 4, 68, 69
निग्गुण	100
निच्छीरं	140
निज्जाणं	34
निज्जुत्ति	1, 115, 125, 151, 163, 171
निद्दोस	100

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

नियम	25
नियाए	102
निरवसेस	4
निवित्ति	68
निव्वाण	17 (दो बार)
निसाअ	23, 26
निसाईए	27
निसीयण	92
निस्संगय	34
नेरइय	58, 60, 154 (दो बार)
नेरूती	43

★ अपवाद न = ण

ण	99
णव	11
णिमित्त	51

★ मध्यवर्ती नकार

इंदनील	75
अनियाए	102

★समास में नकार

चउक्कनिक्खेवो	5
अंबट्ठुग्गनिसाया	22
लोगसारनाम	31
दिसानिक्खेवो	40
रुयगनिभा	46
पुढवीनामगोयं	70
तालसरलनालिएर	133

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

★ न्न = न्न

उववन्न	110

★ न्य = न्न

अन्न	64, 101, 102, 138
धन्न	87, 144
अन्नमन्न	91
अणुमन्न	101

अपवाद

अण्ण	52, 53, 66(दो बार), 141
जहण्णयं	41

★ ज्ञ = न, न्न

नाअ	10
नाण-	38, 63
नायव्व	3, 24, 154
पज्जवनाण	65
दंसणनाण	156
अन्नाणी	28

अपवाद

★ ज्ञ = ण, ण्ण

णायव्व	20, 21, 25, 27(दो बार), 28, 35, 40, 47, 62
आण	21
आणा	83, 135
नाणसण्णा	38, 63
पण्णव	40, 51, 52, 54, 58, 61, 62, 64
परिण्णा	2, 12, 13, 31(दो बार), 35, 37
संणा	2

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

15. आचाराङ्ग (आगमो.)की शीलाङ्काचार्य की वृत्ति में निर्युक्ति सिवाय की अन्य उद्धृत गाथाओं में दन्त्य 'नकार' के प्रयोग

पृष्ठ	पंक्ति	शब्द
		प्रारंभिक नकार
10 ब	2	न
52 ब	10, 11	न
62 अ	3	न
63 अ	3	न
68 अ	8	नव
43 ब	1	नवनवसंवेगसद्धाए
53 अ	1	नारभे
68 अ	9	नारय-सुराणं
68 अ	6	नारय-सुरेसु
41 अ	10	निज्जीवसजीवरूवाओ
69 अ	5	निल्लेवा
5 अ	7	निव्वितिगिच्छा
5 अ	6, 7	निस्संकिय-निक्कंखिय
31 अ	6	नीससंति
	7	नीससन्ति
		मध्यवर्ती नकार
77 अ	3	अनिव्वाणी
63 अ	3	अभिनिवेसए
		समास में नकार
2 ब	5	जियनिद्दो
24 ब	3	तित्थगरनामगोत्तं

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

पृष्ठ	पंक्ति	शब्द
68 अ	5	-पत्तेयनिओय
75 ब	12	भुयण-निग्गय-पयावो
22 अ	1	समयनिबद्धं
		न्न = न्न
2 ब	6	आसन्नलद्धपइभो
5 अ	8	चरणसंपन्नो
24 ब	3	जाइसंपन्नतादि
69 अ	5	पडुपन्न-तसकाइया
		न्य = न्न
56 अ	1	अन्नमन्नेहिं
76 अ	1	अन्नया
7 अ	9	अन्ने(दो बार)
69 अ	5	जहन्नपए
		ज्ञ = न, न्न
62 अ	2	नाणं
80 अ	8	नाणं
2 अ	5	नाणी
24 ब	3	नायव्वं
5 ब	2	नायव्वो
80 अ	8	अन्नाणओ
17 अ	5	अन्नाणिय
2 अ	5	अन्नाणी
2 ब	6	देसकालभावन्नू

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

16. आचाराङ्ग (मजैवि.) के शब्द-पाठों की हेमचन्द्राचार्य के प्राकृत व्याकरण के शब्दों के साथ तुलना

संस्कृत	आचाराङ्ग (मजैवि.)	सूत्र नं.	हैमव्याकरण, अ. 8
अर्थ	अट्ठ	33, 52, 68, 79 82, 119, 124, 147, 204, 205	अत्थ 1.7
अन्य	अण्ण	2, 13, 24, 35, 43, 51, 342, 374 430, 534, इत्यादि	अन्न 3. 58, 59, 61
कुतः	कुओ	145	कुदो 1. 37
नर्त	णट्ट	262	नट्ट 2. 30
नट	णड	151	नडं 1. 195
नप्त्री	णत्तुई	744	नत्तुओ 1. 137
नम	णम	191, 194, 754, 766	नम 1. 62, 183, 187; 2. 4, 4; 3. 46, 131
नर	णर	108, 140, 177, 754	नर 1. 67, 229
नव	णव	572	नव 2. 165; 3. 123
नख	णह	15	नह 1. 6, 7; 2. 90, 99
ज्ञान	णाण	146, 177, 182, 191	नाण 2. 104
नाम	णाम	170, 182, 192 743, 769, इत्यादि	नाम 2. 217
मन्य	मण्ण	114, 584	मन्न 1. 171

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

17 (अ) अर्धमागधी आगमों में मिल रहे मध्यवर्ती नकार के प्रयोग

(1) आचाराङ्ग (आगमोदय समिति संस्करण)
अनुगच्छंति 1. 5. 5. 161

(2) प्रो. आल्सडर्फ द्वारा सम्पादित ग्रंथ
(देखिए Ludwig Alsdorf : Kleine Schriften, Wiesbaden, 1974)

(अ) उत्तराध्ययन सूत्र से
मोनं 15. 1, सुमिनं 15. 7, सिनाणं 15. 8, भोजनं 15. 11, जवोदनं 15. 13

(ब) दशवैकालिक सूत्र से
न खने 10. 2, सुनिसियं 10. 2

17(ब) **हेमचन्द्राचार्य के प्राकृत व्याकरण** (पी. एल. वैद्य, सांगली, 1928) की शौरसेनी और मागधी में मध्यवर्ती 'नकार' की उपलब्धि

(i) शौरसेनी (8.4.260) पूरिद-पदिञ्ञेन मारुदिना

(ii) मागधी (8.4.289) धनुस्खण्डं

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

18. उत्तराध्ययन (मजैवि.) के शब्दों के साथ आचाराङ्ग (मजैवि.) के शब्दों की तुलना

उत्तराध्ययन		आचाराङ्ग	
नई	355, 664	णदी	505, 772
नदी	739, 1252		
नत्थि	77, 78, 94, 117, 135, 242, 456, 470, 649, 679, 743, 752, 917, 1093, 1094, 1443, 1518.	णत्थि	1, 78, 80, 129, 131, 133, 136, 137 138, 144, 146, 153 176, 200
नपुंसय	1503	णपुंसग	521
नपुंसग	1107, 1501		
नमंस	528, 969	णमंस	754
नर	6, 118, 276, 416, 424, 428, 432, 525, 566, 575, 741, 780, 993, 1244, 1266, 1279,1292,1305,1318, 1331,1391,1394,1415	णर	108, 140, 162 177, 191, 198 794
-नर-	1417	-णर-	754
नर-	418, 500		
नवणीय	1389	णवणीत	350
		णवणीय	421, 450, 597
निग्गंथी	1028	णिग्गंथी	553
निज्जरापेही	87	णिज्जरापेही	233
निट्ठियं	225	णिट्ठितं	390
निदाण	414, 434	णिदाण	584

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

उत्तराध्ययन		आचाराङ्ग	
निद्ध	1472	णिद्ध	176, 357
नियग	367, 800	णियग	64, 66, 67, 81
नियच्छ	500	णियच्छ	124
नियाग	750	णियाग	19, 443
निसण्ण	854	णिसण्ण	119
निसन्न	707		
नीयागोयं	1112	णीयागोए	75
अभिनिक्खंत	232	अभिणिक्खंत	181
नाण	211,582, 699, 813, 869, 930,982,1034 1042, 1065, 1066, 1074-75, 1094, 1099, 1116, 1161-62,1173,1236,1347, 1349,1452, 1518-19, 1717	णाण	146, 177, 182, 191, 769
-नाण-	178, 786,1089,1173		
नाणी	63	णाणी	119, 123, 134 135, 269
अमणुन्न	1164-65, 1255-57, 1269-70, 1282-83 1295-96, 1308-9 1321-22	अमणुण्ण	790
आसुपन्न	122	आसुपण्ण	201

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

उत्तराध्ययन		आचाराङ्ग	
मणुन्न	1147, 1164, 1165, 1255-56, 1269, 1282, 1295, 1308 1321	मणुण्ण	357, 400, 407, 408, 538, 790
मायन्न	53	मातण्ण	273
विन्नाय	850	विण्णाय	235, 464
समणुन्न	1257, 1270, 1283, 1296, 1309, 1322	समणुण्ण	4, 169, 190, 207, 208
सन्ना	1219	सण्णा	1, 70
दिन्न	168, 380	दिण्ण	337, 357, 405, 598, 749
पडुप्पन्न	1114	पडुप्पण्ण	132, 522
धन्न	353, 430, 634, 1442	धण्ण	740
मन्नमाण	123, 535	मण्णमाण	66, 73, 94, 150, 169, 190, 193
सुन्नगार	70, 1437	सुण्णगार	204, 279
समन्नागय	1144	समण्णागत	194

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

19. इसिभासियाइं (शुब्रिंग, अहमदाबाद) के शब्दों के साथ आचाराङ्ग (मजैवि.) के शब्दों की तुलना

इसिभासियाइं (ऋषिभाषितानि)		आचाराङ्ग	
अट्टालक	35, 17, 21	अट्टालय	660, 677
-साधारण-	25, पृ. 55.1	-साहारण	243
	35, पृ. 77. 16	साहारण	399
अनल	24. 24	अणल	570
दिन्नं	2. 1	दिण्णं	337, 357, 405, 598, 749
समन्नागत	22, पृ. 43. 5, 6	समण्णागत	194

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

20. दशवैकालिकसूत्र (मजैवि.) के शब्दों के साथ आचाराङ्ग (मजैवि.) के शब्दों की तुलना

दशवैकालिकसूत्र		आचाराङ्ग	
तेगिच्छ	20	तेइच्छ	94, 307, 728
नगिण	327	णगिण	185
नत्थि	374, 456, 461, 542	णत्थि	1, 78, 80, 129, 131, 133, 136, 137, 138, 144, 146, 153, 176, 200
नमंस	1, 483	णमंस	754
नमोक्कार	206	णमोक्कार	766
नर	259,336,384,444, 472,490,497,559	णर	108, 140, 162, 177, 191, 198, 794
नाग	15, 455,553,549	णाग	761
-नाव	358	णाव	474, 478, 482, 485
नाव	369	णाव	476, 477, 479, 480, 481, 486
निक्खंत	448	णिक्खंत	20, 191, 264
निज्झा	442, 445	णिज्झा	49
निट्ठिय	371	णिट्ठित	390
नियट्ट	105	णियट्ट	191
नियाग	18, 311	णियाग	19, 443
निसन्न	137	णिसण्ण	119
निस्सेणि	180	णिस्सेणि	365
निस्सेस	202, 470	णिस्सेस	215, 219, 224, 228
निहे	528	णिहे	80, 89, 105, 133
नीय	485	णीय	75

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

दशवैकालिकसूत्र		आचाराङ्ग	
नेव	41-47, 392, 395, 420	णेव	17, 22
सासवनालियं	231	सासवणालियं	375
-नालियं	231, 234	णालिया	297, 444
अनियाणे	533	अणिदाण	142, 202
कट्ठनिस्सिय	524	उदयणिस्सिया	26
जगनिस्सिय	412		
जीवनिकाओ	40	जीवणिकाय	62, 745
छिन्न	53, 183, 373	छिण्ण	224, 228, 497, 604
निसन्न	137	णिसण्ण	119
मन्नंति	299, 329	मण्णति	114
		मण्णइ	584
नायपुत्त	262, 280, 283, 288	णायपुत्त	240, 263
परिन्नाय	27	परिण्णाय	9, 17, 29, 30, 31, 33, 47, 48, 53, 54, 55, 61, 61, 62, 62, 74, 78, 88, 92, 97,101, 104, 111, 121, 123, 140, 158, 160, 163, 173, 176, 184, 185, 188, 203, 259, 608
रन्न	44	रण्ण	202, 235

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

21. उत्तराध्ययनसूत्र (मजैवि. संस्करण) में 'नकार' के प्रयोग

प्रारंभिक नकार

निकसिज्जइ	1.4, 7		41,43,47,52,61,62
नरस्स	1.6	निसा(मि)मेत्ता	9.8, 11, 13, 17, 19, 23, 25, 27, 29, 31, 33, 37, 39, 41, 43, 45, 47, 50, 52
न	1.7, 11, 14(2), 18 (3), 19, 20, 21, 24, 25(3), 33 (3)	नमिं	9.11,17, 23, 27, 31, 37, 45, 50
निसंते	1.8	नत्थि	9.14
निरत्थाणि	1.8	निव्वावारस्स	9.15
निण्हवेज्ज	1.11	नगरं	9.20
नोकडे	1.11	निउण	9.20
नेव	1.17, 18, 19, 26	नगरस्स	9.28
नियायट्ठी	1.20	नराहिवा	9.32
निसिज्जा	1.21	नरस्स	9.48
न	1.34 (3), 40(4), 41, 42	निज्जिओ	9.56
निरत्थं	1.25, 26	नीरओ	9.58
निसीएज्ज	1.30	नमेइ	9.61
निक्खमे	1.31	नु	13.9
निच्चं	1.44	नामेणं	23.1
नमइ	1.45	नगरिं	23.3
नाम	8.1	नाम	23.4,8
नो	8.6, 10, 18, 19	नगर	23.4,8
निज्जाइ	8.9	नामं	23.6
निसेवए	8.12	नु	23.13, 24, 30
निट्ठियं	8.17	निसेज्जाए	23.17
नमी	9.2, 3, 8, 13, 19, 25, 29, 33, 39,	निसण्णा	23.18

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

न	23.24, 30, 53, 56, 60, 61,66, 71, 84
नाणाविह	23.32
निच्छाए	23.33
निज्जिया	23.35
निहंतूण	23.41
नेहपासा	23.43
नो	23.51
निगिण्हामि	23.56, 58
नाससि	23.60
नस्सामहं	23.61
नावा	23.70, 71(2), 72, 73
नाविओ	23.73
निरस्साविणी	23.71
नत्थि	23.81
निव्वाणं	23.83
नमो	23.85
निच्चं	23.88
निव्वेए	29.1102
निंदणया	29.1102
न	29.1103, 1136, 1137, 1139
निव्वेएणं	29.1104
निव्वेय	29.1104
निव्वत्तेइ	29.1105
नेरइय	29.1106
निरुंभइ	29.1106
निबंधेइ	29.1106
निज्जरेइ	29.1107
निव्वुयहियआए	29.1114
नो	29.1135 (5)
निंदणयाए	29.1108
नियत्तेइ	29.1109
नीयागोयं	29.1112
निबंधइ	29.1112
निवत्तेइ	29.1112
निरुद्धआसवे	29.1113
निरुंभइ	29.1115
निरइयारे	29.1118
निब्भए	29.1119
निच्चं...न	31.3 से 31.20

मध्यवर्ती नकार

अनुच्चे	1.30
सुनिट्ठिए	1.36
अनियमेत्ता	8.14
अभिनिक्खमई	9.2
अभिनिक्खंतो	9.4
अभिनिक्खंतम्मि	9.5
आणानिद्देसकरे	1.2
हियनिस्सेसाए	8.3
हियनिस्सेस	8.5
जगनिस्सिएहिं	8.10
तसनामेहिं	8.10
तवनारायजुत्तेणं	9.22

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

चक्खिदियनिग्गहे	29.1102
माया-नियाण-	29.1107
महानिज्जरे	29.1121
परिनिव्वायइ	29.1130
तित्थगरनामगोयं	29.1145

ज्ञ = न

प्रारंभिक

नच्चा	1.41, 45; 8.11, 19; 14.47
नाण-दंसण	8.3; 29.1116
नाउं	12.45
नायओ	13.23, 25
नाणं	23.33
नाणसंपन्ना	29.1102
नाणावरणिज्जं	29.1117, 1120

ज्ञ = न्न

मध्यवर्ती

पन्नेणं	8.20
जन्नवाडं	12.3
रन्नो	12.20
भूइपन्ना	12.33
परिन्नाय	12.41
जन्नसिट्ठं	12.42
पन्ने	15.2, 15
अणुन्नाओ	19.85, 86
महापन्ने	22.15
सव्वन्नू	23.1
जन्न	25.1, 4, 5, 7, 11,14,16,18,36
विन्नाय	23.14
अणुन्नाए	23.22
पन्ना	23.25, 26, 28, 34, 39, 46, 49, 54, 59, 64, 69, 74, 79, 85
विन्नाणेणं	23.31
पइन्ना	23.33
पडिरूवन्नू	23.15

न्न = न्न

संपन्ने	1.2; 29.1116
आसन्ने	1.34
पडिछन्नम्मि	1.35
सुच्छिन्ने	1.36
अवसन्नो	13.30
संताणछिन्ना	14.41
निदाणछिन्ने	15.1
छिन्नं	15.7
समुपन्नं	19.7
समुपन्ने	19.9
भिन्नो	19.56
-संपन्ना	22.7
समुप्पन्ना	23.10
-पवन्नाणं	23.13, 14
छिन्नो	19.56; 23.28, 34, 39 46, 49, 54, 59, 64, 68, 74, 79, 85

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

भिन्ना	23.53
छिन्ने	23.86
संपन्नया	29.1102
पडिवन्ने	29.1104, 1106, 1107
पडुपन्न	29.1114
सन्निरुद्ध	27.16
सन्निभे	22.30
किन्नरा	23.20
निन्नेसु	12.12
दिन्ना	12.21
निन्नेहा	14.49

न्य = न्न

मन्नई	1.28
मन्नइ	1.38, 39
अन्नेसिं	1.33
धन्नं	13.24
धन्न	19.30
कन्नं	22.6, 8
कन्ना	22.7
मन्नसी	23.65, 80
अन्नो	23.34, 39, 46, 49, 54, 59, 64, 69, 74, 79
अन्ने	29.1106

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

21. दशवैकालिकसूत्र (मजैवि. संस्करण)

प्रारंभिक 'न' कार

नमंसंति	1.1
नाणापिंडरया	1.5
निवारए	2.1
निस्सरई	2.4
निहुओ	2.8
नारिओ	2.9
नागो	2.10
निग्गंथाण	3.1, 10; 6.4
नियागं	3.1
नाली	3.4
निग्गंथा	3.11; 6.10, 16, 25
नीरया	3.14
नाम	4.1, 2
नेरइया	4.9
निंदामि	4.10, 11, 12, 13, इत्यादि
निव्विंदए	4.39
निरुंभित्ता	4.46
नीरओ	4.47
निसीएज्ज	5.2.8
नीयं	5.2.25
नेव्वाणं	5.2.32
नरयं	5.2.48
निउणा	6.8
निच्चं	6.22
निसेज्जा	6.54, 56, 59
नगिणस्स	6.64

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

नामेइ	7.4
नरो	7.5
निस्संकियं	7.10
नत्तुणिए	7.15
नामधेज्जेण	7.17
नंगलं	7.28
नाभी	7.28
नावाहिं	7.38
नत्थि	7.43
नरं	7.53
निद्धुणे	7.57
नरेणं	9.3.6
न	1.2,4; 2.1, 4, 6; 4.10(4), 35 (2); 5.2.8, 9; 6.5, 18, 20, 25, 26, 34, 36, 37; 7.8; 11.14; 12.9 इत्यादि, इत्यादि.
नो	2.4; 5.1.111; 5.2.29; 6.9, 11, 14 इत्यादि, इत्यादि.
नेव	4.10-13 इत्यादि, इत्यादि.

मध्यवर्ती नकार

अनिल	6.36
अनिलेण	10.3
गिहंतरनिसेज्जा	3.5
तत्तानिव्वुडभोइत्तं	3.6
पंचनिग्गहणा	3.11
परिनिव्वुडा	3.15
जीवनिकाओ	4.9

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

जीवनिकायाणं	4.10
विणयनासणो	8.37

उपसर्ग के साथ

अनिव्वुडं	5.2.18
सुनिट्ठिए	7.41
अनियाणे	10.13

न्य = न्न

अन्ने	4.11, 12, 13; 7.16
अन्नं	4.11, 12, 13,18; 5.1.115; 6.11
अन्नत्थ	4.4.8
अन्नेहिं	4.10
अन्नस्स	5.1.111
अन्नत्थ	6.5
अन्नयरे	6.7
मन्ने	6.18
अन्नयरं	6.32
मन्नंति	6.36, 66
अन्नेण	7.13

न्न = न्न

अदिन्नादाणाओ	4.13
अदिन्नादाणं	4.13
अदिन्नं	4.13
समावन्नो	5.2.2
उप्पन्ने	5.2.3
दिन्ने	5.2.13
उववन्नो	5.2.47
-संपन्नं	6.1(2)
पच्चुप्पन्न	7.8-10
सुछिन्ने	7.41
समुप्पन्ने	7.46
समुप्पन्नं	7.49

ज्ञ = न

नाणं	4.33, 44
नायपुत्तेण	5.2.49
नाण	6.1
नच्चा	7.36; 9.12

ज्ञ = न्न

परिन्नाया	3.11
धम्मपन्नत्ती	4.1.3
सुपन्नत्ता	4.2, 3
गइविन्नाया	4.9
अन्नाणी	4.33
पन्नवं	7.7
अन्नायउंछं	9.3.4

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

23 वसुदेवहिंडी, खंड 1 (पृ. 1-16)

प्रारंभिक न = न

न
नमो
नाम
नयरं
निरु वहय
निवेइय
नवसु
निज्जाओ
नमिऊण
निग्गया
निरत्थओ
निव्वत्ते
निअग
नागरया
नववहू
निच्चिट्ठा
नरग
निव्वेय
निवेदिओ
नासेज्ज
नपुंसगो
नियमो
नत्थि
निरामया
नावाउ
निक्खिवइ
नच्चणेहिं
नाइदूर
निरंतराणि
निव्वाण
नाणा

अपवाद न=ण

णाए, णेण
णिवयंति
णिसन्न

मध्यवर्ती न=न

पंचनमोक्कार
जंबुनाम
कमलानिलओ
वित्थिन्ननयण
जलधरनिनादं
गमणनिच्छए
पियनिमित्तं
पडिनियत्ता
कयनमोक्कारे

प्रारंभिक ज्ञ = न

नाणं
नाणी

मध्यवर्ती ज्ञ = न, न्न

ओहिनाणं
विन्नवेमि
सम्मन्नाणं
अविन्नायं
अन्नाणेणं
साभिन्नाणं

अपवाद ज्ञ=ण्ण

विण्णत्ता
कलाविहण्णू
रण्णा

न्य=न्न

धन्न
अन्नेन
जहन्न
मन्नसि
मन्ने

न्न = न्न

समुप्पन्न
पसन्न
दिन्नं
परिच्छिन्न
समावन्नो
पडिवन्नं

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

24 पउमचरियं (अध्याय 1, 2, 3)

प्रारंभिक न = न
नमि
नेमि
नमंसामि
नामावलि
निग्गओ
न
नरा
नवरं
नियय
निम्मविया
नालियर
नयणा
नवघडिया
निसामेह
नीसेसं
नगर
नड
नाणा-
निवो
नरवइ
नत्थि
नरिन्द
नयण
नह
निद्ध
निम्मल
नाह
नाडय
नच्चन्ति
निग्गन्थ
नियम
निरोग
नट्टं
निव्वाण
नरयं
निस्सील
नियय
निद्दं
निहओ
निग्गअ
निच्च
नाभिगिरी
नीइ
निम्मलं
निस्सङ्गो
नगवर

मध्यवर्ती न = न
तियसनाहं
धणनिवह
नडनट्ट
-निच्चंनच्चन्त-
भमरनिभनिद्ध-
सलिलनिही
सुरनिकाय
-सरनिनाय-
नवनउइ
महानईओ
सीहनाएणं
-जलनिवह
हरिनउल-
मेहनिग्घोस
रायनीइ
विनडिउं
इन्दनील
किंनिमित्तेणं

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

प्रारंभिक ज्ञ=न

नाऊण

नाणेण

नज्जइ

नायव्व

नाणेसु

मध्यवर्ती ज्ञ=न, न्न

तिकालनाणं

केवलनाणं

विन्नाण

विन्नप्पं

न्य = न्न

अन्ने

धन्न

अन्नया

कन्ना

अन्नोन्न

मन्नइ

न्न = न्न

किन्नर

समुप्पन्नं

उन्नय

संपन्न

उब्भिन्न

उप्पन्न

भिन्न

छिन्न

वोच्छिन्न

सन्निवेस

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

विभाग-3

(Ācārāṅga Linguistically Re-edited)

आचाराङ्गसूत्र के प्रथम श्रुतस्कंध के प्रथम अध्ययन का
भाषिक दृष्टि से उपलब्ध प्राचीन शब्दरूपों के
आधार पर पुनः संपादन

Revised Edition of the First Chapter of the
First Part of the Ācārāṅga on the basis
of Available Archaic Word-forms.

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

विभाग-३ का शुद्धि-पत्रक

पृष्ठ	पंक्ति	अशुद्ध	शुद्ध
83	1	भवस्सामि	भविस्सामि
87	3	कम्मसमारभ्भा	कम्मसमारम्भा
89	2	कम्मसमारभ्भा	कम्मसमारम्भा
87		पादटिप्पण नं. 48	निकाल दो
91	5	लज्जामाना	लज्जमाना
92		पादटिप्पण 14 में से	'मधु' को निकाल दो
93	21	समाम्भावेइ	समारम्भावेइ
102	2	-समारभ्भा	-समारम्भा
104	9	-समारभ्भेण	-समारम्भेण
108	3	-समारभ्भेण	-समारम्भेण
111	3	मेघावी	मेधावी
112	2	समारभ्भन्ते	समारम्भन्ते
125		पादटिप्पण नं. 13	निकाल दो

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

पढमे उद्देसगे*

1. सुतं[1] मे आउसन्ते! णं[2] भगवता[3] [4]एवमक्खातं[5] —

---

* शीर्षक मूल अर्धमागधी भाषा के अनुरूप बनाये गये हैं - संपादक

1.	सुयं	मजैवि.
	सुतं	आचा.1.4.1.133; 5.2.155
		आचाचू. (पृ. 8.13)
		सूत्रकृ. 1.4.1.269 एवं चूपा.; 9.460, 15.622 (दो बार)
	- सुतं	
	(अहासुतं)	आचा. 1.9.1.254
		सूत्रकृ. 1.6.353
	सुत-	
	(सुत-सील-बुद्धिए)	दशवै. पाठा. अचू. वृद्ध. 9.1.467
	सुता	सूत्रकृ. 1.5.1.307
		ऋषिभा. 22.6
	-सुता	
	(विस्सुता)	ऋषिभा. 24.7, 9; 45.21
2.	आउसं तेणं	मजैवि.
	आउसंतेणं	आचा. 2.7.2.635; पाठा. चूपा. 1.1.1.1, पाटि. 2

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

सूत्रकृ. 2.2.694; 2.3.722; 2.4. 747; पाठा. 2.1.638 (पृ. 121.14)

आउसे — सूत्रकृतांग की चूर्णि में सूत्रकृ. (2.6.51, पाटि. 4) से एक '**आउसे**' पाठ उद्धृत किया गया है। यह मागधी का रूप है ओर प्राचीन भी। वैसे संबोधन के लिए '**आउसो**' और '**आउसन्तो**' पाठ ही मिलते हैं और जहाँ पर भी '**आउसं**' पाठ मिलता है उसके साथ '**तेण**' या '**तेणं**' शब्द भी मिलता है। सूत्रकृतांग के चूर्णिकार '**आउसे**' को इस प्रकार समझाते हैं-'**आउसे त्ति हे आयुष्मन्तः**'। इस (सूत्रकृ. पृ. 232) से स्पष्ट है कि '**आउसे**' पाठ '**आउसो**' का मागधी रूप है, उसी न्याय से '**आउसन्तो**' का मागधी रूप '**आउसन्ते**' होता है। अतः भाषिक दृष्टि से और आचारांग की भाषा की प्राचीनता को ध्यान में रखते हुए मूल पाठ इस प्रकार बनता है '**आउसन्ते णं**' जिसमें '**णं**' अव्यय है। संबोधन का प्रचलित रूप '**भंते**' भी '**आउसन्ते**' पाठ की ही पुष्टि करता है। हस्तप्रतों की लेखन-पद्धति शब्द-विच्छेद रहित होने के कारण प्राचीन पाठ भुला दिया गया और उसके बदले में '**आउसंतेणं**' और '**आउसं तेण**' पाठ प्रचलित हो गये और फिर उनके कल्पनाके बल पर अर्थ समझाये जाने लगे। इस '**आउसन्ते णं**' पाठ में अप्रस्तुत अर्थ की कोई कल्पना करने की आवश्यकता नहीं रहती (विस्तृत चर्चा के लिए देखिए मेरा लेख '**अर्धमागधी भाषा में सम्बोधन का एक विस्मृत शब्द-प्रयोग 'आउसन्ते'**', श्रमण, पार्श्वनाथ विद्यापीठ, वाराणसी, 5, जुलाई-सितम्बर 1995)

3. **भगवया** — मजैवि.

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

	भगवता	आचा. 1.1.1.7, 1.2.13, 1.3.24, 1.4.35, 1.5.43, 1.6.51, 1.7.58; 2.5.89, 6.3.187, (पृ. 64.1), 8.4.214 (पृ. 77.2), 8.5.217 (पृ. 78.4), 219 (पृ. 79.7), 8.6.222, 223 (पृ. 81.2)
		आचा. पाठा. चूपा. 2.7.2.635, पाटि. 2
		सूत्रकृ. 2.1.638 (पृ. 121.4), 1.679, 2.694, 3.722, 4.747 (पृ. 210.1, 6), 4. 749 (पृ. 211.9, 12; 212.10), 4.751 (पृ. 213.5, 17), 4.752 (पृ. 215.4), 4.753 (पृ. 215.9; 216.6)
4.	अक्खायं	मजैवि.
	अक्खातं	आचा. पाठा. चूपा. 1.6.4.190, पाटि. 7
		सूत्रकृ. 2.2.694, 3.722, 738 (पृ. 206.2), 4.747
		उत्तरा. पाठा. चूपा. 5.147, पाटि. 21
	-अक्खातं	
	(पुरक्खातं)	सूत्रकृ. 2.3.723 (पृ. 195.8)
	(सुअक्खातं)	सूत्रकृ. पाठा. चूपा. 1.15.609, पाटि.7
	(सुयक्खातं)	सूत्रकृ. 2.1.650 (पृ. 132.1)
	-अक्खात-	
	(सुअक्खातधम्मे)	आचा. 1.6.3.187 (पृ. 63.2)
	अप्पडिहतापच्च-क्खातपावकम्मा)	ऋषिभा. 25 (पृ. 53.8)
	अक्खाता	आचा. पाठा. चूपा. 1.6.4.190, पाटि.7,
		सूत्रकृ. 1.4.2.296; पाठा. चूपा. 2.1.652, पाटि.11 (पृ. 132.26)

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

-अक्खाता

(वियक्खाता) आचा. 1.5.6.174

अक्खाताइं आचा. 2.4.1.522 (पृ. 191.2)

सूत्रकृ. 2.2.694 (पृ. 152.11), 2.717

अक्खाते आचा. 2.15.775, पाटि. 6 (सूत्रकृ. चूपा. दो बार)

सूत्रकृ. 1.9.437, 11.497; 2.4.747, 751 (पृ. 213.17), 752 (पृ. 215.4), 753 (पृ. 216.7)

-अक्खाते

(सुअक्खाते) आचा. 1.8.1.201

(सुयक्खाते) सूत्रकृ. 2.1.652

5 (क) **'सुयं मे आउसंतेणं भगवया एवमक्खायं'**—आचा. 2.7.2.635

(ख) **'...सुयं मे आउसंतेण भगवता...'**—आचा. पाठा. चूपा. 2.7.2.635, पाटि. 2

(ग) **'सुयं मे आउसंतेण भगवता एवमक्खायं'**—सूत्रकृ. 2.1.638 (पृ. 121.5)

(घ) **'सुयं मे आउसंतेणं भगवता एवमक्खातं'**—सूत्रकृ. 2.3.722, (पृ. 194.3)

(च) **'सुतं मे आउसंतेणं भगवता एवमक्खातं'**—सूत्रकृ. 2.2.694 (पृ. 152.3)

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

[6]इधमेकेसिं[7] नो[8] सन्ना[9] भवति, तं अधा[10] — पुरत्थिमातो

6.	इहमेगेसिं	मजैवि.
	इध	आचा. पाठा. 1.2.6.101, पाटि.22, प्रति खं, खे, जै; 5.2.153, पाटि. 10, प्रति. खं, इ.
	इधं-	आचा. पाठा. 1.2.1.64, पाटि. 12, प्रति खं. ऋषिभा 30.1
7.	-एकेसिं	आचा. पाठा. 1.1.1.1, पाटि. 3. प्रति. सं, हे 1, 2; 1.2.14, पाटि.1, प्रति सं, शां, खं, खे, जै; 1.3.25, पाटि. 14, प्रति सं. शां, खं, हे 1, 2, ला, ला 1; 2.1.64, पाटि. 12, प्रति खं, खे, जै; 2.4.82, पाटि. 2, प्रति सं, खं, खे, जै; 2.5.87, पाटि. 22, प्रति खं, खे, जै.
8.	णो	मजैवि.
	नो	शु, जैविभा; आचा. प्रति* खं 1; प्रति संदी. 1.8.2.207, 7.225; 2.1.1.331, 2.335, इत्यादि आचा. 1.6.1.178, 8.5. 219 (पृ. 79.5); 2.2.502, 554, 583 (6 बार), 584 (4बार), 592, 614, 616, 627, 631, 679, 680, 687 (4 बार); पाठा. 2.3.1.473, 474, 3.2.502, 3.3.517, 15.778 (3 बार); पाठा. 787, पाटि. 15 (स्था., समवा.); 2.3.1.464. पाटि. 1 (निशीथचू.); **'नो सन्ना भवति'** आचा.चू. पृ. 10.5 सूत्रकृ. 1.1.1.16, 1.2.44, 2.2.119, 123, 133 (दो बार), 2. 3.158, 4.1.251 (3 बार), 7.407, 9.463, 10.474, 479, 496 (दो बार), 14.598 (दो बार), 600 (दो बार), 16.633; 2.1.649, 653 (दो बार), 655, 664, 669, 672 (3 बार), 2.2.713,

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

		718, 719 (3 बार), 721 (3 बार), 2.4.748, 750, 753, 2.7.847, 853, 855 (दो बार), 857
		पाठा. 1.2.1.106, पाटि. 8, प्रति खं 1, 2, पु 2; 2.1.665 पाटि. 21, प्रति पा, पु 2, ला, सं; 672, पाटि. 3, प्रति खं 2; 2.2.696, पाटि. 8 (दो बार), 714, पाटि. 9, प्रति पा, पु 2, ला, सं; 2.7.846, पाटि. 18.
		उत्तरा. अनेक बार, देखो उसकी शब्दसूची
		ऋषिभा. 3 (पृ. 5.21), 9 (पृ. 17.8), 11 (पृ. 23.23), 21 (पृ. 41.1, 2)
9.	**सण्णा**	मजैवि.
	सन्ना	शु.
		आचा. प्रति* पू ,जे, ला.
		आचाचू. (पृ. 9.13) **भावसन्ना**, (पृ. 9.14) **-नाणसन्ना** (चार बार)
		सूत्रकृ. 1.2.1.98
	-सन्नाणं	उत्तरा. 31.1219
10.	**जहा**	मजैवि.
	अधा	आचा. पाठा. 2.11.673, पाटि.5, प्रति खं, इ.
	(अधातधा)	आचा. पाठा. 1.4.4.146 (पृ. 45), पाटि.4, प्रति खं, खे, जै.
(अधापरिग्गहियातिं)		आचा. 2.5.2.581, पाटि.16, प्रति खं.
(अधाकडं)		सूत्रकृ. पाठा. 1.10.480, पाटि.3, चूपा.
(अधाबुइताइं)		सूत्रकृ. 14.604, पाटि. 1, चूपा.
(अधाकम्मं)		सूत्रकृ. 2.5.761, पाटि. 6, चूपा.
(अधासच्चमिणं)		ऋषिभा. 30 (पृ. 65.18),

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

वा दिसातो आगतो अहमंसि, दक्खिणातो[11] वा दिसातो[12] आगतो अहमंसि, पच्चत्थिमातो वा दिसातो आगतो अहमंसि, उत्तरातो वा दिसातो आगतो अहमंसि, उड्ढातो वा दिसातो आगतो अहमंसि, *अधेदिसातो वा आगतो अहमंसि, अन्नतरीतो दिसातो वा अनुदिसातो[13] वा आगतो अहमंसि । एवमेकेसिं[14] नो[15] नातं[16] भवति— अत्थि मे

---

11. **दाहिणाओ** मजैवि.

(पंचमी एक वचन के लिए -तो विभक्ति वाले अनेक प्राचीन प्रयोग स्वयं मजैवि. के आचाराङ्ग के संस्करण में ही उपलब्ध हो रहे हैं । अतः उसके स्थान पर -**ओ** विभक्ति को अपनाना उपयुक्त नहीं ठहरता ।)

दक्खिणातो आचा. 1.1.1.2 में '**दक्खिण**' शब्द ही प्रयुक्त है ।

सूत्रकृ. 2.1.640 (पृ. 123.4) में '**दक्खिणातो**' शब्द का प्रयोग मिलता है (**दक्खिणातो दिसातो आगम्म**) ।

12. **दिसाओ** मजैवि.

(देखिए ऊपर पाटि. नं. 11)

13. **अणुदिसातो** मजैवि.

(देखिए ऊपर पाटि. नं. 11)

14. **एवमेगेसिं** मजैवि.

एवमेकेसिं आचा. प्रति* पू, जे.

15. **णो** मजैवि.

नो शु.

सूत्रकृ. 1.1.16

* आगे पृष्ट ८३ पर देखो.

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

आता[17] ओववादिए[18], नत्थि[19] मे आता[20] ओववादिए[21] ? के

16.	णातं	मजैवि.
	नायं	शु.
	नातं	आचा. प्रति* पू, जै.
17.	आया	मजैवि.
	आता	आचा. 1.5.5.171 (तीन बार)
		सूत्रकृ. 2.1.649, 650 (दो बार)
		ऋषिभा. 5.2.4; 15.17; 26.7, 8; 32.2; 44 (पृ. 93.27); 45.10
	आता-	
	(आतावादी)	आचा. 1.5.5.171
	(आतोवरता)	आचा. 1.4.4. 146
	(आतोवरताणं)	आचा. 1.4.4. 146
	(आतापज्जवे)	ऋषिभा. 20 (पृ. 39.11)
	आतवं	आचा. 1.3.1.107
	आतबले	आचा. 1.2.2.73
18.	उववाइए	मजैवि.
	उववादिए	आचा. पाठा. प्रति सं, खं.
	ओववाइए	जैविभा.
		आचा. पाठा. प्रति शां, इ.
	ओववादिए	आचा. पाठा. प्रति खं, जै.
		आचा. पाठा. पृ.2, पाटि.1 'उववादी = संसारी' चू.
19.	णत्थि	मजैवि.
	नत्थि	आगमो, शु.
		आचा. प्रति* पू, जे.
20.	आया	मजैवि.
	आता	आचा. प्रति* खं 1

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

अहं आसी, के वा इतो[22] चुते इध[23] पेच्चा भवस्सामि ?

21.	उववाइए	मजैवि.
	उववादिए	आचा. प्रति* खं. 3
	ओववाइए	जैविभा.
	ओववादिए	आचा. पाठा. प्रति खं, जै.
22.	इओ	मजैवि.
	इतो	सूत्रकृ. 1.1.1.12; 10.481; 15.624; 2.1.682 **(इतो चुते पेच्चा देवे सिया)**
		ऋषिभा. 25 (पृ. 53. 12, 24)
23.	इध	नास्ति मजैवि.
	इह	शु, आगमो, जैविभा.
		आचा. पाठा. प्रति खं, हे 1, 3, इ, ला, एवं शी.
	इध	आचा. पाठा. 1.2.1.64, (पाटि. 12), प्रति खं; 6.101, पाटि. 22, प्रति खं, खे, जै.; 5.2.153, (पाटि. 10), प्रति. खं, इ.
		ऋषिभा. 30.1

* अन्य दिशाओं सम्बन्धी जो शैली है उसके अनुसार 'अधे' और 'अनु' के लिए निम्न प्रकार का पाठ उपयुक्त होगा —

'अधे वा दिसातो आगतो', 'अन्नतरीतो वा दिसातो अनु वा दिसातो आगतो'

जैविभा. का पाठ है - **'अहे वा दिसाओ'**

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

2. से ज्जं पुन[24] जानेज्जा[25] सहसम्मुतिया[26] परवागरणेन[27] अन्नेसिं[28]

---

24. पुण मजैवि.
25. जाणेज्जा मजैवि.
26. सहसम्मुइयाए मजैवि.
    सहसम्मुइया उत्तरा. 28.1081 (**सहसम्मुइयाऽऽसव-संवरे**)
    सहसम्मइया आचा. (आगमो.) शीलाङ्कवृत्ति (पृ. 20), निर्युक्ति गाथा 67 (**सहसम्मइया जाणइ**)
    सह संमइआ आचा.(आगमो.) शीलाङ्कवृत्ति (पृ.20), निर्युक्ति गाथा 65 (**इत्थ य सह सम्मइअत्ति जं एअं तत्थ जाणणा होई**)
    सहसम्मुतियाए आचा. 1.8.2.205
    सह सम्मुतियाए आचा. पृ. 2, पाठा. चूपा. पाटि. 12 (इस शब्द की तुलना कीजिए अशोक के शिलालेखों के शब्द '**मुति**' के साथ और पालि भाषा के सुत्तनिपात के तृतीया ए.व.के शब्द-रूप '**सम्मुतिया**' के साथ । आचारङ्ग में '**-या**' प्राचीन विभक्ति प्रत्यय है । साथ साथ जो प्राकृत भाषा का '**ए**' प्रत्यय भी हस्तप्रतों में मिलता है वह परवर्ती काल में भ्रम से जोड़ा गया प्रत्यय है ।)
    सह सम्मुइए आचा. पृ. 2, पाठा. पाटि. 12, प्रति शीजै.
    सहसम्मइए आचा. पृ. 2, पाठा. पाटि. 12, प्रति शीखं.
27. परवागरणेणं मजैवि.
28. अण्णेसिं मजैवि.
    अन्नेसिं शु.
    आचा. प्रति* ला.
    आचा. पाठा. 1.8.7.227, पृ. 83, पाटि. 6, चूपा. 1.1.1.2, पाटि.13, पञ्चा. वृ. 1.34
    सूत्रकृ. 1.9.23; 2.1.690, 708 (पृ. 166.3)
    उत्तरा. 1.33

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

वा अन्तिए[29] सोच्चा, तं अधा[30] —

पुरत्थिमातो वा दिसातो आगतो अहमंसि एवं दक्खिणातो[31] वा पच्चत्थिमातो[32] वा उत्तरातो[33] वा उड्ढातो[34] वा अधे[35] वा अन्नतरीतो[36] वा दिसातो[37] अनु वा दिसातो[38] आगतो अहमंसि ।

एवमेकेसिं[39] नातं[40] भवति—

		ऋषिभा. 36 (पृ. 81.3)
		(हेमचन्द्राचार्य के प्राकृत व्याकरण में '**अन्य**' शब्द का प्राकृत रूप '**अन्न**' ही मिलता है, उसके स्थान पर '**अण्ण**' नहीं है ।)
29.	**अंतिए**	मजैवि.
	अन्तिए	शु.
		आचा. प्रति* खं 3, ला.
30.	**जहा**	मजैवि.
31.	**दक्खिणाओ**	मजैवि.
32.	**पच्चत्थिमाओ**	मजैवि.
33.	**उत्तराओ**	मजैवि.
34.	**उड्ढाओ**	मजैवि.
35.	**अहाओ**	मजैवि.
		(देखिए पीछे सूत्र. नं. 1 का पाठ '**अधे वा दिसातो**')
36.	**अन्नतरीओ**	मजैवि.
37.	**दिसाओ**	मजैवि.
38.	**अणुदिसाओ**	मजैवि.
39.	**एगेसिं**	मजैवि.
	एकेसिं	आचा. प्रति खं 1, खं 3. प्रति* पू, जे, ला.
40.	**णातं**	मजैवि.
	नायं	शु.
		आचा. प्रति* पू, जे, ला.

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

अत्थि मे आता[41] ओववादिए जे[42] इमाओ दिसाओ वा अनुदिसाओ[43] वा अनुसञ्चरति[44] सव्वाओ दिसाओ सव्वाओ अनुदिसाओ सेऽहं[45] ।

3. ॥ से आतावादी[46] लोकावादी[47]
कम्मावादी किरियावादी ॥

41.	आया	मजैवि.
42.	उववाइए जो	मजैवि. } जैसे 'से' वैसे 'जे'
	ओववाइए जो	जैविभा. }
		आचा. पाठा. 1.1.1.2., पाटि. 17, प्रति इ.
	उववादिते	प्रति सं, शां.
	उववादिए	प्रति खं, प्रति* खं 1.
	तोववादिते	प्रति जै.
43.	अणुदिसाओ	मजैवि.
44.	अणुसंचरति	मजैवि.
45.	से	पिशल के प्राकृत व्याकरण (423) के अनुसार 'सो' प्रयोग गलत है। अतः उसके स्थान पर तथा अन्य सूत्रों (गद्य) में भी 'से' का प्रयोग ही उपयुक्त माना जाना चाहिए।
46.	आयावादी	मजैवि.
	आतावादी	आचा. 1.5.5.171 **'एस आतावादी समियाए परियाए वियाहिते त्ति बेमि'**
		आचा.चू. **'से आतावादी लोगावादी'** (पृ. 12.6)
47.	लोगावादी	मजैवि.
	लोकावादी	आचा. पाठा. 1.1.1.3, पाटि. 4, प्रति खं. जै. हे 1, प्रति* खं. 3
	लोकावाई	प्रति* पू, जे, ला.

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

4. अकरिस्सं चऽहं,काराविस्सं चऽहं, करओ यावि[48] समनुन्ने[49] भविस्सामि ।

5. एतावन्ति[50] सव्वावन्ति[51] लोकंसि[52] कम्मसमारम्भा[53] परिजानितव्वा[54] भवन्ति[55] ।

48.	आवि	आगमो.
49.	समणुण्णे	मजैवि.
	समणुन्ने	शु, आगमो.
50.	एयावंति	मजैवि.
	एतावंति	आचा. 1.1.1.8; 1.5.6.176 (पृ. 57.8)
	एतावंती	आचा. पाठा. 1.1.1.8, पाटि. 19, प्रति खं, हे 3, इ.
	एतावंतं	सूत्रकृ. 1.11.506
	एयावन्ती	शु.
51.	सव्वावंति	मजैवि.
	सव्वावन्ती	शु.
52.	लोगंसि	मजैवि.
	लोकंसि	आचा. पाठा. 1.1.1.8, पाटि. 20, प्रति* जे, सं, हे 1, 2, ला.
	(सव्वलोकंसि)	आचा. 1.4.3.140
		ऋषिभा. 21 (पृ. 39.24)
53.	कम्मसमारंभा	मजैवि.
	कम्मसमारम्भा	शु.
54.	परिजाणितव्वा	मजैवि.
55.	भवंति	मजैवि.
	भवन्ति	शु.

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

6. अपरिन्नातकम्मे[56] खलु अयं पुरिसे जे इमाओ दिसाओ वा अनुदिसाओ[57] वा अनुसञ्चरति,[58] सव्वाओ दिसाओ सव्वाओ अनुदिसाओ[59] सहेति, अनेकरूवाओ[60] जोनीओ[61] सन्धेति[62], विरूवरूवे फासे पडिसंवेदयति ।

7. तत्थ खलु भगवता परिन्ना[63] पवेदिता—

इमस्स चेव जीवितस्स[64] परिवन्दन[65]-मानन[66]-पूजनाए[67]

56.	अपरिण्णायकम्मे	मजैवि.
	अपरिन्नायकम्मे	शु.
	परिन्नाता	ऋषिभा.3 (पृ. 7.18)
	अपरिण्णाता	आचा. 1.1.2.16, 1.4.38, 1.5.46, 1.7.60
	अहापरिण्णातं	आचा. 2.2.3.445, 7.2.621
	अपरिण्णाते	आचा. 1.5.1.149
	परिण्णातकम्मे	सूत्रकृ. 2.1.678, 692
57.	अणुदिसाओ	मजैवि.
58.	अणुसंचरति	मजैवि.
59.	अणुदिसाओ	मजैवि.
60.	अणेगरूवाओ	मजैवि.
	(अणेकजम्म-जोणीभयावत्तं)	ऋषिभा.3 (पृ.5.16)
61.	जोणीओ	मजैवि.
62.	संधेति	मजैवि.
63.	परिण्णा	मजैवि.
	परिन्ना	शु.
64.	जीवियस्स	मजैवि.
	जीवितस्स	आचा. 1.1.3.24, 1.6.4.191 (पृ.65.15)
	जीवितं	आचा. 1.2.1.66, 2.3.78, 3.4.129, 5.1.148

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

-जाति[68]-मरण-मोयनाए[69] दुक्खपडिघातहेतुं—

8. एतावन्ति[70] सव्वावन्ति[71] लोकंसि[72] कम्मसमारम्भा[73] परिजानितव्वा[74] भवन्ति[75] ।

65.	परिवंदण	मजैवि.
	परिवन्दण	शु.
66.	माणण	मजैवि.
67.	पूयणाए	मजैवि.
	पूजणाए	सूत्रकृ. पाठा. 2.1.652, पाटि. 15, चूपा.
	पूजयामु	सूत्रकृ. 1.3.2.198
	पूजियं	दशवै. पाठा. वृद्ध. 5.2.256
68.	जाती-	मजैवि.
	जाति-	आचा. पाठा. 1.1.6.51, पाटि. 5, प्रति सं, खं, खे, जै, इ. आचा. पाठा. 1.1.7.58, पाटि. 2, प्रति जै.
	जाइ-	शु.
	जाइ-	आचा. पाठा. 1.1.1.7, पाटि.17, प्रति हे 3, खं. प्रति* खं 3, पू, ला.
69.	मोयणाए	मजैवि.
70.	एतावंति	मजैवि.
	एयावन्ती	शु.
71.	सव्वावंति	मजैवि.
	सव्वावन्ती	शु.
72.	लोगंसि	मजैवि.
	लोकंसि	आचा. पाठा. 1.1.1.8, पाटि. 20, प्रति सं, जे, हे 1, 2, ला, प्रति* पू, जे, ला.

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

9. जस्सेते लोकंसि[76] कम्मसमारम्भा[77] परिन्नाता[78] भवन्ति[79] से हु मुनी[80] परिन्नातकम्मे[81]

त्ति बेमि ।

। सत्थपरिन्नाए पढमे उद्देसगे समत्ते[82] ।

	लोकम्मि	प्रति* खं. 1
73.	**कम्मसमारंभा**	मजैवि.
	कम्मसमारम्भा	शु.
74.	**परिजाणियव्वा**	मजैवि.
75.	**भवंति**	मजैवि.
	भवन्ति	शु.
76.	**लोगंसि**	मजैवि.
	लोकंसि	आचा. पाठा. 1.1.1.9, पाटि. 21, चूपा.
77.	**कम्मसमारंभा**	मजैवि.
	कम्मसमारम्भा	शु.
78.	**परिण्णाया**	मजैवि.
	परिन्नाया	शु.
	परिण्णाता	आचा. पाठा. 1.1.1.9, पाटि. 21, चूपा.
	परिन्नाया	उत्तरा. 2.66
	परिन्नाता	ऋषिभा. 3.11 **'जस्स एते परिन्नाता...'**
79	**भवंति**	मजैवि.
	भवन्ति	शु.
80	**मुणी**	मजैवि.
81	**परिण्णायकम्मे**	मजैवि.
	परिन्नायकम्मे	शु.
	परिण्णातकम्मे	आचा. प्रति* खं.3

82. हरेक उद्देशक के अन्त में आनेवाला समाप्ति-सूचक ऐसा वाक्य मूल अर्धमागधी के अनुरूप बनाया गया है — संपादक ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

बितीये उद्देसगे

10. ॥ अट्टे लोके[1] परिजुण्णे दुस्सम्बोधे[2] अविजानए[3] ॥
॥ अस्सिं लोके[4] पव्वथिते[5]
तत्थ तत्थ पुढो पास आतुरा परितावेन्ति[6] ॥

11. सन्ति[7] पाणा पुढो-सिता ॥

12. ॥ लज्जामाना[8] पुढो पास ॥

1.	लोए	मजैवि.
	लोके	ऋषिभा. 14 (पृ. 27. 27), 22.6, 31 (पृ. 69.20)
	-लोके	
	(इधलोके) (परलोके)	ऋषिभा. 24 (पृ. 47.2)
2.	दुस्संबोधे	मजैवि.
3.	अविजाणए	मजैवि.
4.	लोए	मजैवि.
5.	पव्वहिए	मजैवि.
	पव्वथिए	आचा. पाठा. 1.1.1.10, पाटि. 3, प्रति इ.
	पव्वधिए	आचा. पाठा. 1.2.5.84, पाटि. 18, प्रति खे.
	पव्वहिते	आचा. 1.2.4.84
	पव्वहिता	आचा. 1.2.6.96
6.	परितावेंति	मजैवि.
	परियावेन्ति	शु.
7.	संति	मजैवि.
	सन्ति	शु.
8.	लज्जमाणा	मजैवि.

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

'अनगारा[9] मो' त्ति एके[10] पवदमाना[11]' जमिणं विरूवरूवेहि सत्थेहिं[12] पुढविकम्मसमारम्भेण[13] पुढविसत्थं समारम्भमाणे[14] अनेकरूवे[15] पाणे विहिंसति ।

9.	अणगारा	मजैवि.
10.	एगे	मजैवि.
	एके	आचा. पाठा. 1.1.2.12, पाटि. 5, प्रति सं, खं, खे, जै., प्रति* खं 3.
		सूत्रकृ. 1.1.1.9
11.	पवयमाणा	मजैवि.
	पवदमाणा	आचा. 1.1.4.34, 1.5.42, 1.6.50, 1.7.57
12.	विरूवरूवेहिं सत्थेहिं	मजैवि.
	विरूवरूवेहि	आचा. प्रति* खं 3.
13.	-समारंभेणं	मजैवि.
	-समारम्भेणं	शु.
	समारंभेण	आचा. प्रति* खं 1, पू, जे, ला.
14.	समारंभमाणो	मजैवि.
	समारंभमाणे	आचा. (पृ. 416), पाठा. प्रति संदी. 1.1.2.12 मधु.
		आचा. 1.1.3.23, 1.4.34
	समारभमाणे	शु.
15.	अणेगरूवे	मजैवि.
	अणेक-	'अणेकजम्मजोणीभयावत्तं' ऋषिभा 3 (पृ. 5. 16)

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

13. तत्थ खलु भगवता परिन्ना[16] पवेदिता—

इमस्स चेव जीवितस्स[17] परिवन्दन[18]-मानन[19]-पूजनाए जाति[20]-मरण-मोयनाए दुक्खपडिघातहेतुं[21] —

से सयमेव पुढविसत्थं समारम्भति,[22] अन्नेहिं[23] वा पुढविसत्थं समारम्भावेति,[24] अन्ने[25] वा पुढविसत्थं समारम्भन्ते[26] समनुजानति[27]। तं से अहिताए, तं से अबोधीए[28] ।

16.	परिण्णा	मजैवि.
	परिन्ना	शु.
17.	जीवियस्स	मजैवि.
18.	परिवंदण	मजैवि
	परिवन्दण	शु.
19.	-माणण-पूयणाए	मजैवि.
20.	जाती-मरण-	
	मोयणाए	मजैवि.
	जाइ-	शु, आगमो. आचा. प्रति* खं 3
21.	-हेउं	मजैवि.
22.	समारंभति	मजैवि.
23.	अण्णेहिं	मजैवि.
	अन्नेहिं	शु.
24.	समारंभावेति	मजैवि.
	समाम्भावेइ	शु.
25.	अण्णे	मजैवि.
	अन्ने	शु., दशवै. 4. 41, 42, 43

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

14. से त्तं[29] सम्बुज्झमाने[30] आदानीयं[31] समुट्ठाय[32] सोच्चा

26.	समारंभंते	मजैवि.
	समारभन्ते	शु.
27.	समणुजाणति	मजैवि.
28.	अबोहीए	मजैवि.
	अबोधीए	आचा. 1.1.3.24, 1.4.35, 1.6.51, 1.7.58
29.	तं	मजैवि.
	त्तं	आचा. 1.1.3.25, 1.4.36, 1.5.44, 1.6.52, 1.7.59 शु.
30.	संबुज्झमाणे	मजैवि.
31.	आयाणीयं	मजैवि.
	आदाण	मध्यवर्ती दकार युक्त **'आदाण'** के प्रयोग के कुछ उदाहरण
	आदाणं	आचा. 1.6.3.187 सूत्रकृ. 1.13.560, 1.16.635
	-आदाणं	
	(अदत्तादाणं)	ऋषिभा. 1 (पृ. 3.6)
	(छिण्णादाणं)	ऋषिभा. 15.26,27; 24.22
	आदाण-	
	(आदाणहेउं)	उत्तरा. 13. 426
	आदाणाइं	सूत्रकृ. 1.9. 447
	आदाणेणं	सूत्रकृ. 2.2.710 (पृ. 169.4)
	आदाणाए	आचा. 1.2.4.86
	आदाणातो	सूत्रकृ. 1.16.635 (2 बार), 2.1.683-687 ऋषिभा. 16 (पृ. 33.19)

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

भगवतो अनगाराणं[33] वा[34] अन्तिए[35] इधमेकेसिं[36] नातं[37] भवति—

	आदाणस्स	
	(कम्मादाणस्स)	ऋषिभा. 9.5
32.	समुट्ठाए	मजैवि.
	समुट्ठाय	आगमो.
	समुट्ठाय	आचा. प्रति* खं. 3
		आचा. पाठा. प्रति संदी. 1.2.2.70 (पृ.417)
		1.1.2.14, पाटि. 18, प्रति खं, हे 3, ला,
		1.3.25, पाटि. 12 प्रति सं, जे, हे 2, ला,
		1.4.36 पाटि. 12, प्रति हे 3,
		1.5.44 पाटि. 12, प्रति हे 3.
		1.6.52, पाटि. 9, प्रति हे 1, 2, 3, ला.
		1.7.59, पाटि. 8, प्रति खं, ला.
		उत्तरा. 4. 126
	उट्ठाय	आचा. 1.8.6.24, 8.7.228, 9.1.254
33.	अणगाराणं	मजैवि.
34.	वा	नास्ति मजैवि.
	वा	शु, जैविभा.
	वा	आचा. पाठा. 1.1.2.14, पाटि. 20, प्रति खं, हे 1, 3, लासं, आचा. चू., आचा. वृ.
		आचा. प्रति* खं. 3, ला.

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

एस खलु गन्थे,[38] एस खलु मोहे, एस खलु मारे, एस खलु नरके[39] ।

35	**अन्तिए**	नास्ति मजैवि.
	अन्तिए	शु.
	अंतिए	आचा. पाठा. 1.1.2.14, पाटि. 20, प्रति इ, हे 1, 3, लासं
36.	**इहमेगेसिं**	मजैवि.
	इधमेकेसिं	आचा. पाठा. 1.2.1.64, पाटि. 12, प्रति खं.
	इध	आचा. पाठा. 1.2.6.101, पाटि. 22, प्रति खं, खे, जै., 1.5.2.153, पाटि 10, प्रति खं, इ.
	-एकेसिं	आचा. प्रति* खं 1, खं 3.
37.	**णातं**	मजैवि.
	नायं	शु.
		आचा. प्रति* खं 1.
38.	**गंथे**	मजैवि.
	गन्थे	शु.
39.	**निरए**	मजैवि.
	नरए	शु.
		आचा. प्रति* खं 1, पू, जे.
	णरए	आचा. पाठा. 1.1.2.14, पाटि. 3, प्रति सं, शां, खे, जै, हे 1, 2, 3, इ, ला, ला 1.
		आगमो, जैविभा.
	णरकं	ऋषिभा. 14 (पृ. 27. 28)

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

॥ इच्चत्थं गढिते[40] लोके[41] ॥

जमिणं विरूवरूवेहि[42] सत्थेहि[43] पुढविकम्मसमारम्भेण[44] पुढविसत्थं समारम्भमाणे[45] अन्ने[46] वऽनेकरूवे[47] पाणे विहिंसति ।

40.	गढिए	मजैवि.
	-गढिते-	
(तत्थ गढिते चिट्ठति)		आचा. 1.2.3.79, 2.4.82
	-गढिते	
	(आताण- सोत-गढिते)	आचा. 1.4.4.144
41.	लोए	मजैवि.
	लोके	देखो उद्देसग-2, पादटिप्पण नं. 1
42.	विरूवरूवेहिं	मजैवि.
43.	सत्थेहिं	मजैवि.
44.	-समारंभेणं	मजैवि.
	-समारम्भेणं	शु.
	-समारंभेण	आगमो.
		आचा. प्रति* पू, जे.
45.	समारभमाणे	मजैवि.
46.	अण्णे	मजैवि.
	अन्ने	शु,
		आचा. प्रति* ला.
47.	अणेगरूवे	मजैवि.

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

15 से बेमि-

अप्पेके[48] अन्धमब्भे[49] अप्पेके अन्धमच्छे, अप्पेके पादमब्भे अप्पेके पादमच्छे, अप्पेके गुप्फमब्भे अप्पेके गुप्फमच्छे, अप्पेके जङ्घमब्भे अप्पेके जङ्घमच्छे,[50] अप्पेके जानुमब्भे[51] अप्पेके जानुमच्छे, अप्पेके ऊरुमब्भे अप्पेके ऊरुमच्छे, अप्पेके कडिमब्भे अप्पेके कडिमच्छे, अप्पेके नाभिमब्भे[52] अप्पेके नाभिमच्छे, अप्पेके उदरमब्भे अप्पेके उदरमच्छे, अप्पेके पासमब्भे अप्पेके पासमच्छे, अप्पेके पिट्ठिमब्भे अप्पेके पिट्ठिमच्छे, अप्पेके उरमब्भे अप्पेके उरमच्छे, अप्पेके हिदयमब्भे[53]

48.	अप्पेगे	मजैवि. इस सूत्र में सभी जगह यही पाठ है ।
	(अप्पेके हियमब्भे)	आचा. प्रति* 'जे' में इसी सूत्र में आगे यही 'अप्पेके' पाठ मिलता है ।
		'एके' पाठ के लिए देखो पीछे उद्देसग-2, पाटि. नं. 10
49.	अंधमब्भे	मजैवि.
	अन्धमब्भे	शु.
50.	जंघमब्भे	मजैवि.
	जङ्घमब्भे	शु.
51.	जाणुम-	मजैवि.
52.	णाभिम-	मजैवि.
	नाभिम-	शु.
		आचा. प्रति खं 3, ला.
53.	हिययम-	मजैवि.
	-हिदयं	
	(मणुस्सहिदयं)	ऋषिभा. 4.4

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

अप्पेके हिदयमच्छे,[53] अप्पेके थनमब्भे[54] अप्पेके थनमच्छे,[54] अप्पेके खन्धमब्भे[55] अप्पेके खन्धमच्छे,[55] अप्पेके बाहुमब्भे अप्पेके बाहुमच्छे, अप्पेके हत्थमब्भे अप्पेके हत्थमच्छे, अप्पेके अङ्गुलिमब्भे[56] अप्पेके अङ्गुलिमच्छे,[56] अप्पेके नहमब्भे[57] अप्पेके नहमच्छे,[57] अप्पेके गीवमब्भे अप्पेके गीवमच्छे, अप्पेके हनुमब्भे[58] अप्पेके हनुमच्छे,[58] अप्पेके होट्ठमब्भे अप्पेके होट्ठमच्छे, अप्पेके दन्तमब्भे[59] अप्पेके दन्तमच्छे[59], अप्पेके जिब्भमब्भे अप्पेके जिब्भमच्छे, अप्पेके तालुमब्भे अप्पेके तालुमच्छे, अप्पेके गलमब्भे अप्पेके गलमच्छे, अप्पेके गण्डमब्भे[60] अप्पेके गण्डमच्छे[60], अप्पेके कण्णमब्भे अप्पेके कण्णमच्छे, अप्पेके नासमब्भे[61] अप्पेके नासमच्छे[61] अप्पेके अच्छिमब्भे अप्पेके अच्छिमच्छे, अप्पेके भमुहमब्भे अप्पेके भमुहमच्छे, अप्पेके निडालमब्भे[62] अप्पेके

54.	थणम-	मजैवि.
55.	खंधम-	मजैवि.
	खन्धम-	शु.
56.	अंगुलिम-	मजैवि.
	अङ्गुलिम-	शु.
57.	णहम-	मजैवि.
	नहम-	शु.
58.	हणुम-	मजैवि.
59.	दंतम-	मजैवि.
	दन्तम-	शु.
60.	गंडम-	मजैवि.
	गण्डम-	शु.
61.	णासम-	मजैवि.
	नासम-	शु.
		आचा. प्रति* खं1

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

निडालमच्छे,[62] अप्पेके सीसमब्भे अप्पेके सीसमच्छे, अप्पेके सम्पमारए[63] अप्पेके उद्दवए ।

16. एत्थ सत्थं समारम्भमाणस्स[64] इच्चेते आरम्भा[65] अपरिन्नाता[66] भवन्ति[67] । एत्थ सत्थं असमारम्भमाणस्स[68] इच्चेते आरम्भा[69] परिन्नाता[70] भवन्ति[71] ।

62.	णिडालम-	मजैवि.
	निलाडम-	शु.
		आचा. पाठा. 1.1.2.15, पाटि. 14, प्रति हे 1, 2, 3
		प्रति* पू.
	निलाट	प्रति* जे.
63.	संपमारए	मजैवि.
64.	समारभमाणस्स	मजैवि.
65.	आरंभा	मजैवि.
	आरम्भा	शु.
66.	अपरिण्णाता	मजैवि.
	अपरिन्नाया	शु.
67.	भवंति	मजैवि.
	भवन्ति	शु.
		आचा. प्रति* खं 3.
68.	असमारभमाणस्स	मजैवि.
69.	आरंभा	मजैवि.
	आरम्भा	शु.
70.	परिण्णाया	मजैवि.
	परिन्नाया	शु.

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

17. तं परिन्नाय[72] मेधावी[73] नेव[74] सयं पुढविसत्थं समारम्भेज्जा[75]; [76]नेवऽन्नेहिं[77] पुढविसत्थं समारम्भावेज्जा[78]; नेवऽन्ने[79]

71.	भवंति	मजैवि.
	भवन्ति	शु.
		आचा. प्रति* खं 3.
72.	परिण्णाय	मजैवि.
	परिन्नाय	शु.
73.	मेहावी	मजैवि.
	मेधावी	आचा. 1.1.6.54, 2.2.69, 2.6.104, 3. 1. 111, 3.3.127, 3.4.129, 5.3.157, 6.2.186, 6.4.191, 8.3.209
		सूत्रकृ. 1.4.2.298, 8.426, 15.626,
		उत्तरा. 2.59
		दशवै. पाठा. 1.5.2.262, प्रति खं. 4, अचू.पा. 5.2.255, 9.1.468, 9.3.565
		ऋषिभा. 9.18
74.	णेव	मजैवि.
	नेव	शु, आगमो, जैविभा.
		आचा. पाठा. 1.5.1.148, प्रति संदी. (पृ.417)
		दशवै. 4.41, 42, 43
75.	समारभेज्जा	मजैवि.
76.	णेव	मजैवि.
	नेव	शु, जैविभा.
		आचा. प्रति* खं 1
77.	अण्णेहिं	मजैवि.
	अन्नेहिं	शु.
		आचा. प्रति* खं 1.

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

पुढविसत्थं समारम्भन्ते[80] समनुजानेज्जा[81] ।

18. जस्सेते पुढविकम्मसमारम्भा[82] परिन्नाता[83] भवन्ति[84] से हु मुनी[85] परिन्नातकम्मे[86]

त्ति बेमि ।

। सत्थपरिन्नाए बितीये उद्देसगे समत्ते ।

78.	समारभावेज्जा	मजैवि.
	समारम्भावेज्जा	शु.
79.	णेवऽण्णे	मजैवि.
	नेवऽन्ने	शु.
	नेवन्ने	आचा. (पृ. 417) पाठा. 1.8.1.203, प्रति संदी.
	नेवण्णे	जैविभा.
	नेवअन्नेहिं	आचा. प्रति* खं 3.
80.	समारभंते	मजैवि.
	समारभन्ते	शु.
81.	समणुजाणेज्जा	मजैवि.
82.	-समारंभा	मजैवि.
	-समारम्भा	शु.
83.	परिण्णाता	मजैवि.
	परिन्नाया	शु.
84.	भवंति	मजैवि.
	भवन्ति	शु.
85.	मुणी	मजैवि.
86.	परिण्णायकम्मे	मजैवि.
	परिन्नायकम्मे	शु.

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

ततीये उद्देसगे

19. से बेमि—

से अधा[1] वि—

॥ अनगारे[2] उज्जुकडे नियागपडिवन्ने[3]

अमायं कुव्वमाणे वियक्खाते[4] ॥

20. ॥ जाए सद्धाए निक्खन्तो[5] तमेव

अनुपालिया[6] विजहित्तु[7] विसोत्तियं ॥

1.	जहा	मजैवि.
2.	अणगारे	मजैवि.
3.	णियागपडिवण्णे	मजैवि.
	नियागपडिवन्ने	शु.
	नियायपडिवण्णे	आगमो.
		आचा. प्रति* खं 1
4.	वियाहिते	मजैवि.
	वियक्खाता	आचा. 1.5.6.174
5.	णिक्खंतो	मजैवि.
	निक्खन्तो	शु.
	निक्खंतो	आगमो.
		आचा. प्रति* खं 1, पू, जे. ला.
6.	अणुपालिया	मजैवि.
7.	विजहित्ता	मजैवि.
	विजहित्तु	आचा.पाठा. 1.1.3.20, पाटि. 18, प्रति सं, जे, हे1, 2, उत्तरा. 8. 210
	विजहित्तु	जैविभा.
	वियहित्तु	शु.
	विजहित्तु	आचा. प्रति* पू, जे, ला.

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

21. ॥ पणता[8] वीरा महावीधिं[9] ॥

22. लोकं[10] च आणाए अभिसमेच्चा अकुतोभयं ।

से बेमि—

नेव[11] सयं लोकं[10] अब्भाइक्खेज्जा, नेव[11] अत्तानं[12] अब्भाइक्खेज्जा । जे लोकं[10] अब्भाइक्खति से अत्तानं[12] अब्भाइक्खति, जे अत्तानं[12] अब्भाइक्खति से लोकं[10] अब्भाइक्खति ।

23. ॥ लज्जामाना[13] पुढो पास ॥

'अनगारा[14] मो' त्ति एके[15] पवदमाना,[16] जमिणं विरूवरूवेहिं[17] सत्थेहिं[18] [19]उदककम्मसमारम्भेण उदकसत्थं[20] समारम्भमाणे[21] अन्ने[22]

8.	पणया	मजैवि.
	पणता	सूत्रकृ. पाठा. चू. 1.2.1.109, पाटि. 15
9.	महावीहिं	मजैवि.
	महावीधिं	सूत्रकृ. पाठा. चू. 1.2.1.109., पाटि. 15 'पणता वीरा महावी(वि ?) धिं'
10.	लोगं	मजैवि.
	लोकं	आचा. 1.4.3.140, 4.146, आचा. पाठा. 1.1.3.22, पाटि. 21, प्रति सं, खे, जै. आचा. प्रति* खं 3, ला. उत्तरा. पाठा. चूपा. 8.6 ऋषिभा. 6 (पृ. 11. 26); 34.4
11.	णेव	मजैवि.
	नेव	शु. आचा. प्रति* खं 1
12.	अत्ताणं	मजैवि.
13.	लज्जमाणा	मजैवि.
14.	अणगारा	मजैवि.

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

वऽनेकरूवे[23] पाणे विहिंसति ।

24. तत्थ खलु भगवता परिन्ना[24] पवेदिता —

15.	एगे	मजैवि.
	एके	आचा. प्रति* खं 3, पू, जे.
16.	पवयमाणा	मजैवि.
	पवदमाणा	आचा. प्रति* खं. 1
17.	विरूवरूवेहिं	मजैवि.
18.	सत्थेहिं	मजैवि.
19.	उदयकम्मसमारंभेणं	मजैवि.
	उदक-	
	(उदकपसूताणि)	आचा. 2.2.1.417
	-उदका	
	(मधुरोदका)	ऋषिभा. 22.2
	-समारम्भेणं	शु.
	समारंभेण	आचा. प्रति* खं. 1
20.	उदयसत्थं	मजैवि.
21.	समारंभमाणे	मजैवि.
	समारम्भमाणे	शु.
22.	अण्णे	मजैवि.
	अन्ने	शु.
		आचा. पाठा. 1.1.3.23, पाटि. 4, प्रति हे 1, 3
23.	अणेगरुवे	मजैवि.
24	परिण्णा	मजैवि.
	परिन्ना	शु.

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

इमस्स चेव जीवितस्स [25]परिवन्दन-मानन[26]-पूजनाए[27] [28]जाति-मरण-मोयनाए[29] दुक्खपडिघातहेतुं—

से सयमेव उदकसत्थं[30] समारम्भति[31], अन्नेहि[32] वा उदकसत्थं[30] समारम्भावेति,[33] अन्ने[34] वा उदकसत्थं[30] समारम्भन्ते[35] समनुजानति[36]।

25.	परिवंदण-	मजैवि.
	परिवन्दण-	शु.
26.	-माणण-	मजैवि.
27.	-पूयणाए	मजैवि.
28.	जाती-	मजैवि.
	जाइ-	शु, आगमो.
29.	मोयणाए	मजैवि.
30.	उदयसत्थं	मजैवि.
31.	समारभति	मजैवि.
	समारम्भइ	शु.
32.	अण्णेहिं	मजैवि.
	अन्नेहिं	शु.
		आचा. प्रति* ला.
	-अन्नेहिं	सूत्रकृ. 1.1.4
		दशवै. 4.41, 42, 43
33.	समारभावेति	मजैवि.
	समारम्भावेइ	शु.
34.	अण्णे	मजैवि.
	अन्ने	शु.
		आचा. प्रति* खं 1, ला.

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

तं से अहिताए, तं से अबोधीए ।

25. से त्तं सम्बुज्झमाने[37] आदानीयं[38] समुट्ठाय[39] सोच्चा भगवतो अनगाराणं[40] वा अन्तिए[41] इधमेकेसिं[42] नातं[43] भवति —

35.	**समारभंते**	मजैवि.
	समारम्भन्ते	शु.
36.	**समणुजाणति**	मजैवि.
37.	**संबुज्झमाणे**	मजैवि.
38.	**आयाणीयं**	मजैवि.
39.	**समुट्ठाए**	मजैवि.
	समुट्ठाय	आगमो.
		आचा. पाठा. 1.1.3.25, पाटि.12, प्रति हे 3.
40.	**अणगाराणं**	मजैवि.
41.	**अन्तिए**	नास्ति मजैवि.
		शु.
		आचा. पाठा. 1.1.3.25, पाटि. 13, प्रति खेसं, इ, हे 1, 3
42.	**इहमेगेसिं**	मजैवि.
	इहमेकेसिं	आचा.पाठा. 1.1.3.25, पाटि.14, प्रति सं, शां, खे, जे, हे 1, 2, ला, ला 1
		आचा. प्रति* खं 1, पू, जे, ला.
43.	**णातं**	मजैवि.
	नायं	शु.
		आचा प्रति* खं. 1

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

एस खलु गन्थे[44], एस खलु मोहे, एस खलु मारे, एस खलु नरके[45]।

॥ इच्चत्थं गढिते[46] लोके[47] ॥

जमिणं विरूवरूवेहि[48] सत्थेहि[49] उदककम्मसमारभ्भेण[50] उदकसत्थं[51] समारम्भमाणे[52] अन्ने[53] वऽनेकरूवे[54] पाणे विहिंसति ।

44.	गंथे	मजैवि.
	गन्थे	शु.
45.	निरए	मजैवि.
	नरए	शु.
		आचा प्रति* ला.
	णरए	आगमो, जैविभा.
	नरये	आचा. प्रति* पू, जे.
46.	गढिए	मजैवि.
47.	लोए	मजैवि.
48.	विरूवरूवेहिं	मजैवि.
49.	सत्थेहिं	मजैवि.
50.	उदयकम्मसमारंभेणं	मजैवि.
	-समारम्भेणं	शु, आगमो.
51.	उदयसत्थं	मजैवि.
52.	समारभमाणे	मजैवि.
	समारम्भमाणे	शु.
53.	अणणे	मजैवि.
	अन्ने	शु.
54.	अणेगरूवे	मजैवि.

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

26. से बेमि —

॥ सन्ति[55] पाणा उदकनिस्सिता[56] जीवा अनेका[57] ॥

॥ इध[58] च खलु भो अनगाराणं[59]

.............उदकं[60] जीवा वियक्खाता ॥

॥ सत्थं चेत्थ अनुवीयि[61] पास,

.........पुढो सत्थं पवेदितं ॥

अदुवा अदिन्नादानं[62] ।

55.	संति	मजैवि.
	सन्ति	शु.
56.	उदयणिस्सिया	मजैवि.
	उदयनिस्सिया	शुं, आगमो, जैविभा.
		आचा. प्रति* खं. 1
	-णिस्सिता	
	(पुढविणिस्सिता)	आचा. 1.1.4.37
	(तणणिस्सिता)	आचा. 1.1.4.37
	(पत्तणिस्सिता)	आचा. 1.1.4.37
	(कट्ठणिस्सिता)	आचा. 1.1.4.37
	(गोमयणिस्सिता)	आचा. 1.1.4.37
57.	अणेगा	मजैवि.
58.	इहं	मजैवि.
59.	अणगाराणं	मजैवि.
60.	उदयं	मजैवि.
61.	अणुवीयि	मजैवि.
62.	अदिण्णादाणं	मजैवि.
	अइन्नायाणं	शु.
	अदिन्नादाणं	आगमो.
		आचा, प्रति* खं 1, ला.

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

27. ॥ कप्पति[63] ने, कप्पति[63] ने पातुं ॥

अदुवा विभूसाए पुढो सत्थेहिं[64] विउट्टन्ति[65] ।

28. एत्थ वि तेसिं नो[66] निकरणाए[67] ।

29. एत्थ सत्थं समारम्भमाणस्स[68] इच्चेते आरम्भा[69]

63.	**कप्पइ णे**	मजैवि.
	कप्पति	आचा.1.2.6.96; 8.3.211, 5.218, 7.225; 2.1.9.390, 392; 1.10.404; 2.1.425; 2.2.430, 437; 5.1.561, 566; 6.1.598
		आचा. पाठा. 1.1.3.27, पाटि.1, प्रति सं, शां, खं, खे, जै, एवं चू. (इसके अतिरिक्त अन्य सूत्रों के पाठान्तरों में भी)
	कप्पती	आचा प्रति* ला.
		सूत्रकृ. 1.4.1.256;2.6.814; 2.7.855 (4 बार)
		ऋषिभा. 17 (पृ.35.24), 37 (पृ. 83.24), 42 (पृ. 93.16)
	कप्पति(त्ति)	आचा. प्रति* खं 3
64.	**सत्थेहिं**	मजैवि.
65.	**विउट्टंति**	मजैवि.
	विउट्टन्ति	शु, आगमो.
66.	**णो**	मजैवि.
	नो	शु, आगमो
		आचा. प्रति* खं. 1
67.	**णिकरणाए**	मजैवि.
	निकरणाए	शु, आगमो.
		आचा. प्रति* खं. 1
68.	**समारभमाणस्स**	मजैवि.
	समारम्भमाणस्स	शु.

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

अपरिन्नाता[70] भवन्ति[71] । एत्थ सत्थं असमारम्भमाणस्स[72] इच्चेते आरम्भा[69] परिन्नाता[73] भवन्ति[71] ।

30. तं परिन्नाय[74] मेधावी[75] नेव[76] सयं उदकसत्थं[77]

69.	आरंभा	मजैवि.
	आरम्भा	शु.
70.	अपरिण्णाया	मजैवि.
	अपरिन्नाया	शु.
	अपरिण्णाता	आचा. प्रति* खं. 3, ला.
71.	भवंति	मजैवि.
	भवन्ति	शु.
72.	असमारभमाणस्स	मजैवि.
	असमारम्भमाणस्स	शु.
73.	परिण्णाया	मजैवि.
	परिन्नाया	शु.
74.	परिण्णाय	मजैवि.
	परिन्नाय	शु.
		आचा. प्रति* ला.
75.	मेहावी	मजैवि.
	मेधावी	आचा. प्रति* खं. 3, ला.
76.	णेव	मजैवि.
	नेव	शु.
77.	उदयसत्थं	मजैवि.
78.	समारभेज्जा	मजैवि.
	समारम्भेज्जा	आगमो.

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

समारम्भेज्जा[78], नेवऽन्नेहिं[79] उदकसत्थं[77] समारम्भावेज्जा[80], उदकसत्थं[77] समारम्भन्ते[81] वि अन्ने[82] न[83] समनुजानेज्जा[84] ।

31. जस्सेते उदकसत्थसमारम्भा[85] परिन्नाता[86] भवन्ति[87] से हु

79.	**णेवऽण्णेहिं**	मजैवि.
	नेवन्नेहिं	शु.
	नेवऽण्णेहिं	आचा. प्रति* खं. 1
	नेवऽन्नेहिं	दशवै. 4.41, 42, 43
80.	**समारभावेज्जा**	मजैवि.
	समारम्भावेज्जा	शु.
81.	**समारभंते**	मजैवि.
	समारभन्ते	शु.
	समारंभंते	आचा. पाठा. 1.3.30, पाटि. 8, प्रति सं, खं, हे 1, 3
		आगमो, जैविभा.
		आचा. प्रति* खं 3, ला.
82.	**अण्णे**	मजैवि.
	अन्ने	आचा. प्रति* ला.
83.	**ण**	मजैवि.
	न	आचा. प्रति* खं 1, ला.
84.	**समणुजाणेज्जा**	मजैवि.
85.	**उदयसत्थसमारंभा**	मजैवि.
	-समारम्भा	शु.
86.	**परिण्णाया**	मजैवि.
	परिन्नाया	शु.
87.	**भवंति**	मजैवि.
	भवन्ति	शु.

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

मुनी[88] परिन्नातकम्मे[89]

त्ति बेमि ।

। सत्थपरिन्नाए ततीये उद्देसगे समत्ते ।

88.	मुणी	मजैवि.
89.	परिण्णातकम्मे	मजैवि.
	परिन्नायकम्मे	शु.

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

32. से बेमि —

नेव[1] सयं लोकं[2] अब्भाइक्खेज्जा, नेव[3] अत्तानं[4] अब्भाइक्खेज्जा। जे लोकं[2] अब्भाइक्खति से अत्तानं[4] अब्भाइक्खति, जे अत्तानं[4] अब्भाइक्खति से लोकं[2] अब्भाइक्खति।

जे दीहलोकसत्थस्स[5] खेत्तन्ने[6] से असत्थस्स खेत्तन्ने[7], जे

1.	**णेव**	मजैवि.
	नेव	शु.
		आचा. प्रति* खं1, जे, ला.
2.	**लोगं**	मजैवि.
3.	**णेव**	मजैवि.
	नेव	शु.
		आचा. प्रति* खं 1, पू, जे, ला.
4.	**अत्ताणं**	मजैवि.
5.	**दीहलोगसत्थस्स**	मजैवि.
6.	**खेत्तण्णे**	मजैवि.
	खेयन्ने	शु.
		आचा. प्रति* जे.
		सूत्रकृ. 2.1.640
	खेअन्ने	आचा. प्रति* ला.
	अखेत्तन्ना	सूत्रकृ. 2.1.641
	खेतन्ने	सूत्रकृ. 2.1.641, 680
		सूत्रकृ. पाठा. 2.1.639, पाटि. 15, प्रति खं 2, पा.
	अखेतन्ना	सूत्रकृ. पाठा. 2.1.641, पाटि. 11, प्रति खं 1

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

असत्थस्स खेत्तन्ने[8] से दीहलोकसत्थस्स[5] खेत्तन्ने[9] ।

33. ॥ वीरेहि एतं[10] अभिभूय दिट्ठं ॥

---

7. **खेत्तण्णे** मजैवि.
खेयन्ने शु.
आचा. प्रति* पू, जे, ला.

8. **खेत्तण्णे** मजैवि.
खेयन्ने शु.
आचा. प्रति* ला.

9. **खेत्तण्णे** मजैवि.
खेयन्ने शु.
आचा. प्रति* ला.

10. **एयं** मजैवि.
एतं आचा.1.1.7.56; **2.3**.79, 4.85, 86, 5.93;3.4.128; 4.1.133 (तीन बार : **5.2**.153, 3.159, 4.162, 164, 5.166, 6.172 (दो बार); **6**.1.180, 182, 3.187 (दो बार); 8.1.199, 201. **4.214**, 215, 219 (दो बार), 6.224, 7.226, 228, 8.239; 9.1.**255**, 261; 2.1.2.338, 3.340, 342, 347, 5.353, **357**, 358, 6.360, 363,364,7. 365, 368, 372, 9.391, 396, 398, 10.399, 406, 2.1.419, 425, 426, 2.428,3.444; 3.1, 472, 473, 477, 479, 480, 481, 2.484, 503, 3.519, 5.1. 564, 580, 2.581, 583, 587; 7.2.636; 8.1.640; 9.1.644; 15.749
सूत्रकृ. 1.1.1.5, 2.40, 4.**85**, 8.419, 9.471(दो बार), 12.543, 14.595; 2.1.6**40, 657**, 658, 661, 662, 664 (दो बार), 675, 3.735, 6.**81**9, 7.846, 866
ऋषिभा. 13.3, 18 (**पृ**. **35.28**,31), 20 (पृ. 39.5, 12, 16,17), 25 (पृ.55.**6.12**), **26**.15; 33.1; 38.15; 45.19, 36.

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

सञ्जतेहिं[11] सदा[12] जतेहिं[13] सदा अप्पमत्तेहिं[14] ।
॥ जे पमत्ते गुणट्ठिते से हु दण्डे[15] पवुच्चति
तं परिन्नाय[16] मेधावी[17] "इदानिं[18] नो[19],
जमहं पुव्वमकासी पमादेन[20]" ॥

11.	संजतेहिं	मजैवि.
12.	सता	मजैवि.
	सदा	आचा. 1.1.4.33, 3.2.116, 3.123, 4.4.143, 146 (दो बार), 5.4.164, 165, 6.173, 6.3.187, 4.195; 2.1.1.334, 2.3.463, 3.1.483, 2.503, 3.519, 4.2.552, 5.1.580, 2.587, 6.1.601, 2.606, 7.1.620, 9.1.644, 13.729 सूत्रकृ. 1.1.4.88, 2.2.116 (दो बार), 3.157, 3.1.170, 4.2.278, 5.1.320, 2.337, 339, 8.435; 15.609; 16.634; 2.3.747 दशवै. पाठा. 1.1 अचूपा.
13.	जतेहिं	मजैवि.
14.	अप्पमत्तेहिं	मजैवि.
15.	दंडे	मजैवि.
	दण्डे	शु.
16.	परिण्णाय	मजैवि.
	परिन्नाय	शु.
17.	मेहावी	मजैवि.
	मेधावी	आचा. प्रति* खं 3.
18.	इदाणीं	मजैवि.
	इयाणिं	शु, आगमो, जैविभा. आचा. पाठा. 1.1.4.33, पाटि. 1,

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

34. ॥ लज्जमाना[21] पुढो पास ॥

अनगारा[22] मो त्ति एके[23] पवदमाना[24], जमिणं विरूवरूवेहि[25] सत्थेहि[26] अगनिकम्मसमारम्भेण[27] अगनिसत्थं[28] समारम्भमाणे[29] अन्ने[30] वऽनेकरूवे[31] पाणे विहिंसति ।

		प्रति शां, खे, जै, हे 3, इ, चू.
		आचा. प्रति* खं 1, पू, जे.
19.	**णो**	मजैवि.
	नो	शु.
20.	**पमादेणं**	मजैवि.
21.	**लज्जमाणा**	मजैवि.
22.	**अणगारा**	मजैवि.
23.	**एगे**	मजैवि.
24.	**पवदमाणा**	मजैवि.
25.	**विरूवरूवेहिं**	मजैवि.
26.	**सत्थेहिं**	मजैवि.
27.	**-समारंभेणं**	मजैवि.
	-समारम्भेण	शु, आगमो.
	-समारंभेण	आचा. प्रति* पू, जे, ला.
28.	**अगणिसत्थं**	मजैवि.
29.	**समारंभमाणे**	मजैवि.
	समारम्भमाणे	शु.
30.	**अण्णे**	मजैवि.
	अन्ने	शु.
31.	**वऽणेगरूवे**	मजैवि.

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

35. तत्थ खलु भगवता परिन्ना[32] पवेदिता —

इमस्स चेव जीवितस्स[33] परिवन्दन[34]-मानन[35]-पूजनाए जाति[36]-मरण-मोयनाए[37] दुक्खपडिघातहेतुं—

से सयमेव अगनिसत्थं[38] समारम्भति[39], अन्नेहि[40] वा अगनिसत्थं[38] समारम्भावेति[41], अन्ने[42] वा अगनिसत्थं[38] समारम्भमाणे[43] समनुजानति[44] । तं से अहिताए, तं से अबोधीए ।

32.	परिण्णा	मजैवि.
	परिन्ना	शु.
33.	जीवियस्स	मजैवि.
34.	परिवंदण	मजैवि.
	परिवन्दण	शु.
35.	माणण-पूयणाए	मजैवि.
36.	जाती-	मजैवि.
	जाइ-	शु, आगमो.
		आचा. पाठा. 1.1.4.35, पाटि. 5, प्रति हे. 3.
37.	-मोयणाए	मजैवि.
38.	अगणिसत्थं	मजैवि.
39.	समारभति	मजैवि.
	समारम्भइ	शु.
40.	अण्णेहिं	मजैवि.
	अन्नेहिं	शु.
41.	समारभावेति	मजैवि,
	समारम्भावेइ	शु.
42.	अण्णे	मजैवि.
	अन्ने	शु.
43.	समारभमाणे	मजैवि.
44.	समणुजाणति	मजैवि.

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

36. से त्तं सम्बुज्झमाने[45] आदानीयं[46] समुट्ठाय[47] सोच्चा भगवतो अनगाराणं[48] वा[49] इधमेकेसिं[50] नातं[51] भवति —

एस खलु गन्थे[52], एस खलु मोहे, एस खलु मारे, एस खलु नरके[53] ।

॥ इच्चत्थं गढिते[54] लोके[55] ॥

45.	संबुज्झमाणे	मजैवि.
46.	आयाणीयं	मजैवि.
47.	समुट्ठाए	मजैवि.
	समुट्ठाय	आगमो.
		आचा. पाठा. 1.1.4.36, पाटि. 12, प्रति हे 3.
48.	अणगाराणं	मजैवि.
49.	वा	नास्ति मजैवि.
		शु.
		आचा. पाठा. 1.1.4.36, पाटि. 13, प्रति खं, खेसं, हे 3, इ.
50.	इहमेगेसिं	मजैवि.
51.	णायं	मजैवि.
	नायं	शु.
		आचा. प्रति* खं1.
52.	गंथे	मजैवि.
	गन्थे	शु.
53.	निरए	मजैवि.
	नरए	शु.
		आचा. प्रति* खं 1.
	णरए	आगमो, जैविभा.
54.	गढिए	मजैवि.
	गढिते	आचा. प्रति* खं 3
55.	लोए	मजैवि.

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

जमिणं विरूवरूवेहि[56] सत्थेहि[56] [57]अगनिकम्मसमारम्भेण अगनिसत्थं[58] समारम्भमाणे[59] अन्ने[60] वऽनेकरूवे[61] पाणे विहिंसति ।

37 से बेमि —

सन्ति[62] पाणा पुढविनिस्सिता[63] तणनिस्सिता[64] पत्तनिस्सिता[65]

56.	विरूवरूवेहिं	मजैवि.
	सत्थेहिं	मजैवि.
	सत्थेहि	आचा. प्रति* खं. 3
57.	-समारंभेणं	मजैवि.
	-समारम्भेणं	शु.
58.	अगणिसत्थं	मजैवि.
59.	समारभमाणे	मजैवि.
	समारम्भमाणे	शु.
60.	अण्णे	मजैवि.
	अन्ने	शु.
61.	वऽणेगरूवे	मजैवि.
62.	संति	मजैवि.
	सन्ति	शु.
63.	पुढविणिस्सिता	मजैवि.
	पुढविनिस्सिया	शु, आगमो.
		आचा. प्रति* खं. 1
64.	तणणिस्सिता	मजैवि.
	तणनिस्सिया	शु.
		आचा. प्रति* खं. 1
	तिणनिस्सिया	प्रति* ला.

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

कट्ठनिस्सिता[66] गोमयनिस्सिता[67] कयवरनिस्सिता[68] ।
सन्ति[69] सम्पातिमा[70] पाणा आहच्च सम्पतन्ति[71] य ।

65.	**पत्तणिस्सिता**	मजैवि.
	पत्तनिस्सिया	शु.
		आचा. प्रति* ला.
66.	**कट्ठणिस्सिता**	मजैवि.
	कट्ठनिस्सिया	शु, आगमो.
		आचा. प्रति* खं 1, जे, ला.
	कट्ठनिस्सया	आचा. प्रति* पू.
	-निस्सिया ('जल-धन्न-निस्सिया, जीवा पुढवी-कट्ठ-निस्सिया')	उत्तरा. 35. 1442
	-निस्सियाणं (पुढवि-तण-कट्ठ-निस्सियाणं)	दशवै. 10.524
67.	**गोमयणिस्सिता**	मजैवि.
	गोमयनिस्सिया	शु.
		आचा. प्रति* खं 1, पू, जे, ला.
68.	**कयवरणिस्सिया**	मजैवि.
	कयवरनिस्सिया	शु.
	कयवरनिस्सिआ	आचा. प्रति* खं 1.
69.	**संति**	मजैवि.
	सन्ति	शु.
70.	**संपातिमा**	मजैवि.

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

अगनिं[72] च खलु पुट्ठा एके[73] सङ्घातमावज्जन्ति[74] । जे तत्थ सङ्घातमावज्जन्ति[74] ते तत्थ परियावज्जन्ति[74] । जे तत्थ परियावज्जन्ति[74] ते तत्थ उद्दायन्ति[75] ।

38. एत्थ सत्थं समारम्भमाणस्स[76] इच्चेते आरम्भा[77] अपरिन्नाता[78] भवन्ति[79] ।

एत्थ सत्थं असमारम्भमाणस्स[80] इच्चेते आरम्भा[77] परिन्नाता[81] भवन्ति[79] ।

71.	संपयंति	मजैवि.
	संपतंति	आचा.1.1.7.60
	-पतन्ति	
	(पपतन्ति)	सूत्रकृ. पाठा. 1.5.1.324, पाटि. 27, प्रति खं 1.
	(णिपतन्ति)	ऋषिभा. 10 (पृ. 23.9)
72.	अगणिं	मजैवि.
73.	एगे	मजैवि.
74.	-वज्जंति	मजैवि.
	-वज्जन्ति	शु.
75.	उद्दायंति	मजैवि.
	उद्दायन्ति	शु.
76.	समारभमाणस्स	मजैवि.
	समारम्भमाणस्स	शु.
77.	आरंभा	मजैवि.
	आरम्भा	शु.
78.	अपरिण्णाता	मजैवि.
	अपरिन्नाया	शु.
79.	भवंति	मजैवि.
	भवन्ति	शु.

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

39. जस्स एते अगनिकम्मसमारम्भा[82] परिन्नाता[83] भवन्ति[84] से हु मुनी[85] परिन्नातकम्मे[86]

त्ति बेमि ।

। सत्थपरिन्नाए चतुत्थे उद्देसगे समत्ते ।

80.	असमारभमाणस्स	मजैवि.
81.	परिण्णाता	मजैवि.
	परिन्नाया	शु.
82.	अगणिकम्मसमारंभा	मजैवि.
	-समारम्भा	शु.
83.	परिण्णाता	मजैवि.
84.	भवंति	मजैवि.
	भवन्ति	शु.
85.	मुणी	मजैवि.
86.	परिण्णायकम्मे	मजैवि.
	परिन्नायकम्मे	शु.

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

पञ्चमे उद्देसगे

40 ॥ तं नो[1] करिस्सामि समुट्ठाय[2]

मत्ता मतिमं अभयं विदित्ता ॥

॥ तं जे नो[3] करए, एसोवरते,

एत्थोवरते[4] एस अनगारे[5] ॥

त्ति पवुच्चति ।

41 जे गुणे से आवट्टे, जे आवट्टे से गुणे । उड्ढं अधं[6] तिरियं

1.	णो	मजैवि.
	नो	शु.
		आचा. प्रति* खं 1.
	तन्नो	आचा. प्रति* पू, जे, ला.
2.	समुट्ठाए	मजैवि.
	समुट्ठाय	आचा. पाठा. प्रति ला.
		आचा. प्रति* ला
3.	णो	मजैवि.
	नो	शु.
4.	एत्थोवरए	मजैवि.
5.	अणगारे	मजैवि.
6.	अहं	मजैवि.
	अधं	आचा. पाठा. 1.1.5.41, पाटि. 12, प्रति हे 1, 2, 3, इ, ला.
		आचा. प्रति* ला.
	अध	आचा. प्रति* जे.

Jain Education International For Private & Personal Use Only. www.jainelibrary.org

पाईनं पासमाने[7] रूवाणि[8] पासति, सुणमाने[9] सद्दानि[10] सुणेति । उड्ढं अधं[11] तिरियं पाईनं मुच्छमाने[12] रूवेसु मुच्छति, सद्देसु यावि[13] ।

॥ .... एस लोके वियक्खाते[14]

एत्थ अगुत्ते अनाणाए[15]......॥

7.	**पासमाणे**	मजैवि.
8.	**रूवाइं**	मजैवि.
	विरूवरूवाणि	सूत्रकृ. 1.4.1.6
9.	**सुणमाणे**	मजैवि.
10.	**सद्दाइं**	मजैवि.
	-सद्दाणि	आचा. 2.11.669
	सद्दाणि	सूत्रकृ. 1.4.1.6; 14.6
11.	**अहं**	मजैवि.
	अधं	आचा. पाठा. 1.1.5.41, पाटि. 17, प्रति खे, जै, हे 1, 2, 3, इ.
		आचा. प्रति* पू, जे, ला.
12.	**मुच्छमाणे**	मजैवि.
13.	**आवि**	आगमो, जैविभा.
		आचा. प्रति* पू, जे, ला.
14.	**वियाहिते**	मजैवि.
	वियक्खाता	आचा. 1.5.6.174
15.	**अणाणाए**	मजैवि.
16.	**पुणो पुणो**	मजैवि.
17.	**गुणासाते**	मजैवि.
	आसादेमाणे	आचा. 1.8.6.223
	अणासादमाणे	आचा. 1.8.6.223
	आसादेज्जा	आचा. 2.3.2.487
	आसादिज्जन्त	ऋषिभा. 45.43

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

॥ पुनो[16] पुनो [17]गुणासादे वङ्कसमायारे[18] पमत्ते गारमावसे ॥

42. ॥ लज्जमाना[19] पुढो पास ॥

अनगारा[20] मो त्ति एके[21] पवदमाना[22], जमिणं विरूवरूवेहि[23]. सत्थेहि[24] [25]वनस्सतिकम्मसमारम्भेण[26] वनस्सतिसत्थं[27] समारम्भमाणे[28] अन्ने[29] वऽनेकरूवे[30] पाणे विहिंसति ।

18.	वंकसमायारे	मजैवि.
	वङ्कसमायारे	शु.
19.	लज्जमाणा	मजैवि.
20.	अणगारा	मजैवि.
21.	एगे	मजैवि.
22.	पवदमाणा	मजैवि.
23.	विरूवरूवेहिं	मजैवि.
24.	सत्थेहिं	मजैवि.
25.	वणस्सति-	मजैवि.
26.	-कम्मसमारंभेणं	मजैवि.
	-कम्मसमारम्भेणं	शु.
	-कम्मसमारंभेण	आचा. प्रति* खं 1.
27.	वणस्सतिसत्थं	मजैवि.
28.	समारभमाणे	मजैवि.
	समारम्भमाणे	शु.
29.	अण्णे	मजैवि.
	अन्ने	शु.
		आचा. प्रति* ला.
30.	अणेगरूवे	मजैवि.

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

43 तत्थ खलु भगवता परिन्ना[31] पवेदिता —

इमस्स चेव जीवितस्स[32] परिवन्दन[33]-मानन-[34] पूजनाए जाति[35]-मरण-मोयनाए[36] दुक्खपडिघातहेतुं—

से सयमेव वनस्सतिसत्थं[37] समारम्भति[38], अन्नेहि[39] वा वनस्सतिसत्थं[37] समारम्भावेति[40], अन्ने[41] वा वनस्सतिसत्थं[37]

31.	**परिण्णा**	मजैवि.
	परिन्ना	शु.
		आचा. प्रति* पू, जे, ला.
32.	**जीवियस्स**	मजैवि.
33.	**परिवंदण-**	मजैवि.
	परिवन्दन-	शु.
34.	**-माणण-पूयणाए**	मजैवि.
35.	**जाती-**	मजैवि.
	जाइ-	शु.
36.	**-मोयणाए**	मजैवि.
37.	**वणस्सति-**	मजैवि.
38.	**समारभति**	मजैवि.
	समारम्भइ	शु.
39.	**अण्णेहिं**	मजैवि.
	अन्नेहिं	शु.
		आचा. प्रति* पू, जे,
40.	**समारभावेति**	मजैवि.
	समारम्भावेइ	शु.
41.	**अण्णे**	मजैवि.
	अन्ने	शु.
		आचा. प्रति* जे, ला.

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

समारम्भमाणे[42] समनुजानति[43] । तं से अहिताए[44] तं से अबोधीए[45] ।

44. से त्तं सम्बुज्झमाने[46] आदानीयं[47] समुट्ठाय[48] सोच्चा भगवतो अनगाराणं[49] वा[50] इधमेकेसिं[51] नातं[52] भवति—

एस खलु गन्थे[53], एस खलु मोहे, एस खलु मारे, एस खलु नरके[54] ।

42.	समारभमाणे	मजैवि.
43.	समणुजाणति	मजैवि.
44.	अहियाए	मजैवि.
45.	अबोहीए	मजैवि.
46.	संबुज्झमाणे	मजैवि.
47.	आयाणीयं	मजैवि.
48.	समुट्ठाए	मजैवि.
	समुट्ठाय	आचा. पाठा. 1.1.5.44, पाटि. 12, प्रति हे 3
49.	अणगाराणं	मजैवि.
50.	वा	नास्ति मजैवि.
	वा	शु, आगमो, जैविभा.
51.	इहमेगेसिं	मजैवि.
52.	णायं	मजैवि.
	नायं	शु.
		आचा. प्रति* खं 3.
53.	गंथे	मजैवि.
	गन्थे	शु.
54.	णिरए	मजैवि.
	नरए	शु.
	णरए	आगमो.
	नरए	आचा. प्रति* खं 1.

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

॥ इच्चत्थं गढिते[55] लोके[56] ॥

जमिणं विरूवरूवेहिं[57] सत्थेहिं[58] [59]वनस्सतिकम्मसमारम्भेण[60] वनस्सतिसत्थं[61] समारम्भमाणे[62] अन्ने[63] वऽनेकरूवे[64] पाणे विहिंसति ।

45. से बेमि —

॥ इमं पि जातिधम्मयं, एतं[65] पि जातिधम्मयं ॥

॥ इमं पि वुड्ढिधम्मयं, एतं पि वुड्ढिधम्मयं ॥

॥ इमं पि चित्तमन्तयं[66], एतं पि चित्तमन्तयं[66] ॥

	निरए	आचा. प्रति* खं 3, पू. ला.
	निरय	आचा. प्रति* जे.
55.	गढिए	मजैवि.
56.	लोए	मजैवि.
57.	विरूवरूवेहिं	मजैवि.
58.	सत्थेहिं	मजैवि.
59.	वणस्सति-	मजैवि.
60.	-कम्मसमारंभेणं	मजैवि.
	-कम्मसमारम्भेणं	शु.
	-समारंभेण	आचा. प्रति* खं. 1, जे.
61.	वणस्सतिसत्थं	मजैवि.
62.	समारभमाणे	मजैवि.
	समारम्भमाणे	शु.
63.	अण्णे	मजैवि.
	अन्ने	शु.
		आचा. प्रति* पू, जे, ला.
64.	अणेगरूवे	मजैवि.

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

॥ इमं पि छिन्नं[67] मिलाति, एतं पि छिन्नं[68] मिलाति ॥

॥ इमं पि आहारगं, एतं पि आहारगं ॥

॥ इमं पि अनितियं[69], एतं पि अनितियं[69] ॥

॥ इमं पि असासतं[70], एतं पि असासतं ॥

65.	एयं	मजैवि. (सभी पदों में)
	एतं	देखो पीछे उद्देशक 4, सूत्र नं. 33, पाटि. 10.
66.	चित्तमंतयं	मजैवि.
	चित्तमन्तयं	शु.
67.	छिण्णं	मजैवि.
	छिन्नं	शु, जैविभा.
		आचा. प्रति* खं 1, पू, जे, ला.
	च्छिन्नं	आचा. प्रति* खं 3.
68.	छिण्णं	मजैवि.
	छिन्नं	शु, जैविभा.
		आचा. प्रति* खं 1, खं 3, पू, जे, ला.
69.	अणितियं	मजैवि.
	अनिच्चयं	शु.
	नितिए	सूत्रकृ. 2.6.822
70.	असासयं	मजैवि.
	असासतं	आचा. 1.5.2.153
		सूत्रकृ. पाठा. 1.12.554, पाटि. 20, चू.
		ऋषिभा. 24 (पृ. 47.7)
	असासते	सूत्रकृ. 1.1.3.66; 2.5.755
		ऋषिभा. 24(पृ. 47.3)
	सासतं	सूत्रकृ. 2.5.755
		ऋषिभा. 3(पृ. 5.18), 15(पृ. 29.15),
		21 (पृ. 41.7), 23 (पृ. 45.19)

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

॥ इमं पि चयावचइयं[71], एतं पि चयावचइयं[71] ॥
॥ इमं पि विपरिणामधम्मयं[72], एतं पि विपरिणामधम्मयं ॥[72]

46. एत्थ सत्थं समारम्भमाणस्स[73] इच्चेते आरम्भा[74] अपरिन्नाता[75] भवन्ति[76] । एत्थ सत्थं असमारम्भमाणस्स[77] इच्चेते आरम्भा[74] परिन्नाता[78] भवन्ति[76] ।

	सासता	सूत्रकृ. 2.1.656
	सासते	सूत्रकृ. 1.1.1.15, 4.81; 2.1.680, 4.753
71.	चयोवचइयं	मजैवि.
	चयावचइयं	शु, जैविभा.
	चयाऽवचइयं	आचा. पाठा. 1.1.5.45, पाटि. 3, 4, प्रति हे 3, ला.
	चयावचइयं	आंचा. पाठा. 1.1. 5.45, (पृ. 417 प्रति संदी.)
72.	विप्परिणामधम्मयं	मजैवि.
	विपरिणामधम्मयं	शु, आगमो, जैविभा.
		आचा. प्रति* पू, जे.
73.	समारभमाणस्स	मजैवि.
	समारम्भमाणस्स	शु.
74.	आरंभा	मजैवि.
	आरम्भा	शु.
75.	अपरिण्णाता	मजैवि.
	अपरिन्नाया	शु.
76.	भवंति	मजैवि.
	भवन्ति	शु.
77.	असमारभमाणस्स	मजैवि.
78.	परिण्णाया	मजैवि.
	परिन्नाया	शु.
	परिण्णाता	आचा. प्रति* ला.

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

47. तं परिन्नाय[79] मेधावी[80] नेव[81] सयं वनस्सतिसत्थं[82] समारम्भेज्जा[83] [81]नेवऽन्नेहि[84] वनस्सतिसत्थं[82] समारम्भावेज्जा[85], [81]नेवऽन्ने[86] वनस्सतिसत्थं[82] समारम्भन्ते[87] समनुजानेज्जा[88] ।

79.	**परिण्णाय**	मजैवि.
	परिन्नाय	शु.
		आचा. प्रति* ला.
80.	**मेहावी**	मजैवि.
	मेधावी	आचा. प्रति* खं 3, ला.
81.	**णेव**	मजैवि.
	नेव	शु.
		आचा. प्रति* खं 1.
82.	**वणस्सतिसत्थं**	मजैवि.
83.	**समारभेज्जा**	मजैवि.
84.	**अण्णेहिं**	मजैवि.
	अन्नेहिं	शु.
		आचा. प्रति* ला.
85.	**समारभावेज्जा**	मजैवि.
	समारम्भावेज्जा	शु.
86.	**अण्णे**	मजैवि.
	अन्ने	शु.
		आचा. प्रति* खं 1, ला.
87.	**समारभंते**	मजैवि.
	समारभन्ते	शु.
88.	**समणुजाणेज्जा**	मजैवि.

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

48. जस्सेते वनस्सतिसत्थसमारम्भा[89] परिन्नाता[90] भवन्ति[91] से हु मुनी[92] परिन्नातकम्मे[93]

त्ति बेमि ।

। सत्थपरिन्नाए पञ्चमे उद्देसगे समत्ते ।

89.	-सत्थसमारंभा	मजैवि.
	-समारम्भा	शु.
90.	परिण्णाया	मजैवि.
	परिन्नाया	शु.
		आचा. प्रति* ला.
91.	भवंति	मजैवि.
	भवन्ति	शु.
92.	मुणी	मजैवि.
93.	परिण्णायकम्मे	मजैवि.
	परिन्नायकम्मे	शु.
		आचा. प्रति* पू, जे, ला.

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

छट्ठे उद्देसगे

49. से बेमि —

सन्तिमे तसा पाणा, तं अधा[1]— अण्डया[2] पोतया जराउया रसया संसेदया[3] सम्मुच्छिमा उब्भिया ओववातिया[4] ।

एस संसारे त्ति पवुच्चति

मन्दस्स[5] अविजानतो[6] ॥

1.	**जहा**	मजैवि.
2.	**अंडया**	मजैवि.
	अण्डया	शु.
3.	**संसेयया**	मजैवि.
	संसेदया	सूत्रकृ. 1.7.7.387
4.	**उववातिया**	मजैवि.
	ओववाइया	जैविभा.
	ओववातिय	**'अहोववातिए' (अहा+ओववातिए)** आचा. 1.4.2.135
5.	**मंदस्स**	मजैवि.
6.	**अवियाणओ**	मजैवि.
	अविजाणओ	शु.
		आचा. प्रति* खं 1.
	अविजाणतो	आचा. प्रति* खं 3.
	(मंदस्साविजाणतो)	आचा. 1.5.1.148
	अविजाणतो	आचा. 1.5.1.149, 2.154
		आचा. पाठा. 1.1.6.49, पाटि. 18, प्रति शां, खं, खे, जै.

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

॥ निज्झाइत्ता[7] पडिलेहित्ता पत्तेगं[8] परिनिव्वाणं[9] ॥

सव्वेसिं पाणानं[10] सव्वेसिं भूतानं[11] सव्वेसिं जीवानं[12] सव्वेसिं सत्तानं[13] असातं[14] अपरिनिव्वाणं[15] ।

॥ महब्भयं दुक्खं ति बेमि ॥

7.	णिज्झाइत्ता	मजैवि.
	निज्झाइत्ता	शु, आगमो.
		आचा. प्रति* खं 1, ला.
	निज्झायत्ता	आचा. प्रति* जे.
8.	पत्तेयं	मजैवि.
	पत्तेगा	उत्तरा. 36.1545
9.	परिणिव्वाणं	मजैवि.
	परिनिव्वाणं	आगमो.
	परिनेव्वाणं	आचा. प्रति* जे, ला.
10.	पाणाणं	मजैवि.
11.	भूताणं	मजैवि.
12.	जीवाणं	मजैवि.
13.	सत्ताणं	मजैवि.
14.	अस्सातं	मजैवि.
	असायं	आचा. 1.4.2.139 (दो बार)
	असातं	आचा. पाठा. 1.4.2.139, पाटि. 11, प्रति खे, जै, इ.
	असाता- (असातादुक्खेण)	ऋषिभा. 15 (पृ. 29.6, 8, 9)
15.	अपरिणिव्वाणं	मजैवि.
	अपरिनिव्वाणं	आगमो.
	अपरिनेव्वाणं	आचा. प्रति* पू, जे.

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

॥ तसन्ति[16] पाणा पदिसो दिसासु य ॥

तत्थ तत्थ पुढो पास आतुरा परितावेन्ति[17] ।

सन्ति[18] पाणा पुढो-सिता ।

50. ॥ लज्जमाना[19] पुढो पास ॥

'अनगारा[20] मो' त्ति एके[21] पवदमाना[22], जमिणं विरूवरूवेहि[23] सत्थेहि[24] तसकायसमारम्भेण[25] तसकायसत्थं समारम्भमाणे[26] अन्ने[27]

16.	तसंति	मजैवि.
	तसन्ति	शु.
17.	परितावेंति	मजैवि.
	परियावेन्ति	शु.
18.	संति	मजैवि.
	सन्ति	शु.
19.	लज्जमाणा	मजैवि.
20.	अणगारा	मजैवि.
21.	एगे	मजैवि.
22.	पवदमाणा	मजैवि.
23.	विरूवरूवेहिं	मजैवि.
	विरूवरूवेहि	आचा. प्रति* जे.
24.	सत्थेहिं	मजैवि.
25.	-समारंभेणं	मजैवि.
	-समारम्भेणं	शु.
	-समारंभेण	आगमो.
26.	समारंभमाणे	मजैवि.
	समारम्भमाणे	शु.

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

वऽनेकरूवे[28] पाणे विहिंसति ।

51. तत्थ खलु भगवता परिन्ना[29] पवेदिता —

इमस्स चेव जीवितस्स[30] परिवन्दन[31]-मानन[32]-पूजनाए[33] जाति[34]-मरण-मोयनाए[35] दुक्खपडिघातहेतुं[36] —

से सयमेव तसकायसत्थं समारम्भति[37], अन्नेहि[38] वा तसकायसत्थं समारम्भावेति[39], अन्ने[40] वा तसकायसत्थं समारम्भमाणे[41]

27.	अण्णे	मजैवि.
	अन्ने	शु.
		आचा. प्रति* खं 1, ला.
28.	वऽणेगरूवे	मजैवि.
29.	परिण्णा	मजैवि.
	परिन्ना	शु.
30.	जीवियस्स	मजैवि.
31.	परिवंदण-	मजैवि.
	परिवन्दण-	शु.
32.	-माणण-	मजैवि.
33.	-पूयणाए	मजैवि.
34.	जाती-	मजैवि.
	जाइ-	शु.
	जाति-	आचा. पाठा. 1.1.6.51, पाटि. 5, प्रति सं, खं, खे, जै, इ.
35.	मोयणाए	मजैवि.
36.	-पडिघाय-	मजैवि.
37.	समारभति	मजैवि.
	समारम्भइ	शु.

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

समनुजानति[42] । तं से अहिताए तं से अबोधीए ।

52. से त्तं सम्बुज्झमाने[43] आदानीयं[44] समुट्ठाय[45] सोच्चा भगवतो अनगाराणं[46] वा इधमेकेसिं[47] नातं[48] भवति —

38.	अण्णेहिं	मजैवि.
	अन्नेहिं	शु.
		आचा. प्रति* पू, जे, ला.
39.	समारभावेति	मजैवि.
	समारम्भावेइ	शु.
40.	अण्णे	मजैवि.
	अन्ने	शु.
41.	समारभमाणे	मजैवि.
42.	समणुजाणति	मजैवि.
43.	संबुज्झमाणे	मजैवि.
44.	आयाणीयं	मजैवि.
45.	समुट्ठाए	मजैवि.
	समुट्ठाय	आगमो.
		आचा. पाठा. 1.1.6.52, पाटि. 9, प्रति हे 1, 2, 3, ला.
		आचा. प्रति* पू, जे, ला.
46.	अणगाराणं	मजैवि.
47.	इहमेगेसिं	मजैवि.
	इहमेकेसिं	आचा. प्रति* खं 1.
48.	णायं	मजैवि.
	नायं	शु.
		आचा. प्रति* पू, जे.

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

एस खलु गन्थे,[49] एस खलु मोहे, एस खलु मारे, एस खलु नरके[50] ।

॥ इच्चत्थं गढिते[51] लोके[52] ॥

जमिणं विरूवरूवेहि[53] सत्थेहि[54] तसकायकम्मसमारम्भेण[55] तसकायसत्थं समारम्भमाणे[56] अन्ने[57] वऽनेकरूवे[58] पाणे विहिंसति ।

से बेमि —

अप्पेके[59] अच्चाए वधेन्ति[60], अप्पेके अजिनाए[61] वधेन्ति[62],

---

49.	**गंथे**	मजैवि.
	गन्थे	शु.
50.	**निरए**	मजैवि.
	नरए	शु.
	णरए	आगमो, जैविभा.
51.	**गढिए**	मजैवि.
52.	**लोगे**	मजैवि.
53.	**विरूवरूवेहिं**	मजैवि.
54.	**सत्थेहिं**	मजैवि.
55.	**-समारंभेणं**	मजैवि.
	-समारम्भेणं	शु.
	-समारंभेण	आगमो.
56.	**समारभमाणे**	मजैवि.
	समारम्भमाणे	शु.
57.	**अण्णे**	मजैवि.
	अन्ने	शु.
		आचा. प्रति* पू, जे, ला.
58.	**वऽणेगरूवे**	मजैवि.
59.	**अप्पेगे**	मजैवि.
		पीछे सूत्र नं. 15 में ऐसे ही प्रयोग हैं ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

अप्पेके मंसाए वधेन्ति[63], अप्पेके सोणिताए वधेन्ति[62] अप्पेके हिदयाए[64] वधेन्ति,[65] एवं पित्ताए वसाए पिच्छाए पुच्छाए वालाए सिङ्गाए[66] विसाणाए दन्ताए[67] दाढाए नहाए ण्हारुणीए अट्ठीए[68] अट्ठिमिज्जाए[69] अत्थाए[70] अनत्थाए ।

60.	**वधेंति**	मजैवि.
61.	**अजिणाए**	मजैवि.
62.	**वधेंति**	मजैवि.
	वहन्ति	शु.
63.	**वहेंति**	मजैवि.
	वहन्ति	शु.
64.	**हिययाए**	मजैवि.
		'हिदय' के लिए देखो–उद्देशक 2, सूत्र. नं. 15
65.	**वहिंति**	मजैवि.
	वहन्ति	शु.
66.	**सिंगाए**	मजैवि.
	सिङ्गाए	शु.
67.	**दंताए**	मजैवि.
	दन्ताए	शु.
68.	**अट्ठिए**	मजैवि.
	अट्ठीए	शु, आगमो, जैविभा.
69.	**अट्ठिमिंजाए**	मजैवि.
	-मिञ्जाए	शु.
	अट्ठिमिज्जाए	आचा. पाठा. 1.1.6.52, पाटि. 19, प्रति खं, हे 3, इ.
		आचा. प्रति* खं 3.
	-मिज्झाए	आचा. प्रति* पू.

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

अप्पेके[71] हिंसिंसु मे त्ति वा वधेन्ति[72], अप्पेके हिंसन्ति[73] मे

70.	**अट्ठाए अणट्ठाए**	मजैवि.
	अत्थाए	
	(भोगत्थाए)	सूत्रकृ. 1.4.2.295
	अत्थ	
	(अत्थसंपदाणं)	आचा. 2.15. 747
	(इच्चत्थं)	आचा. 1.1.2.14, 3.25, 4.36, 5.44, 6.52, 7.59; 2.1.63
	(अत्थेहि)	सूत्रकृ. 2.6.802
	(इच्चत्थतं)	सूत्रकृ. 2.6.828
	(अत्थसंजुत्तं)	दशवै. 5.2.256
	(आजीवत्थं)	ऋषिभा. 41.9
	(अत्थेहिं)	सूत्रकृ. 2.6.802
	(किमत्थं)	ऋषिभा. 38.23, एवं इस ग्रंथ के हरेक अध्ययन की अन्तिम पंक्ति
	(अत्थसंतती)	ऋषिभा. 38.26
	(अत्थादाईण)	ऋषिभा. 38.26
	(अत्थादायिं)	ऋषिभा. 38.26
	(जहत्थं)	ऋषिभा, 24.35, 39 (पृ. 89.13)
	(णिरत्थकं)	ऋषिभा. 30.5, 38.18
	(सत्थकं)	ऋषिभा. 38.18
71.	**अप्पेगे**	मजैवि.
72.	**वधेन्ति**	नास्ति मजैवि.
	वहन्ति	शु.
	वहंति	आगमो, जैविभा.
		आचा. प्रति* पू, जे, ला.
73.	**हिंसंति**	मजैवि.
	हिंसन्ति	शु.

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

त्ति[74] वा वधेन्ति[75], अप्पेके हिंसिस्सन्ति[76] मे[74] त्ति वा वधेन्ति[77] ।

53. एत्थ सत्थं समारम्भमाणस्स[78] इच्चेते आरम्भा[79] अपरिन्नाता[80] भवन्ति[81] । एत्थ सत्थं असमारम्भमाणस्स[82] इच्चेते आरम्भा[79] परिन्नाता[83] भवन्ति[84] ।

74.	मे त्ति	शु, आगमो, जैविभा.
		आचा. पाठा. 1.1.6.52, पाटि. 5, प्रति हे 1, 2, 3, इ, ला.
		आचा. प्रति* पू, जे, ला.
		नास्ति मजैवि.
75.	वधेंति	नास्ति मजैवि.
	वहन्ति	शु.
	वहंति	आगमो, जैविभा.
		आचा. प्रति* पू, जे, ला.
76.	हिंसिस्संति	मजैवि.
	हिंसिस्सन्ति	शु.
77.	वधेंति	मजैवि.
78.	समारभमाणस्स	मजैवि.
79.	आरंभा	मजैवि.
	आरम्भा	शु.
80.	अपरिण्णाया	मजैवि.
	अपरिन्नाया	शु.
81.	भवंति	मजैवि.
	भवन्ति	शु.
82.	असमारभमाणस्स	मजैवि.
83.	परिण्णाया	मजैवि.
	परिन्नाया	शु.
84.	भवंति	मजैवि.
	भवन्ति	शु, आगमो.

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

54. तं परिन्नाय[85] मेधावी नेव[86] सयं तसकायसत्थं समारम्भेज्जा[87], [88]नेवऽन्नेहि[89] तसकायसत्थं समारम्भावेज्जा,[90] [91]नेवऽन्ने[92] तसकायसत्थं समारम्भन्ते[93] समनुजानेज्जा[94] ।

85.	परिण्णाय	मजैवि.
	परिन्नाय	शु.
86.	णेव	मजैवि.
	नेव	शु.
		आचा. प्रति* पू, जे, ला.
87.	समारभेज्जा	मजैवि.
88.	णेव	मजैवि.
	नेव	शु.
		आचा. प्रति* खं 1, पू, जे, ला.
89.	अण्णेहिं	मजैवि.
	अन्नेहिं	शु.
		आचा. प्रति* खं 1, जे, ला.
90.	समारभावेज्जा	मजैवि.
	समारम्भावेज्जा	शु.
91.	णेव	मजैवि.
	नेव	शु.
		आचा. प्रति* खं 1, पू, जे.
92.	अण्णे	मजैवि.
	अन्ने	शु.
		आचा. प्रति* पू, जे.
93.	समारभंते	मजैवि.
	समारभन्ते	शु.
94.	समणुजाणेज्जा	मजैवि.

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

55. जस्सेते तसकायसत्थसमारम्भा[95] परिन्नाता[96] भवन्ति[97] से हु मुनी[98] परिन्नातकम्मे[99]

त्ति बेमि ।

। सत्थपरिन्नाए छट्ठे उद्देसगे समत्ते ।

95.	-समारंभा	मजैवि.
	-समारम्भा	शु.
96.	परिण्णाया	मजैवि.
	परिन्नाया	शु.
97.	भवंति	मजैवि.
	भवन्ति	शु.
98.	मुणी	मजैवि.
99.	परिण्णातकम्मे	मजैवि.
	परिन्नायकम्मे	शु.

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

सत्तमे उद्देसगे

56 ॥ पभू एजस्स दुगुञ्छनाए[1]

[2]आतङ्कदंसी अहितं[3] ति नच्चा[4] ॥

जे अज्झत्थं जानति[5] से बहिया जानति[5] जे बहिया जानति[5] से अज्झत्थं जानति[5] । एतं तुलमन्नेसिं[6] ।

॥ इध[7] सन्तिगता[8] दविया [9]नावकङ्खन्ति वीजितुं[10] ॥

1.	दुगुंछणाए	मजैवि.
	दुगुञ्छणाए	शु.
2.	आतंकदंसी	मजैवि.
	आयङ्कदंसी	शु.
3.	अहियं	मजैवि.
	अहिताए	आचा. 1.1.3.24, 4.35, 6.51
	अहिते	सूत्रकृ. 2.2.704, 713, पाठा. 1.1.2.36, पाटि. 16, चू.
4.	णच्चा	मजैवि.
	नच्चा	शु, जैविभा.
		आचा. प्रति* पू, जे.
5.	जाणति	मजैवि.
6.	-अण्णेसिं	मजैवि.
	-अन्नेसिं	शु, आगमो.
		आचा. प्रति* खं 3, पू. जे.
7.	इह	मजैवि.
8.	संतिगता	मजैवि.
	सन्तिगया	शु.

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

57. ॥ लज्जमाना[11] पुढो पास ॥

'अनगारा[12] मो' त्ति एके[13] पवदमाना[14], जमिणं विरूवरूवेहि[15] सत्थेहि[16] वाउकम्मसमारम्भेण[17] वाउसत्थं समारम्भमाणे[18] अन्ने[19] वऽनेकरूवे[20] पाणे विहिंसति ।

9.	णावकंखंति	मजैवि.
	नावकङ्खन्ति	शु.
10.	जीविउं	मजैवि.
	वीजिउं	जैविभा.
	वीयितुं	आचा. पाठा. 1.1.7.56, पाटि. 17, चू. दशवै. पाठा. 6.37, प्रति अचू.
	वीजिउं	दशवै. पाठा. 6.37, प्रति खं. 3
11.	लज्जमाणा	मजैवि.
12.	अणगारा	मजैवि.
13.	एगे	मजैवि.
14.	पवदमाणा	मजैवि.
15.	विरूवरूवेहिं	मजैवि.
16.	सत्थेहिं	मजैवि.
17.	-समारंभेणं	मजैवि.
	-समारम्भेणं	शु.
18.	समारंभमाणे	मजैवि.
	समारम्भमाणे	शु.
19.	अण्णे	मजैवि.
	अन्ने	शु.
		आचा. प्रति* जे, ला.
20.	अणेगरूवे	मजैवि.

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

58. तत्थ खलु भगवता परिन्ना[21] पवेदिता —
इमस्स चेव जीवितस्स[22]परिवन्दन[23]-मानन[24] - पूजनाए[25]
[26]जाति-मरण-मोयनाए[27] दुक्खपडिघातहेतुं —
से सयमेव वाउसत्थं समारम्भति[28], अन्नेहि[29] वा वाउसत्थं समारम्भावेति,[30] अन्ने[31] वा वाउसत्थं समारम्भन्ते[32] समनुजानति[33]।

21.	परिण्णा	मजैवि.
	परिन्ना	शु.
22.	जीवियस्स	मजैवि.
23.	परिवंदण-	मजैवि.
	परिवन्दण-	शु.
24.	-माणण-	मजैवि.
25.	-पूयणाए	मजैवि.
26.	जाती-	मजैवि.
	जाइ-	शु.
	जाति-	आचा. प्रति* ला.
27.	मोयणाए	मजैवि.
28.	समारभति	मजैवि.
	समारम्भइ	शु.
29.	अण्णेहिं	मजैवि.
	अन्नेहिं	शु.
		आचा. प्रति* खं 1, पू, जे, ला.
30.	समारभावेति	मजैवि.
	समारम्भावेइ	शु.
31.	अण्णे	मजैवि.
	अन्ने	शु.
		आचा. प्रति* पू, जे, ला.

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

तं से अहिताए[34] तं से अबोधीए।

59. से त्तं सम्बुज्झमाने[35] आदानीयं[36] समुट्ठाय[37] सोच्चा भगवतो अनगाराणं[38] वा [39]इधमेकेसिं[40] नातं[41] भवति —

एस खलु गन्थे[42], एस खलु मोहे, एस खलु मारे, एस खलु नरके[43]।

32.	समारभंते	मजैवि.
	समारम्भन्ते	शु.
33.	समणुजाणति	मजैवि.
34.	अहियाए	मजैवि.
35.	संबुज्झमाणे	मजैवि.
36.	आयाणीयं	मजैवि.
37.	समुट्ठाए	मजैवि.
	समुट्ठाय	आचा. पाठा. 1.1.7.59, पाटि. 8, प्रति खं, ला.
		आचा. प्रति* खं 3.
38.	अणगाराणं	मजैवि.
39.	इहं	मजैवि.
	इधं	आचा. पाठा. 1.2.1.64, पाटि. 12, प्रति खं.
40.	एगेसिं	मजैवि.
41.	णातं	मजैवि.
	नायं	शु.
		आचा. प्रति* पू, जे, ला.
42.	गंथे	मजैवि.
	गन्थे	शु.
43.	णिरए	मजैवि.
	नरए	शु.
	निरए	आचा. प्रति* खं 1, पू, जे.

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

॥ इच्चत्थं गढिते लोके[44] ॥

जमिणं विरूवरूवेहि[45] सत्थेहि वाउकम्मसमारम्भेण[46] वाउसत्थं समारम्भमाणे[47] अन्ने[48] वऽनेकरूवे[49] पाणे विहिंसति ।

60 से बेमि —

॥ सन्ति[50] सम्पातिमा[51] पाणा
आहच्च सम्पतन्ति[52] य ॥

फरिसं च खलु पुट्ठा एके[53] [54]सङ्घातमावज्जन्ति । जे तत्थ

44.	गढिए लोए	मजैवि.
45.	विरूवरूवेहिं	मजैवि.
	सत्थेहिं	मजैवि.
46.	-समारंभेणं	मजैवि.
	-समारम्भेणं	शु.
	-समारम्भेण	आचा. प्रति* खं 3.
47.	समारभमाणे	मजैवि.
48.	अण्णे	मजैवि.
	अन्ने	शु.
		आचा. प्रति* पू, जे.
49.	वऽणेगरूवे	मजैवि.
50.	संति	मजैवि.
	सन्ति	शु.
51.	संपाइमा	मजैवि.
	संपातिमा	आचा. 1.1.4.37
52.	संपतंति	मजैवि.
	संपयन्ति	शु.
53.	एगे	मजैवि.

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

[54]सङ्घातमावज्जन्ति ते तत्थ परियावज्जन्ति[55] । जे तत्थ परियावज्जन्ति[55] ते तत्थ उद्दायन्ति[56] ।

एत्थ सत्थं समारम्भमाणस्स[57] इच्चेते आरम्भा[58] अपरिन्नाता[59] भवन्ति[60] । एत्थ सत्थं असमारम्भमाणस्स[61] इच्चेते आरम्भा[58]

54.	संघायमा-	मजैवि.
	-आवज्जंति	मजैवि.
	-आवज्जन्ति	शु.
55.	परियाविज्जंति	मजैवि.
	परियाविज्जन्ति	शु.
	परियावज्जंति	आगमो, जैविभा.
		आचा. प्रति* पू, जे.
		आचा. पाठा. 1.1.4.37, पाटि. 1, चू.
56.	उद्दायंति	मजैवि.
	उद्दायन्ति	शु.
57.	समारभमाणस्स	मजैवि.
	समारम्भमाणस्स	शु.
58.	आरंभा	मजैवि.
	आरम्भा	शु.
59.	अपरिण्णाता	मजैवि.
	अपरिन्नाया	शु.
		आचा. प्रति* ला.
60.	भवंति	मजैवि.
	भवन्ति	शु.
61.	असमारभमाणस्स	मजैवि.

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

परिन्नाता[62] भवन्ति[७0] ।

61. तं परिन्नाय[63] मेधावी[64] नेव[65] सयं वाउसत्थं समारम्भेज्जा[66], [67]नेवऽन्नेहिं[68] वाउसत्थं समारम्भावेज्जा[69] नेवऽन्ने[70]

62.	**परिण्णाता**	मजैवि.
	परिन्नाया	शु.
	परिन्नाता	आचा. प्रति* ला.
63.	**परिण्णाय**	मजैवि.
	परिन्नाय	शु.
		आचा. प्रति* ला.
64.	**मेहावी**	मजैवि.
	मेधावी	आचा. प्रति* खं 3.
65.	**णेव**	मजैवि.
	नेव	शु.
		आचा. प्रति* खं 1.
66.	**समारभेज्जा**	मजैवि.
67.	**णेव**	मजैवि.
	नेव	शु.
		आचा. प्रति* खं 1.
68.	**अण्णेहिं**	मजैवि.
	अन्नेहिं	शु.
		आचा. प्रति* ला.
69.	**समारभावेज्जा**	मजैवि.
	समारम्भावेज्जा	शु.

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

वाउसत्थं समारम्भन्ते[71] समनुजानेज्जा[72] ।

जस्सेते वाउसत्थसमारम्भा[73] परिन्नाता[74] भवन्ति[75] से हु मुनी[76] परिन्नातकम्मे[77]

त्ति बेमि ।

70.	णेवऽण्णे	मजैवि.
	नेवऽन्ने	शु.
	नेवण्णे	आचा. प्रति* खं 1.
	णेवन्ने	आचा. प्रति* पू, जे, ला.
	णेवन्नेहिं	आचा. पाठा. 1.1.7.61, पाटि. 14, प्रति खे, जै, खं.
71.	समारभंते	मजैवि.
	समारभन्ते	शु.
72.	समणुजाणेज्जा	मजैवि.
73.	-समारंभा	मजैवि.
	-समारम्भा	शु.
74.	परिण्णाया	मजैवि.
	परिन्नाया	शु.
		आचा. प्रति* ला.
75.	भवंति	मजैवि.
	भवन्ति	शु.
76.	मुणी	मजैवि.
77.	परिण्णायकम्मे	मजैवि.
	परिन्नायकम्मे	शु.
	परिन्नायकंमे	आचा. प्रति* ला.

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

62. ॥ एत्थं पि जान[78] उवादीयमाना[79] ॥

जे आयारे न[80] रमन्ति[81] ।

॥ आरम्भमाणा[82] विनयं[83] वदन्ति[84] ॥

॥ छन्दोवनीता[85] अज्झोववन्ना[86]

आरम्भसत्ता[87] पकरेन्ति[88] सङ्गं[89]॥

78.	जाण	मजैवि.
79.	उवादीयमाणा	मजैवि.
80.	ण	मजैवि.
	न	शु, जैविभा.
81.	रमंति	मजैवि.
	रमन्ति	शु.
82.	आरंभमाणा	मजैवि.
	आरम्भमाणा	शु.
83.	विणयं	मजैवि.
84.	वयंति	मजैवि.
	वयन्ति	शु.
	वदंति	आचा. 1.2.4.84, 4.2.135,136, 6.1.182, 6.4.190, 191; 2.4.1.520 सूत्रकृ. 1.6.374, 7.395, 12.536; 2.2.710 (पृ. 172.12) उत्तरा. 32. 1241
	परिवदंति	आचा. 1.2.1.64
	वदन्ती	ऋषिभा. 10 (पृ. 21.15)
85.	छंदोवणीया	मजैवि.
	छन्दोवणीया	शु.
86.	अज्झोववण्णा	मजैवि.

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

से वसुमं [90]सव्वसमन्नागतपन्नाणेन[91] अप्पाणेन[92] अकरणिज्जं पावं कम्मं नो[93] अन्नेसिं[94] ।

	अज्झोववन्ना	शु.
		आचा. प्रति* खं. 1
87.	**आरंभसत्ता**	मजैवि.
	आरम्भसत्ता	शु.
88.	**पकरेंति**	मजैवि.
	पकरेन्ति	शु.
89.	**संगं**	मजैवि.
	सङ्गं	शु.
90.	**-समण्णागत-**	मजैवि.
	-समन्नागय-	शु, जैविभा.
		आचा. प्रति* खं. 1
91.	**-पण्णाणेणं**	मजैवि.
	-पन्नाणेणं	शु.
		आचा. प्रति* पू, जे.
	-पन्नाणेण	आचा. प्रति* खं 1.
	-पण्णाणेण	आचा. पाठा. 1.1.7.62, पाटि. 2, प्रति खे, जै,सं.
92.	**अप्पाणेणं**	मजैवि.
93.	**णो**	मजैवि.
	नो	शु.
		आचा. प्रति* खं 1, पू.
	तन्नो	आचा. प्रति* जे, ला.
94.	**अण्णेसिं**	मजैवि.
	अन्नेसिं	शु.
		आचा. प्रति* खं 1, पू, जे.
	अन्नेसि	आचा. प्रति* ला.

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

तं परिन्नाय[95] मेधावी[96] नेव[97] सयं छज्जीवनिकायसत्थं[98] समारम्भेज्जा[99] [100]नेवऽन्नेहि[101] छज्जीवनिकायसत्थं[102] समारम्भावे—

95.	परिण्णाय	मजैवि.
	परिन्नाय	शु.
96.	मेहावी	मजैवि.
	मेधावी	आचा. प्रति* खं 3.
97.	णेव	मजैवि.
	नेव	शु.
		आचा. प्रति* खं 1, पू, जे, ला.
98.	-णिकाय-	मजैवि.
	-निकाय-	शु, आगमो.
		आचा. प्रति* खं 1, पू, जे, ला.
99.	समारभेज्जा	मजैवि.
100.	णेव	मजैवि.
	नेव	शु.
		आचा, प्रति* खं 1, पू, जे, ला.
101.	अण्णेहिं	मजैवि.
	अन्नेहिं	शु.
		आचा. प्रति* खं 1, पू, जे, ला.
102.	-णिकाय-	मजैवि.
	-निकाय-	शु, आगमो.
		आचा. प्रति* खं 1, पू, जे, ला.
103.	समारभावेज्जा	मजैवि.

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

ज्जा[103], नेवऽन्ने[104] छज्जीवनिकायसत्थं[102] समारम्भन्ते[105] समनुजानेज्जा[106]।

जस्सेते [107]छज्जीवनिकायसत्थसमारम्भा[108] परिन्नाता[109] भवन्ति[110] से हु मुनी[111] परिन्नातकम्मे[112]

त्ति बेमि।

॥ सत्थपरिन्ना समत्ता ॥

(पढमं अज्झयनं समत्तं)

104.	णेवऽण्णे	मजैवि.
	नेवऽन्ने	शु.
		आचा. प्रति* खं 1.
	नेवन्नेहिं	आचा. प्रति* पू, जे, ला.
105.	समारभंते	मजैवि.
	समारभन्ते	शु.
106.	समणुजाणेज्जा	मजैवि.
107.	-णिकाय-	मजैवि.
	-निकाय-	शु, आगमो.
		आचा. प्रति* खं 1, पू, जे, ला.
108.	-समारंभा	मजैवि.
	-समारम्भा	शु.
109.	परिण्णाया	मजैवि.
	परिन्नाया	शु., आचा. प्रति* ला.
110.	भवंति	मजैवि.
	भवन्ति	शु.
111.	मुणी	मजैवि.
112.	परिण्णायकम्मे	मजैवि.
	परिन्नायकम्मे	शु., आचा. प्रति* ला.

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

विभाग-४

शब्दों में ध्वनिगत परिवर्तन

सामान्य प्राकृत भाषा के लिए ध्वनि-परिवर्तन सम्बन्धी जो नियम प्राकृत व्याकरणकारों ने दिये हैं वे अर्धमागधी भाषा पर कितने प्रमाण में लागू होते हैं यही यहाँ पर प्रकाश में लाया गया है ।

[इस विभाग में किये गये विश्लेषण से मुनि पुण्यविजयजी और पं. बेचरदासजी दोशी का यह अभिप्राय प्रामाणिक ठहरता है कि मूल अर्धमागधी में इतने प्रमाण में ध्वनिगत विकार नहीं होगा जितना आगम ग्रंथों के अधुना उपलब्ध संस्करणों में पाया जाता है ।]

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

स्वर

कण्ठ्य ङ् और तालव्य ञ् का स्वर के साथ या द्वित्व रूप में प्रयोग नहीं पाया जाता है परंतु सजातीय व्यंजनों के साथ उनके प्रयोग मिलते हैं, जैसे—

आतङ्क, अवकङ्खुति, सिङ्ग, जङ्घा; अनुसञ्चरति, दुगुञ्छनाए

मात्रात्मक परिवर्तन के कुछ विशिष्ट प्रयोग इस प्रकार हैं— कम्मावादी (कर्मवादी), लोकावादी (लोकवादी), मिज्जा (मेद्य), अप्पाण (अप्पण-आत्मन्), सम्मुति (सम्मति या स्वमति), बेमि (ब्रूमि) ।

व्यंजन

असंयुक्त व्यंजन

अपवाद के रूप में अव्यय में प्रारम्भिक 'य' का 'अ' मिलता है —

अधा (यथा)

[परवर्ती प्राकृतों में 'जधा' और 'जहा' रूप मिलते हैं]

प्रारंभिक और मध्यवर्ती दन्त्य नकार यथावत् पाया जाता है। अपवाद के रूप में न=ण के उदाहरण इस प्रकार हैं -

णं (नूनम्), नाण (ज्ञान), पन्नाण (प्रज्ञान), अनाण(अज्ञान), अप्पाण (आत्मन्)

इणं (एतत्), ण्हारुणी (स्नायु)

मध्यवर्ती असंयुक्त व्यंजन

मध्यवर्ती अल्पप्राण व्यंजन ('ट' वर्ग के सिवाय) क,ग,च,ज,त, द, य, का कभी कभी लोप पाया जाता है। मध्यवर्ती प का प्रायः व मिलता है और मध्यवर्ती व का प्रायः लोप नहीं मिलता है।

मध्यवर्ती महाप्राण व्यंजन कभी कभी 'ह' में बदले हुए मिलते हैं। महाप्राण 'थ' का 'ध' में परिवर्तन भी मिलता है।

मध्यवर्ती व्यंजनों में पाया जाने वाला ध्वनिगत-परिवर्तन निम्न तालिकाओं में प्रस्तुत किया जा रहा है।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

आचाराङ्ग : प्रथम अध्ययन

१. मध्यवर्ती अल्पप्राण व्यंजन

	उद्देशक	१	२	३	४	५	६	७	कुल
क=	क	८	७६	२६	१२	७	१४	१४	१५७
	ग	१	०	०	०	२	१	०	४
	अ	५	२	२	०	१०	२	०	२१
ग=	ग	११	४	६	४	६	४	६	४१
	अ	०	०	०	०	०	०	०	०
च=	च	०	०	०	०	०	२	०	२
	अ	१	१	०	३	५	०	३	१३
ज=	ज	३	५	४	२	३	५	६	२८
	अ	०	०	०	०	०	४	०	४
त=	त	६८	२६	३५	४१	५७	३०	४०	२९७
	द	०	०	०	०	०	०	०	०
	अ	१	०	०	०	०	०	०	१
द=	द	८	९	१८	७	५	९	५	६१
	अ	०	०	०	०	०	१	०	१
प=	प	०	०	१	१	२	१	१	६
	व	११	११	१८	१०	११	११	१८	९०
	अ	०	०	०	०	०	०	०	०
य=	य	१	२	६	३	८	१६	१५	५१
	अ	१	०	०	०	१	०	१०	१२
व=	व	१२	२६	१९	११	२५	१६	२३	१३२
	अ	०	०	०	०	०	०	०	०

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

	संख्या			प्रतिशत		
व्यंजन	यथावत्	घोष	लोप	यथावत्	घोष	लोप
क	१५७	४	२१	८६.५	२	११.५
ग	४१	०	०	१००	०	०
च	२	०	१३	१२.५	०	८७.५
ज	२८	०	४	८७.५	०	१२.५
त	२९७	०	१	९९.५	०	०.५
द	६१	०	१	९८.५	०	१.५
प	६	९०	०	+६	-९४	०
य	५१	०	१२	८१	०	१९
व	१३२	०	०	१००	०	०
कुल	७७५	९४	५२	८४	१०	६

२. मध्यवर्ती महाप्राण व्यंजन

उद्देशक		१	२	३	४	५	६	७	कुल
ख =	ख	०	०	०	०	०	०	०	०
	ह	०	२	०	०	०	०	०	२
घ =	घ	०	१	१	१	१	१	१	६
	ह	०	०	०	२	०	०	०	२
थ =	थ	०	१	०	०	०	०	०	१
	ध	२	०	२	०	०	१	०	५
	ह	०	०	०	०	०	०	०	०
ध =	ध	२	३	२	३	५	१०	३	२८
	ह	०	०	०	०	०	०	०	०
फ =	फ	०	०	०	०	०	०	०	०
	ह	०	०	०	०	०	०	०	०
भ =	भ	०	२	२	१	०	०	१	६
	ह	०	०	०	०	०	०	०	०

	संख्या			प्रतिशत		
व्यंजन	यथावत्	घोष	लोप=ह	यथावत्	घोष	लोप=ह
ख	०	०	२	०	०	१००
घ	५	०	२	७१.५	०	२८.५
थ	१	५	०	१६.५	८३.५	०
ध	२८	०	०	१००	०	०
फ	०	०	०	०	०	०
भ	६	०	०	१००	०	०
कुल	४०	५	४	+ ८१	+ १०	+ ८

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

३. मध्यवर्ती अल्पप्राण और महाप्राण व्यंजन

उद्देशक		संख्या यथावत्	संख्या घोष	संख्या लोप	प्रतिशत यथावत्	प्रतिशत घोष	प्रतिशत लोप
१.	अ.प्रा	१११	१२	७	८५	९.५	५.५
	म.प्रा	२	२	०	५०	५०	०.०
२.	अ.प्रा	१४८	११	३	९१	७	२
	म.प्रा	६	०	२	७५	०	२५
३.	अ.प्रा	११५	१८	४	८४	१३	३
	म.प्रा	४	२	०	६६.५	०	३३.५
४.	अ.प्रा	८१	१०	३	८७.५	१०.५	२
	म.प्रा	५	०	२	७१	०	२९
५.	अ.प्रा.	१११	१३	१६	-८०	+९	+११
	म.प्रा	०	०	०	०	०	०
६.	अ.प्रा	९७	१२	२	+८८	-१०	-२
	म.प्रा	११	१	०	-९२	+८	०
७.	अ.प्रा	११०	१८	१३	७८	-१३	+९
	म.प्रा.	५	०	०	१००	०	०

कुल संख्या				कुल प्रतिशत			
उद्देशक	यथावत्	घोष	लोप	उद्देशक	यथावत्	घोष	लोप
१	११३	१४	७	१	८४.५	१०.५	५
२	१५४	११	५	२	९०.५	६.५	३
३	११९	२०	४	३	८३	१४	७
४	८६	१०	५	४	८५	१०	५
५	११७	१३	१६	५	८०	९	११
६	१०८	१३	२	६	८७.५	१०.५	२
७	११५	१८	१३	७	७८.५	१२.५	९
कुल	८१२	९९	५२	कुल	८४.५	१०	५.५

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

४. ध्वनि-परिवर्तन के कतिपय उदाहरण

(शब्दों के संदर्भ के लिए देखिए विभाग-५)

अल्पप्राण व्यंजन	यथावत्	घोषीकरण	लोप
क	अनेक, एक, नरक, लोक	आहारग, पत्तेग, परवागरण	अन्तिय, ओववातिय, धम्मयं, विसोत्तिय
ग	अगुत्त, अनगार, भगवता	–	–
च	'चेव', स्वरान्त शब्द के पश्चात् 'च' अव्यय का प्रयोग	–	कयवर, पाईन, मोयन, समायार
ज	अविजान, परिजान, पूजन, वीजितुं	–	पोतया, रसया
त	अक्खात, अहित, आतङ्क, आतुर, इतो, उवरत, एते, जाति, पडिघात, परिन्नात, भवति, भूत, मतिमं, सोणित, वीजितुं, सम्पातिम	–	करओ (कुर्वतः) (= *करतः)
द	आदानीय, उदर, ओववादिय, पमाद, पवदमान, पाद, सदा, हिदय	–	उब्भिया
प	अनुपालिया	उवरत, ओववादिय, पडिवन्न, परितावेन्ति, पाव, विरूवरूव, वि(अपि)	–
य	अमाया, किरियावादी; गोमय, तसकाय, सयं	–	आउसन्त
व	आवट्ट, पवेदित, पुढवि	–	–

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

महाप्राण व्यंजन	यथावत्	घोषीकरण	'ह' कार में परिवर्तन
ख	–	–	नह
घ	पडिघात	–	दीह
थ	पव्वथित	अधा, महावीधि	–
ध	अध, इध, अबोधी, मेधावी, वधेन्ति	–	–
फ	–	–	–
भ	नाभि, पभू, विभूसा	–	–

संयुक्त व्यंजन

संयुक्त व्यंजनों के समीकरण के स्थान पर कुछ स्वरभक्ति के प्रयोग इस प्रकार मिलते हैं।

अनितिय (अनित्य), दविय (द्रव्य), अगनि (अग्नि) [परवर्ती काल की प्राकृतों में अणिच्च, दव्व और अग्गि जैसे प्रयोग मिलते हैं।]

संयुक्त रूप में आने वाले नासिक्य व्यंजनों के परिवर्तन इस प्रकार पाये जाते हैं।

ज्ञ = न्न (मध्यवर्ती)

खेत्तन्न (क्षेत्रज्ञ), परिन्नात (परिज्ञात), समनुन्न (समनुज्ञ)

ज्ञ = न्न (प्रारंभिक)

नात (ज्ञात), नच्चा (ज्ञात्वा)

[अपवाद के रूप में 'आज्ञा' के लिए 'आणा' शब्द मिलता है।]

न्न = न्न

अज्झोववन्न (अध्युपपन्न), छिन्न (छिन्न), पडिवन्न (प्रतिपन्न)

न्य = न्न

अन्न (अन्य)

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

र्ण = ण्ण

कण्ण (कर्ण)

[परवर्ती काल की प्राकृत भाषाओं में ज्ञ, न्न और न्य के स्थान पर ण्ण पाया जाता है ।]

तालिकाओं में प्रस्तुत ध्वनि-परिवर्तन के विश्लेषण के अनुसार इस निष्कर्ष पर पहुँचते हैं कि मध्यवर्ती अल्पप्राण व्यजनों का लोप ६ प्रतिशत, घोषीकरण १० प्रतिशत और यथावत् स्थिति ८४ प्रतिशत हैं । मध्यवर्ती महाप्राण व्यंजनों का 'ह' कार में परिवर्तन ८ प्रतिशत, घोषीकरण १० प्रतिशत और यथावत् स्थिति ८१ प्रतिशत हैं । अल्पप्राण और महाप्राण व्यंजनों को मिलाने पर यथावत् स्थिति ८४.५ प्रतिशत, घोषीकरण १० प्रतिशत और लोप ५.५ प्रतिशत पाया जाता है । स्पष्ट है कि अर्धमागधी प्राचीन प्राकृत भाषा होने के कारण इसमें मध्यवर्ती व्यंजनों का लोप उस मात्रा में नहीं मिलता है जितना परवर्ती महाराष्ट्री प्राकृत में मिलता है । अतः अर्धमागधी प्राकृत भाषा के लिये ध्वनि-परिवर्तन का प्रायः लोप का नियम उपयुक्त नहीं ठहरता है । इसके लिये तो कभी कभी लोप का नियम ही उचित प्रतीत होता है । घोषीकरण में क=ग (२ प्रतिशत), थ=ध (८३.५ प्रतिशत) और प=व (९४ प्रतिशत) के प्रयोग मिलते है । त=द का इसमें कोई प्रयोग नहीं मिल रहा है परंतु स्वयं आचाराङ्ग (मजैवि.) के सूत्रनं ३३५ में उदु (=ऋतु) के प्रयोग मिल रहे हैं और उसी सूत्र के पाद-टिप्पण में चूर्णी से 'उदुसु' पाठान्तर दिया गया है । हस्तप्रतों में त=द के प्रयोग यत्र तत्र मिलते हैं परंतु संपादकों ने ऐसे पाठ नहीं अपनाये । कुछ विद्वानों का यह भी मत है कि हेमचन्द्राचार्य द्वारा रचित प्राकृत व्याकरण के प्रभाव में आकर पूर्व काल में मध्यवर्ती त के स्थान पर द के जो प्रयोग थे उनमें वापिस त कर दिया गया होगा । दन्त्य न के बदले में ण का प्रयोग भी कभी कभी ही मिलता होगा, सर्वत्र दन्त्य न को मूर्धन्य ण में बदलने की प्रवृत्ति परवर्ती काल में प्रचलित हुई है इस तथ्य पर विशेष ध्यान देना चाहिए ।

मात्र एक अध्याय के विश्लेषण से ध्वनि-परिवर्तन सम्बन्धी जो निष्कर्ष निकाला जा रहा है वह अन्तिम तो नहीं ही कहा जा सकता परंतु उससे अर्धमागधी जैसी प्राचीन प्राकृत भाषा की ध्वनि-परिवर्तन-सम्बन्धी झलक तो अवश्य मिल ही जाती है ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

विभाग -५

नवसम्पादित प्रथम अध्ययन
के सभी शब्द-रूपों की अनुक्रमणिका

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

शब्दरूप-अनुक्रमणिका

अंसि	१ (७ बार), २ (२ बार)
अकरणिज्जं	६२
अकरिस्सं	४
अकासी	३३
अकुतोभयं	२२
अक्खातं	१
-अक्खाता	देखो, वियक्खाता
-अक्खाते	देखो, वियक्खाते
अगनिं	३७
अगनिकम्मसमारम्भा	३९
अगनिकम्मसमारम्भेण	३४, ३६
अगनिसत्थं	३४, ३५ (३ बार), ३६
अगुत्ते	४१
अङ्गुलिं	१५ (२ बार)
अच्चाए	५२
अच्छिं	१५ (२ बार)
अच्छे	१५ (३३ बार)
अजिनाए	५२
अज्झत्थं	५६ (२ बार)
अज्झोववन्ना	६२
अट्टे	१०

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

अट्ठिमिज्जाए	५२
अट्ठीए	५२
अण्डया	४९
अत्तानं	२२ (३ बार), ३२ (३ बार)
-अत्थं	देखो, इच्चत्थं
अत्थाए	५२
-अत्थाए	देखो, अनत्थाए
अत्थि	१,२
अत्थि	देखो, नत्थि
अदिन्नादानं	२६
अदुवा	२६,२७
अधं	४१ (२ बार)
अधा	१,२,१९,४९
अधे	२
अधेदिसातो अथवा अधे वा दिसातो	१
अनगारा	१२, २३, ३४, ४२, ५०, ५७
अनगाराणं	१४, २५, २६, ३६, ४४, ५२, ५९
अनगारे	१९, ४०
अनत्थाए	५२
अनाणाए	४१
अनितियं	४५ (२ बार)
-अनुजानति	देखो, समनुजानति
-अनुजानेज्जा	देखो, समनुजानेज्जा

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

अनुदिसाओ	२ (२ बार), ६ (२ बार)
{ अनुदिसातो अथवा अनु वा दिसातो	१,२
अनुपालिया	२०
अनुवीयि	२६
अनुसञ्चरति	२, ६
अनेकरूवाओ	६
अनेकरूवे	१२, १४, २३, २५, ३४, ३६, ४२, ४४, ५०, ५२, ५७, ५९
अनेका	२६
अन्तिए	२, १४, २५
अन्धं	१५ (२ बार)
अन्नतरीतो	१, २
अन्ने	१३, १४, १७, २३, २४, २५, ३०, ३४, ३५, ३६, ४२, ४३, ४४, ४७, ५०, ५१, ५२, ५४, ५७, ५८, ५९, ६१, ६२
अन्नेसि (अन्येषाम्)	२
अन्नेसिं (अन्येषाम्)	५६,६२, (अन्वेषयेत्-आचा. वृत्ति)
अन्नेहि	१३, १७, २४, ३०, ३५, ४३, ४७, ५१, ५४, ५८, ६१, ६२
अपरिनिव्वाणं	४९
अपरिन्नातकम्मे	६
अपरिन्नाता	१६, २९, ३८, ४६, ५३, ६०
अपि-	देखो, अप्पेके
अप्पमत्तेहि	३३

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

अप्पाणेन	६२
अप्पेके	(प्रथमा ए.व.) १५ (६६ बार)
अप्पेके	(प्रथमा ब.व) ५२ (८ बार)
अबोधीए	१३, २४, ३५, ४३, ५१, ५८
अब्भाइक्खति	२२ (४ बार), ३२ (४ बार)
अब्भाइक्खेज्जा	२२ (२ बार), ३२ (२ बार)
अब्भे	१५ (३३ बार)
अभयं	४०
अभिभूय	३३
अभिसमेच्चा	२२
अमायं	१९
अयं	६
अवकङ्क्षति	५६
-अवचइयं	देखो, चयावचइयं
अवि	देखो, यावि
अविजानए	१०
अविजानतो	४९
असत्थस्स	३२ (२ बार)
असमारम्भमाणस्स	१६, २९, ३८, ४६, ५३, ६०
असातं	४९
असासतं	४५ (२ बार)
अंस्सि	१०
अहं	१ (८ बार), २ (२ बार), ३३
अहितं	५६

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

अहिताए	१३, २४, ३५, ४३, ५१, ५८
-आइक्खति	देखो, अब्भाइक्खति
-आइक्खेज्जा	देखो, अब्भाइक्खेज्जा
आउसन्ते	१
आगतो	१ (७ बार), २ (२ बार)
आणाए	२२
-आणाए	देखो, अनाणाए
आतङ्कदंसी	५६
आता	१ (२ बार), २
आंतावादी	३
आतुरा	१०, ४९
-आदानं	देखो, अदिन्नादानं
आदानीयं	१४, २५, ३६, ४४, ५२, ५९
-आदीयमाना	देखो, उवादीयमाना
आयारे	६२
-आरम्भति	देखो, समारम्भति
-आरम्भन्ते	देखो, समारम्भन्ते
आरम्भमाणस्स	देखो, असमारम्भमाणस्स, समारम्भमाणस्स
आरम्भमाणा	६२
आरम्भमाणे	देखो, समारम्भमाणे
आरम्भसत्ता	६२
आरम्भा	१६ (२ बार), २९ (२ बार), ३८ (२ बार), ४६ (२ बार), ५३ (२ बार), ६० (२ बार)

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

-आरम्भावेज्जा	देखो, समारम्भावेज्जा
-आरम्भावेति	देखो, समारम्भावेंति
-आरम्भेज्जा	देखो, समारम्भेज्जा
-आरम्भेण	देखो, अगनिकम्मसमारम्भेण, पुढविकम्मसमारम्भेण
आवज्जन्ति	३७ (२ बार), ६० (२ बार)
-आवज्जन्ति	देखो, परियावज्जन्ति
आवट्टे	४१ (२ बार)
आवसे	४१
-आसादे	देखो, गुणासादे
आसी	१
आहच्च	३७,६०
आहारगं	४५ (२ बार)
इच्चत्थं(इति + अत्थं)	१४, २५, ३६, ४४, ५२, ५९
इच्चेते (इति + एते)	१६ (२बार), २९ (२ बार), ३८ (२ बार), ४६ (२ बार), ५३ (२ बार), ६० (२ बार)
इणं	१२, १४, २३, २५, ३४, ३६, ४२, ४४, ५०, ५२, ५७, ५९
इति-	देखो, इच्चत्थं, इच्चेते
इतो	१
इदानिं	३३
इध	१, २६, ५६
इधं	१, १४, २५, ३६, ४४, ५२, ५९
इमं	४५ (९ बार)
इमस्स	७, १३, २४, ३५, ४३, ५१, ५८

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

इमाओ	२, ६
इमे	देखो, सन्तिमे
उज्जुकडे	१९
-उट्ठाय	देखो, समुट्ठाय
उड्ढं	४१ (२ बार)
उड्डातो	१, २
उत्तरातो	१, २
उदकं	२६
उदककम्मसमारम्भेण	२३, २५
उदकनिस्सिता	२६
उदकसत्थं	२३, २४ (३ बार), २५, ३० (३ बार)
उदकसत्थसमारम्भा	३१
उदरं	१५ (२ बार)
उद्दवए	१५
उद्दायन्ति	३७, ६०
उब्भिया	४९
उरं	१५ (२ बार)
-उवनीता	देखो, छन्दोवनीता
उवरते	४० (२ बार)
-उववत्रा	देखो, अज्झोववत्रा
उवादीयमाना	६२
ऊरुं	१५ (२ बार)
एके	देखो, अप्पेके
एके(ब.व)	१२, २३, ३४, ३७, ४२, ५०, ५७, ६०

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

एकेसिं	१ (२ बार), २, १४, २५, ३६, ४४, ५२, ५९
-एगं	देखो, पत्तेगं
एजस्स	५६
एतं (नपुं)	३३, ४५ (९ बार), ५६
एतावन्ति	५, ८
एते	९, १८, ३१, ३९, ४८, ५५, ६१, ६२
-एते	देखो, इच्चेते, जस्सेते
एत्थ	१६ (२ बार), २६, २८, २९ (२ बार), ३८ (२ बार), ४०, ४१, ४६ (२ बार), ५३ (२ बार), ६० (२ बार)
-एत्थ	देखो, चेत्थ
एत्थं	६२
एव	देखो, नेव
एव	७, १३ (२ बार), १७ (३ बार), २०, २२ (२ बार) २४, ३० (२ बार), ३२ (२ बार), ३५, ४३, ४७ (३ बार), ५१ (२ बार), ५४ (३ बार), ५८ (२ बार), ६१ (३ बार), ६२ (३ बार)
एवं	१ (२ बार), २ (२ बार), ५२
एस	१४ (४ बार), २५ (४ बार), ३६ (४ बार), ४० (२ बार), ४१, ४४ (४ बार), ४९, ५२ (४ बार), ५९ (४ बार)
ओववातिया	४९
ओववादिए	१ (२ बार), २
-कङ्खति	देखो, अवकङ्खति
कट्ठनिस्सिता	३७
कडिं	१५ (२ बार)
-कडे	देखो, उज्जुकडे

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

कण्णं	१५ (२ बार)
कप्पति	२७ (२ बार)
-कम्म-	देखो, अगनिकम्मसमारम्भा, अगनिकम्मसमारम्भेण, उदककम्मसमारम्भेण, तसकायकम्मसमारम्भेण, पुढविकम्मसमारम्भा, पुढविकम्मसमारम्भेण, वनस्सतिकम्मसमारम्भेण, वाउकम्मसमारम्भेण
कम्मं	६२
कम्मसमारम्भा	५, ८, ९
कम्मावादी	३
-कम्मे	देखो, अपरिन्नातकम्मे, परिन्नातकम्मे
कयवरनिस्सिता	३७
करए	४०
करओ	४
-करणिज्जं	देखो, अकरणिज्जं
करिस्सामि	४०
-करेन्ति	देखो, पकरेन्ति
-काय-	देखो, तसकायकम्मसमारम्भेण, तसकायसत्थं, तसकाय-सत्थसमारम्भा, तसकायसमारम्भेण
काराविस्सं	४
किरियावादी	३
कुव्वमाणे	१९
के	१ (२ बार)
खन्धं	१५ (२ बार)
खलु	६, ७, १३, १४ (४ बार), २४ २५ (४ बार), २६, ३५, ३६ (४ बार), ३७, ४३, ४४ (४ बार), ५१, ५२ (४ बार), ५८, ५९ (४ बार), ६०
खेत्तन्ने	३२ (४ बार)

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

गढिते	१४, २५, ३६, ४४, ५२, ५९
गण्डं	१५ (२ बार)
-गता	देखो, सन्तिगता
-गतो	देखो, आगतो
गन्थे	१४, २५, ३६, ४४, ५२, ५९
गलं	१५ (२ बार)
गारं	४१
गीवं	१५ (२ बार)
गुणट्ठिते	३३
गुणासादे	४१
गुणे	४१ (२ बार)
-गुत्ते	देखो, अगुत्ते
गुप्फं	१५ (२ बार)
गोमयनिस्सिता	३७
च	देखो, चेव, चेत्थ
च	४ (२ बार), २२, २६
-चइयं	देखो, चयावचइयं
चयावचइयं	४५ (२ बार)
-चरति	देखो, अनुसञ्चरति
चित्तमन्तयं	४५ (२ बार)
चुते	१
चेत्थ (च+एत्थ)	२६
चेव (च+एव)	७, १३, २४, ३५, ४३, ५१, ५८
छज्जीवनिकायसत्थं	६२ (३ बार)

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

छज्जीवनिकायसत्थसमारम्भा	६२
छन्दोवनीता	६२
छिन्नं	४५ (२ बार)
जं	१२, १४, २३, २५, ३३, ३४, ३६, ४२, ४४, ५०, ५२, ५७, ५९
जङ्घं	१५ (२ बार)
जतेहि	३३
-जतेहि	देखो, सञ्जतेहि
जत्थ	६०
जराउया	४९
जस्स-	देखो, जस्सेते
जस्स	३९
जस्सेते (जस्स+एते)	९, १८, ३१, ४८, ५५, ६१, ६२
-जहित्तु	देखो, विजहित्तु
जाए	२०
जातिधम्मयं	४५ (२ बार)
जाति-मरण-मोयनाए	७, १३, २४, ३५, ४३, ५१, ५८
जान	६२
-जानए	देखो, अविजानए
जानति	५६ (४ बार)
-जानति	देखो, समनुजानति
-जानतो	देखो, अविजानतो
-जानितव्वा	देखो, परिजानितव्वा
जानुं	१५ (२ बार)

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

जानेज्जा	२
-जानेज्जा	देखो, समनुजानेज्जा
जिब्भं	१५ (२ बार)
जीवा	२६ (२ बार)
जीवानं	४९
जीवितस्स	७, १३, २४, ३५, ४३, ५१, ५८
-जुण्णे	देखो, परिजुण्णे
जे(यः)	२, ६, २२ (२ बार), ३२ (४ बार), ३३, ३७ (२ बार), ४०, ४१ (२ बार), ५६ (२ बार)
जे(ये)	६० (२ बार), ६२
जोनीओ	६
ज्जं(से ज्जं)	२
झाइत्ता	देखो, निज्झाइत्ता
-ट्ठिते	देखो, गुणट्ठिते
णं	१
-णता	देखो, पणता
ण्हारुणीए	५२
तं (तत्) प्र.ए.व. (नपुं.)	१, २, १३, १३, २४, २४, ३५, ३५, ४३, ४३, ४९, ५१, ५१, ५८, ५८
तं(तत्) द्वि.ए.व. (नपुं.)	१७, ३०, ३३, ४०, ४०, ४७, ५४, ६१, ६२
तं(ताम्) (द्वि.ए.व.) (स्त्री.)	२०
तणनिस्सिता	३७
तत्थ	७, १० (२ बार), १३, २४, ३५, ३७ (४ बार), ४३, ४९ (२ बार), ५१, ५८, ६० (३ बार)

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

तसकायकम्मसमारम्भेण	५२
तसकायसत्थं	५०, ५१ (३ बार), ५२, ५४ (३ बार)
तसकायसत्थसमारम्भा	५५
तसकायसमारम्भेण	५०
तसन्ति	४९
तसा	४९
तालुं	१५ (२ बार)
-तावेन्ति	देखो, परितावेन्ति
ति	५६
तिरियं	४१ (२ बार)
तुलं	५६
ते	३७ (२ बार), ६० (२ बार)
तेसिं	२८
त्तं (अथवा से त्तं)	१४, २५, ३६, ४४, ५२, ५९
त्ति (इति)	९, १२, १८, २३, ३१, ३४, ३९, ४०, ४२, ४८, ४९ (२ बार), ५०, ५२ (३ बार), ५५, ५७, ६१, ६२
थनं	१५ (२ बार)
-दंसी	देखो, आतङ्कदंसी
दक्खिणातो	१, २
दण्डे	३३
दन्तं	१५ (२ बार)
दन्ताए	५२
दविया	५६
दाढाए	५२

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

दिट्ठं	३३
दिसाओ	२ (२ बार), ६ (२ बार)
-दिसाओ	देखो, अनुदिसाओ
दिसातो	१ (६ बार), २ (२ बार)
-दिसातो	देखो, अधेदिसातो, अनुदिसातो अथवा अधे वा दिसातो, अनु वा दिसातो
दिसासु	४९
दीहलोकसत्थस्स	३२ (२ बार)
दुक्खं	४९
दुक्खपडिघातहेतुं	७, १३, २४, ३५, ४३, ५१, ५८
दुगुञ्छनाए	५६
दुस्सम्बोधे	१०
-धम्मयं	देखो, जातिधम्मयं विपरिणामधम्मयं वुड्ढिधम्मयं
न	३०, ५६, ६२
न	देखो, नत्थि, नेव
नच्चा	५६
नत्थि	१
नरके	१४, २५, ३६, ४४, ५२, ५९
नहं	१५ (२ बार)
नहाए	५२
-नात-	देखो, अपरिन्नातकम्मे, परिन्नातकम्मे
नातं	१, २, १४, २५, ३६, ४४, ५२, ५९
-नाता	देखो, परिन्नाता
नाभिं	१५ (२ बार)

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

नासं	१५ (२ बार)
निकरणाए	२८
-निकाय-	देखो, छज्जीवनिकायसत्थं, छज्जीवनिकायसत्थसमारम्भा
निक्खन्तो	२०
निज्झाइत्ता	४९
निडालं	१५ (२ बार)
-नितियं	देखो, अनितियं
नियागपडिवन्ने	१९
-निव्वाणं	देखो, अपरिनिव्वाणं, परिनिव्वाणं
- निस्सिता	देखो, उदकनिस्सिता, कट्ठनिस्सिता, कयवरनिस्सिता, गोमयनिस्सिता, तणनिस्सिता, पत्तनिस्सिता, पुढविनिस्सिता
ने	२७ (२ बार)
नेव (न+एव)	१७ (३ बार), २२ (२ बार), ३० (२ बार), ३२ (२ बार), ४७ (३ बार), ५४ (३ बार), ६१ (३ बार), ६२ (३ बार)
नेवऽन्ने (नेव+अन्ने)	१७, ४७, ५४, ६१, ६२
नेवऽन्नेहि (नेव+अन्नेहि)	१७, ३०, ४७, ५४, ६१, ६२
नो	१ (२ बार), २८, ३३, ४० (२ बार), ६२
पकरेन्ति	६२
पच्चत्थिमातो	१,२
-पडिघात-	देखो, दुक्खपडिघातहेतुं
पडिलेहित्ता	४९
पडिसंवेदयति	६
पडिवन्ने	देखो, नियागपडिवन्ने

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

पणता	२१
-पतन्ति	देखो, सम्पतन्ति
पत्तनिस्सिता	३७
पत्तेगं	४९
पदिसो	४९
-पन्नाणेन	देखो, सव्वसमन्नागतपन्नाणेन
पभू	५६
पमत्ते	३३, ४१
-पमत्तेहि	देखो, अप्पमत्तेहि
पमादेन	३३
-पमारए	देखो, सम्पमारए
परवागरणेन	२
परिजानितव्वा	५,८
परिजुण्णे	१०
-परिणाम-	देखो, विपरिणामधम्मयं
परितावेन्ति	१०,४९
परिनिव्वाणं	४९
-परिनिव्वाणं	देखो, अपरिनिव्वाणं
परिन्ना	७, १३, २४, ३५, ४३, ५१, ५८
-परिन्नात-	देखो, अपरिन्नातकम्मे
परिन्नातकम्मे	९, १८, ३१, ३९, ४८, ५५, ६१, ६२
परिन्नाता	९, १६, १८, २९, ३१, ३८, ३९, ४६, ४८, ५३, ५५, ६०, ६१, ६२
-परिन्नाता	देखो, अपरिन्नाता

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

परिन्नाय	१७, ३०, ३३, ४७, ५४, ६१, ६२
परियावज्जन्ति	३७ (२ बार), ६० (२ बार)
परिवन्दन-मानन-पूजनाए	७, १३, २४, ३५, ४३, ५१, ५८
पवदमाना	१२, २३, ३४, ४२, ५०, ५७
पवुच्चति	३३, ४०, ४९
पवेदितं	२६
पवेदिता	७, १३, २४, ३५, ४३, ५१, ५८
पव्वथिते	१०
पाईनं	४१ (२ बार)
पाणा	११, २६, ३७ (२ बार), ४९ (३ बार), ६०
पाणानं	४९
पाणे	१२, १४, २३, २५, ३४, ३६, ४२, ४४, ५०, ५२, ५७, ५९
-पातिमा	देखो, सम्पातिमा
पातुं	२७
पादं	१५ (२ बार)
-पालिया	देखो, अनुपालिया
पावं	६२
पास	१०, १२, २३, २६, ३४, ४२, ४९, ५०, ५७
पासं	१५ (२ बार)
पासति	४१
पासमाने	४१
पि	४५ (१८ बार), ६२
पिच्छाए	५२

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

पिट्ठिं	१५ (२ बार)
पित्ताए	५२
पुच्छाए	५२
पुट्ठा	३७, ६०
पुढविकम्मसमारम्भा	१८
पुढविकम्मसमारम्भेण	१२, १४
पुढविनिस्सिता	३७
पुढविसत्थं	१२, १३ (४ बार), १४, १७ (३ बार)
पुढो	१०, १२, २३, २६, २७, ३४, ४२, ५०, ५७
पुढो-सिता	११, ४९
पुन	२
पुनो	४१(२ बार), ४९
पुरत्थिमातो	१,२
पुरिसे	६
पुव्वं	३३
-पूजनाए	देखो, परिवन्दन-मानन-पूजनाए
पेच्चा	१
पोतया	४९
फरिसं	६०
फासे	६
बहिया	५६ (२ बार)
बाहुं	१५ (२ बार)
-बुज्झमाने	देखो, सम्बुज्झमाने
बेमि	९, १५, १८, १९, २२, २६, ३१, ३२, ३७, ३९, ४५,

	४८, ४९ (२ बार), ५२, ५५, ६०, ६१, ६२
-बोधीए	देखो, अबोधीए
भगवता	१, ७, १३, २४, ३५, ४३, ५१, ५८
भगवतो	१४, २५, ३६, ४४, ५९
भमुहं	१५ (२ बार)
-भयं	देखो, अकुतोभयं, अभयं, महब्भयं
भवति	१ (२ बार), २, १४, २५, ३६, ४४, ५२, ५९
भवन्ति	५, ८, ९, १६ (२ बार), १८, २९ (२ बार), ३१, ३८ (२ बार), ३९, ४६ (२ बार), ४८, ५३ (२ बार), ५५, ६० (२ बार), ६१, ६२
भविस्सामि	१,४
भूतानं	४९
-भूसाए	देखो, विभूसाए
भो	२६
मंसाए	५२
मतिमं	४०
मत्ता	४०
-मत्ते	देखो, पमत्ते
-मन्तयं	देखो, चित्तमन्तयं
मन्दस्स	४९
-मरण-	देखो, जाति-मरण-मोयनाए
महब्भयं	४९
महावीधिं	२१
-मानन-	देखो, परिवन्दन-मानन-पूजनाए

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

-मायं	देखो, अमायं
मारे	१४, २५, ३६, ४४, ५२, ५९
-मिज्जाए	देखो, अट्ठिमिज्जाए
मिलाति	४५ (२ बार)
मुच्छंति	४१
मुच्छमाने	४१
मुनी	९, १८, ३१, ४८, ५५, ६१, ६२,
मे (मम)	१ (२ बार), २
मे (मया)	१
मे(माम्)	५२ (३ बार)
मेधावी	१७, ३०, ३३, ४७, ५४, ६१, ६२
मो	१२, २३, ३४, ४२, ५०, ५७
-मोयनाए	देखो, जाति-मरण-मोयनाए
मोहे	१४, २५, ३६, ४४, ५२, ५९
य	३७, ४९, ६०
यावि (य+अवि)	४, ४१
-रते	देखो, उवरते
रमन्ति	६२
रसया	४९
-रूवाओ	देखो, अनेकरूवाओ
-रूवाणि	४१
-रूवे	देखो, अनेकरूवे, विरूवरूवे
रूवेसु	४१
-रूवेहि	देखो, विरूवरूवेहि

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

लज्जमाना	१२, २३, ३४, ४२, ५०, ५७
-लेहित्ता	देखो, पडिलेहित्ता
-लोक-	देखो, दीहलोकसत्थस्स
लोकं	२२ (४ बार), ३२
लोकंसि	५, ८, ९
लोकावादी	३
लोके(लोकः)	१०
लोके(लोके)	१०, १४, २५, ३६, ४१, ४४, ५२, ५९
व(=वि)ऽनेकरूवे	१४, २३, २५, ३४, ३६, ४२, ४४, ५०, ५२, ५७, ५९
वङ्कसमायारे	४१
-वथिते	देखो, पव्वथिते
वदन्ति	६२
-वदमाना	देखो, पवदमाना
वधेन्ति	५२ (८ बार)
वनस्सतिकम्मसमारम्भेण	४२, ४४
वनस्सतिसत्थं	४२, ४३ (३ बार), ४४, ४७ (३ बार)
वनस्सतिसत्थसमारम्भा	४८
वसाए	५२
वसुमं	६२
--वसे	देखो, आवसे
वा	१ (९ बार), २ (११ बार), ६ (२ बार), १३ (२ बार), १४, २४ (२ बार), २५, ३५ (२ बार), ३६, ४३ (२ बार), ४४, ५१ (२ बार), ५२ (४ बार), ५८ (२ बार), ५९

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

वाउकम्मसमारम्भेण	५७, ५९
वाउसत्थं	५७, ५८, (३ बार), ५९, ६१ (३ बार)
वाउसत्थसमारम्भा	६१
-वागरणेन	देखो, परवागरणेन
वालाए	५२
-वादी	देखो, आतावादी, कम्मावादी, किरियावादी, लोकावादी
वि	१९,२८,३०
वि	देखो, वऽनेकरूवे
विउट्टन्ति	२७
विजहित्तु	२०
-विजानए	देखो, अविजानए
-विजानतो	देखो, अविजानतो
विदित्ता	४०
विनयं	६२
विपरिणामधम्मयं	४५ (२ बार)
विभूसाए	२७
वियक्खाता	२६
वियक्खाते	१९, ४१
विरूवरूवे	६
विरूवरूवेहि	१२, १४, २३, २५, ३४, ३६, ४२, ४४, ५०, ५२, ५७, ५९
विसाणाए	५२
विसोत्तियं	२०
विहिसंति	१२, १४, २३, २५, ३४, ३६, ४२, ४४, ५०, ५२, ५७, ५९

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

वीजितुं	५६
विधिं	देखो, महावीधिं
वीरा	२१
वीरेहि	३३
-वुच्चति	देखो, पवुच्चति
वुड्ढिधम्मयं	४५ (२ बार)
-वेदितं	देखो, पवेदितं
-वेदिता	देखो, पवेदिता
-संवेदयति	देखो, पडिसंवेदयति
संसारे	४९
संसेदया	४९
सङ्गं	६२
सङ्खातं	३७ (२ बार), ६० (२ बार)
सञ्चरति	देखो, अनुसञ्चरति
सञ्ञतेहि	३३
-सत्ता	देखो, आरम्भसत्ता
सत्तानं	४९
-सत्थ-	देखो, उदकसत्थसमारम्भा, छज्जीवनिकायसत्थसमारम्भा, तसकायसत्थसमारम्भा, वनस्सतिसत्थसमारम्भा, वाउसत्थसमारम्भा
सत्थं	१६ (२ बार), २६ (२ बार), २९ (२ बार), ३८ (२ बार), ४६ (२ बार), ५३ (२ बार), ६० (२ बार)
-सत्थं	देखो, अगनिसत्थं उदकसत्थं, छज्जीवनिकायसत्थं, तसकायसत्थं, पुढविसत्थं, वनस्सतिसत्थं, वाउसत्थं

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

सत्थस्स	देखो, असत्थस्स, दीहलोकसत्थस्स
सत्थेहि	१२, १४, २३, २५, २७, ३४, ३६, ४२, ४४, ५०, ५२, ५७, ५९
सदा	३३ (२ बार)
सद्दानि	४१
सद्देसु	४१
सद्धाए	२०
सन्ति	११, २६, ३७ (२ बार), ४९, ६०
सन्तिगता	५६
सन्तिमे (सन्ति+इमे)	४९
सन्धेति	६
सन्ना	१
समनुजानति	१३, २४, ३५, ४३, ५१, ५८
समनुजानेज्जा	१७, ३०, ४७, ५४, ६१, ६२
समनुन्ने	४
-समन्नागत-	देखो, सव्वसमन्नागतपन्नाणेन
समायारे	देखो, वङ्कसमायारे
समारम्भति	१३, २४, ३५, ४३, ५१, ५८
समारम्भन्ते	१३, १७, २४, ३०, ४७, ५४, ५८, ६१, ६२
समारम्भमाणस्स	१६, २९, ३८, ४६, ५३, ६०
-समारम्भमाणस्स	देखो, असमारम्भमाणस्स
समारम्भमाणे	१२, १४, २३, २५, ३४, ३५, ३६, ४२, ४३, ४४, ५०, ५१, ५२, ५७, ५९
-समारम्भा	देखो, अगनिकम्मसमारम्भा, उदकसत्थसमारम्भा,

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

	कम्मसमारम्भा, छज्जीवनिकायसत्थसमारम्भा, तसकायसत्थसमारम्भा, पुढविकम्मसमारम्भा, वनस्सति-सत्थसमारम्भा, वाउसत्थसमारम्भा
समारम्भावेज्जा	१७, ३०, ४७, ५४, ६१, ६२
समारम्भावेति	१३, २४, ३५, ४३, ५१, ५८
समारम्भेज्जा	१७, ३०, ४७, ५४, ६१, ६२,
-समारम्भेण	देखो, अगनिकम्मसमारम्भेण, उदककम्मसमारम्भेण, तसकायकम्मसमारम्भेण, तसकायसमारम्भेण, पुढविकम्म-समारम्भेण, वनस्सतिकम्मसमारम्भेण, वाउकम्मसमारम्भेण
समुट्ठाय	१४, २५, ३०, ४०, ४४, ५२, ५९
-समेच्चा	देखो, अभिसमेच्चा
सम्पतन्ति	३७, ६०
सम्पमारए	१५
सम्पातिमा	३७, ६०
सम्बुज्झमाने	१४, २५, ३६, ४४, ५२, ५९
-सम्बोधे	देखो, दुस्सम्बोधे
सम्मुच्छिमा	४९
-सम्मुतिया	देखो, सहसम्मुतिया
सयं	१३, १७, २२, २४, ३०, ३२, ३५, ४३, ४७, ५१, ५४, ५८, ६१, ६२
सव्वसमन्नागतपन्नाणेन	६२
सव्वाओ	२ (२ बार), ६ (२ बार)
सव्वावन्ति	५, ८
सव्वेसिं	४९ (४ बार)

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

सहसम्मुतिया	२
सहेति	६
-सातं	देखो, असातं
-सासतं	देखो, असासतं
सिङ्घाए	५२
-सिता	देखो, पुढो-सिता
सीसं	१५ (२ बार)
सुणमाने	४१
सुणेति	४१
सुतं	१
से (से ज्जं)	२
से(से त्तं)	१४, २५, ३६, ४४, ५२, ५९
से(तस्य)	१३ (२ बार), २४ (२ बार), ३५ (२ बार), ४३ (२ बार), ५१ (२ बार), ५८ (२ बार)
से(से बेमि)	(सोऽहम् ब्रवीमि अथवा तद् ब्रवीमि) १५, १९, २२, ३२, ३७
से(सः)	३, ९, १३, १८, २२ (२ बार), २४, ३१, ३२ (४ बार), ३३, ३५, ३९, ४१, ४३, ४८, ५१, ५५, ५६ (२ बार), ५८, ६१, ६२ (२ बार)
सोच्चा	२, १४, २५, ३६, ४४, ५२, ५९
-सेदया	देखो, संसेदया
सोणिताए	५२
-सोत्तियं	देखो, विसोत्तियं
हं(ऽहं)	२, ४ (२ बार)

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

हत्थं	१५ (२ बार)
हनुं	१५ (२ बार)
-हिंसति	देखो, विहिंसति
हिंसन्ति	५२
हिंसिसु	५२
हिंसिस्सन्ति	५२
-हितं	देखो, अहितं
-हिताए	देखो, अहिताए
हिदयं	१५ (२ बार)
हिदयाए	५२
हु	९, १८, ३१, ३३, ३९, ४८, ५५, ६१, ६२
-हेतुं	देखो, दुक्खपडिघातहेतुं
होट्ठं	१५ (२ बार)

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

विभाग - ६

विभिन्न संस्करणों के पाठों की तुलना

प्रथम पंक्ति में आचाराङ्ग के इस नव-सम्पादित संस्करण का पाठ दिया गया है और उसके नीचे अन्य संस्करणों के पाठ हैं ।

[इससे स्पष्ट होता है कि समय के प्रवाह के साथ और स्थलान्तर से मूल पाठ में कितना भाषिक परिवर्तन हो सकता है । इसी तथ्य की पुष्टि मेरी पुस्तक 'परंपरागत प्राकृत व्याकरण की समीक्षा और अर्धमागधी' के अध्ययन नं. १५ (मूल अर्धमागधी भाषा के यथास्थापन में विशेषावश्यकभाष्य की जेसलमेरीय ताड़पत्र की प्रति में भाषिक दृष्टि से उपलब्ध प्राचीन पाठों द्वारा एक दिशा सूचन) में हो रही है ।]

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

पंक्ति	संस्करण का नाम	प्रकाशन वर्ष	संकेत
१.	नव-सम्पादित संस्करण,	1997 A.D.	प्रा.
२.	वाल्थेर शुब्रिंग,	1910 A.D.	शु.
३.	आगमोदय समिति,	1916 A.D.	आ.
४.	जैविभा.	वि.सं. 2031/1974 A.D.	जै.
५.	मजैवि.	1977 A.D.	म.

[इससे स्पष्ट होता है कि समय के प्रवाह के साथ और स्थलान्तर से मूल पाठ में कितना भाषिक परिवर्तन हो सकता है। ईसी तथ्य की पुष्टि मेरी पुस्तक 'परंपरागत प्राकृत व्याकरण की समीक्षा और अर्धमागधी', १९९५ A.D. के अध्ययन नं. १५ (मूल अर्धमागधी के यथास्थापन में विशेषावश्यक-भाष्य की जेसलमेरीय ताड़पत्र की प्रति में भाषिक दृष्टि से उपलब्ध प्राचीन पाठों द्वारा एक दिशा-सूचन) और 'Editing of Ancient Ardhamāgadhī Texts in View of the Text of Viśeṣāvaśyaka-Bhāṣya, (published in the 'NIRGRANTHA' Vol. 1, pp. 1-10, S.C.E.R. Centre, Shahibag, Ahmedabad, 1995 A.D.) में हो रही है।]

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

पढमे उद्देसगे

प्रा. १. सुतं मे आउसन्ते ! णं भगवता एवमक्खातं– इधमेकेसिं
शु. सुयं मे, आउसं, तेणं भगवया एवमक्खायं : इहमेगेसिं
आ. सुयं मे आउसं ! तेणं भगवया एवमक्खायं– इहमेगेसिं
जै. १. सुयं मे आउसं ! तेणं भगवया एवमक्खायं– इहमेगेसिं
म. १. सुयं मे आउसं ! तेणं भगवया एवमक्खायं– इहमेगेसिं

प्रा. नो सन्ना भवति, तं अधा– पुरत्थिमातो वा दिसातो
शु. नो सन्ना भवइ, तं जहा : 'पुरत्थिमाओ वा दिसाओ
आ. णो सण्णा भवइ(१) तं जहा– पुरत्थिमाओ वा दिसाओ
जै. नो सण्णा भवइ, तं जहा– पुरत्थिमाओ वा दिसाओ
म. णो सण्णा भवति। तं जहा– पुरत्थिमातो वा दिसातो

प्रा. आगतो अहमंसि, दक्खिणातो वा दिसातो आगतो अहमंसि,
शु. आगओ अहमंसि, दाहिणाओ वा दिसाओ आगओ अहमंसि,
आ. आगओ अहमंसि, दाहिणाओ वा दिसाओ आगओ अहमंसि,
जै. आगओ अहमंसि, दाहिणाओ वा दिसाओ आगओ अहमंसि,
म. आगतो अहमंसि, दाहिणाओ वा दिसाओ आगतो अहमंसि,

प्रा. पच्चत्थिमातो वा दिसातो आगतो अहमंसि, उत्तरातो वा
शु. पच्चत्थिमाओ वा दिसाओ आगओ अहमंसि, उत्तराओ वा
आ. पच्चत्थिमाओ वा दिसाओ आगओ अहमंसि, उत्तराओ वा
जै. पच्चत्थिमाओ वा दिसाओ आगओ अहमंसि, उत्तराओ वा
म. पच्चत्थिमातो वा दिसातो आगतो अहमंसि, उत्तरातो वा

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

प्रा.	**दिसातो**	**आगतो**	**अहमंसि,**	**उड्ढातो**	**वा**	**दिसातो**	**आगतो**
शु.	दिसाओ	आगओ	अहमंसि,	उड्ढाओ	वा	दिसाओ	आगओ
आ.	दिसाओ	आगओ	अहमंसि,	उड्ढाओ	वा	दिसाओ	आगओ
जै.	दिसाओ	आगओ	अहमंसि,	उड्ढाओ	वा	दिसाओ	आगओ
म.	दिसातो	आगतो	अहमंसि,	उड्ढातो	वा	दिसातो	आगतो

प्रा.	**अहमंसि,**	**अधेदिसातो**	**वा**	**–**	**आगतो**	**अहमंसि,**	**अन्नतरीतो**
शु.	अहमंसि,	अहेदिसाओ	वा	–	आगओ	अहमंसि,	अन्नयरीओ
आ.	अहमंसि,	अहोदिसाओ	वा	–	आगओ	अहमंसि,	अण्णयरीओ
जै.	अहमंसि,	'अहे	वा	दिसाओ'	आगओ	अहमंसि,	'अण्णयरीओ
म.	अहमंसि,	अधेदिसातो	वा	–	आगतो	अहमंसि,	अन्नतरीतो

प्रा.	**–**	**दिसातो**	**वा**	**–**		**–**	**अनुदिसातो**	**वा**	**आगतो**
शु.	वा	दिसाओ	वा	–		–	अणुदिसाओ	वा	आगओ
आ.	वा	दिसाओ	–	–		–	अणुदिसाओ	वा	आगओ
जै.	वा	दिसाओ	–	आगओ	अहमंसि		अणुदिसाओ	वा'	आगओ
म.	–	दिसातो	वा	–		–	अणुदिसातो	वा	आगतो

प्रा.	**अहमंसि ।**		**एवमेकेसिं**	**नो**	**नातं**	**भवति—**
शु.	अहमंसि'–		एवमेगेसिं	नो	नायं	भवइ :
आ.	अहमंसि,		एवमेगेसिं	णो	णायं	भवति (२)
जै.	अहमंसि,	२.	एवमेगेसिं	णो	णातं	भवति—
म.	अहमंसि,		एवमेगेसिं	णो	णातं	भवति ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

प्रा.	**अत्थि**	**मे**	**आता**	**ओववादिए ,**	**नत्थि**	**मे**	**आता**	**ओववादिए ?**
शु.	'अत्थि	मे	आया	उववाइए ,	नत्थि	मे	आया	उववाइए ?
आ.	अत्थि	मे	आया	उववाइए ,	नत्थि	मे	आया	उववाइए ,
जै.	अत्थि	मे	आया	ओववाइए ,	णत्थि	मे	आया	ओववाइए ,
म.	अत्थि	मे	आया	उववाइए ,	णत्थि	मे	आया	उववाइए ,

प्रा.	**के**	**अहं**	**आसी,**	**के**	**वा**	**इतो**	**चुते**	**इध**	**पेच्चा**
शु.	के	अहं	आसी	के	वा	इओ	चुओ	इह	पेच्चा
आ.	के	अहं	आसी ?	के	वा	इओ	चुए	इह	पेच्चा
जै.	के	अहं	आसी ?	के	वा	इओ	चुओ	इह	पेच्चा
म.	के	अहं	आसी,	के	वा	इओ	चुते	–	पेच्चा

प्रा.	**भविस्सामि ?**	**२. से**	**ज्जं**	**पुन**	**जानेज्जा**	**सहसम्मुतिया**
शु.	भविस्सामि ?'	से	ज्जं	पुण	जाणेज्जा	सहसम्मुइयाए
आ.	भविस्सामि ? (३)	से	जं	पुण	जाणेज्जा	सह संमइयाए
जै.	भविस्सामि ?	३. सेज्जं		पुण	जाणेज्जा—	सहसम्मुइयाए ,
म.	भविस्सामि ।	२. से	ज्जं	पुण	जाणेज्जा	सहसम्मुइयाए

प्रा.	**परवागरणेन**	**अन्नेसिं**	**वा**	**अन्तिए**	**–**	**सोच्चा,**	**तं**
शु.	परवागरणेणं	अन्नेसिं	वा	अन्तिए	–	सोच्चा,	तं
आ.	परवागरणेणं	अण्णेसिं	–	अंतिए	वा	सोच्चा	तं
जै.	परवागरणेणं	अण्णेसिं	वा	अंतिए	–	सोच्चा	तं
म.	परवागरणेणं	अण्णेसिं	वा	अंतिए	–	सोच्चा,	तं

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

प्रा.	**अधा—**	**पुरत्थिमातो**	**वा**	**दिसातो**	**आगतो**	**अहमंसि**	**एवं**
शु.	जहा :	'पुरत्थिमाओ	वा	दिसाओ	आगओ	अहमंसि	जाव
आ.	जहा—	पुरत्थिमाओ	वा	दिसाओ	आगओ	अहमंसि	जाव
जै.	जहा—	पुरत्थिमाओ	वा	दिसाओ	आगओ	अहमंसि,	–
म.	जहा—	पुरत्थिमातो	वा	दिसातो	आगतो	अहमंसि	एवं

प्रा.	**दक्खिणातो**	**वा**	**–**	**–**	**–**	**पच्चत्थिमातो**	**वा**
शु.	—	–	–	–	–	–	–
आ.	—	–	–	–	–	–	–
जै.	दक्खिणाओ	वा	दिसाओ	आगओ	अहमंसि,	पच्चत्थिमाओ	वा
म.	दक्खिणाओ	वा	–	–	–	पच्चत्थिमाओ	वा

प्रा.	**–**	**–**	**–**	**उत्तरातो**	**वा**	**–**	**–**
शु.	–	–	–	–	–	–	–
आ.	–	–	–	–	–	–	–
जै.	दिसाओ	आगओ	अहमंसि,	उत्तराओ	वा	दिसाओ	आगओ
म.	–	–	–	उत्तराओ	वा	–	–

प्रा.	**–**	**उड्ढातो**	**वा**	**–**	**–**	**–**	**अधे**	**वा**
शु.	–	–	–	–	–	–	–	–
आ.	–	–	–	–	–	–	–	–
जै.	अहमंसि,	उड्ढाओ	वा	दिसाओ	आगओ	अहमंसि,	अहे	वा
म.	–	उड्ढाओ	वा	–	–	अहाओ		वा

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

प्रा.	**—**	**—**	**—**	**अन्नतरीतो**	**वा**	**दिसातो**	**—**
शु.	—	—	—	अन्नयरीओ	वा	दिसाओ	—
आ.	—	—	—	अण्णयरीओ	—	दिसाओ	—
जै.	दिसाओ	आगओ	अहमंसि	अण्णयरीओ	वा	दिसाओ	आगओ
म.	—	—	—	अन्नतरीओ	—	दिसाओ	वा

प्रा.	**—**	**—**	**अनु वा**	**दिसातो**	**—**	**आगतो अहमंसि ।**
शु.	—	वा	अणुदिसाओ	—	वा	आगओ अहमसि' —
आ.	—	—	अणुदिसाओ	—	वा	आगओ अहमंसि,
जै.	अहमंसि,	—	अणुदिसाओ	—	वा	आगओ अहमंसि,
म.	—	—	अणुदिसाओ	—	वा	आगतो अहमंसि,

प्रा.		**एवमेकेसिं**	**—**	**नातं**	**भवति——**	**अत्थि**	**मे**	**आता**
शु.		एवमेगेसिं	—	नायं	भवइ :	'अत्थि	मे	आया
आ.		एवमेगेसिं	जं	णायं	भवति—	अत्थि	मे	आया
जै.	४.	एवमेगेसिं	जं	णातं	भवइ——	अत्थि	मे	आया
म.		एवमेगेसिं	—	णातं	भवति ।	अत्थि	मे	आया

प्रा.	**ओववादिए**	**जे**	**इमाओ**	**दिसाओ**	**वा**	**अनुदिसाओ**	**वा**
शु.	उववाइए ;	जो	इमाओ	दिसाओ	—	अणुदिसाओ	वा
आ.	उववाइए ,	जो	इमाओ	(दिसाओ)	—	अणुदिसाओ	वा
जै.	ओववाइए ।	जो	इमाओ	'दिसाओ	—	अणुदिसाओ	वा'
म.	उववाइए	जो	इमाओ	दिसाओ	वा	अणुदिसाओ	वा

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

प्रा.	**अनुसञ्चरति**	**सव्वाओ**	**दिसाओ**	**सव्वाओ**	**अनुदिसाओ**	**–**
शु.	अणुसंचरइ ,	सव्वाओ	दिसाओ	सव्वाओ	अणुदिसाओ	–
आ.	अणुसंचरइ ,	सव्वाओ	दिसाओ	–	अणुदिसाओ,	–
जै.	अणुसंचरइ ,	सव्वाओ	दिसाओ	सव्वाओ	अणुदिसाओ	'जो
म.	अणुसंचरति	सव्वाओ	दिसाओ	सव्वाओ	अणुदिसाओ	–

प्रा.	**–**	**–**	**सेऽहं ।**	**३.**	**से**	**आतावादी**	**लोकावादी**
शु.	–	–	सो'हं ।		से	आया–वाई	लोगा–वाई
आ.	–	–	सोऽहं(४)		से	आयावादी	लोयावादी
जै.	आगओ	अणुसंचरइ',	सोहं ॥	५.	से	आयावाई,	लोगावाई,
म.	–	–	सो हं ।	३.	से	आयावादी	लोगावादी

प्रा.	**कम्मावादी**	**किरियावादी**	**– ।**	**४.**	**अकरिस्सं**
शु.	कम्मा–वाई	किरिया–वाई	य ।		'करिस्सं
आ.	कम्मावादी	किरियावादी (५)			अकरिस्सं
जै.	कम्मावाई,	किरियावाई	।	६.	अकरिस्सं
म.	कम्मावादी	किरियावादी	।	४.	अकरिस्सं

प्रा.	**चऽहं,**	**कारविस्सं**	**चऽहं,**	**करओ**	**यावि**	**समनुन्ने**	**भविस्सामि ।**
शु.	च'हं	कारावेस्सं	च'हं	करओ	यावि	समणुन्ने	भविस्सामि'—
आ.	चऽहं,	कारवेसुं	चऽहं,	करओ	आवि	'समणुन्ने	भविस्सामि (६)
जै.	चहं,	कारवेसुं	चहं,	करओ	यावि	समणुण्णे	भविस्सामि ॥
म.	च हं,	काराविस्सं	च हं,	करओ	यावि	समणुण्णे	भविस्सामि ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

प्रा.	**५.**	**एतावन्ति**	**सव्वावन्ति**	**लोकंसि**	**कम्मसमारम्भा**	**परिजानितव्वा**
शु.		एयावन्ती	सव्वावन्ती	लोगंसि	कम्म–समारम्भा	परिजाणियव्वा
आ.		एयावंति	सव्वावंति	लोगंसि	कम्मसमारंभा	परिजाणियव्वा
जै.	७.	एयावंति	सव्वावंति	लोगंसि	कम्म–समारंभा	परिजाणियव्वा
म.	५.	एयावंति	सव्वावंति	लोगंसि	कम्मसमारंभा	परिजाणितव्वा

प्रा.	**भवन्ति ।**	**६.**	**अपरिन्नातकम्मे**	**खलु**	**अयं**	**पुरिसे**	**जे**
शु.	भवन्ति ।		अपरिन्नाय–कम्मे	खलु	अयं	पुरिसे,	जो
आ.	भवंति(७)		अपरिण्णायकम्मा	खलु	अयं	पुरिसे	जो
जै.	भवंति ॥	८.	अपरिण्णाय–कम्मे	खलु	अयं	पुरिसे,	जो
म.	भवंति ।	६.	अपरिण्णायकम्मे	खलु	अयं	पुरिसे	जो

प्रा.	**इमाओ**	**दिसाओ**	**वा**	**अनुदिसाओ**	**वा**	**अनुसञ्चरति,**	**सव्वाओ**
शु.	इमाओ	दिसाओ	वा	अणुदिसाओ	वा	अणुसंचरइ,	सव्वाओ
आ.	इमाओ	दिसाओ	–	अणुदिसाओ	–	अणुसंचरइ,	सव्वाओ
जै.	इमाओ	दिसाओ	वा	अणुदिसाओ	वा	अणुसंचरइ,	सव्वाओ
म.	इमाओ	दिसाओ	वा	अणुदिसाओ	वा	अणुसंचरति,	सव्वाओ

प्रा.	**दिसाओ**	**सव्वाओ**	**अनुदिसाओ**	**सहेति,**	**अनेकरूवाओ**	**जोनीओ**
शु.	दिसाओ	सव्वाओ	अणुदिसाओ	सहेइ,	अणेग–रूवाओ	जोणीओ
आ.	दिसाओ	सव्वाओ	अणुदिसाओ	साहेति(८)	अणेगरूवाओ	जोणीओ
जै.	दिसाओ	सव्वाओ	अणुदिसाओ	सहेति,	अणेगरूवाओ	जोणीओ
म.	दिसाओ	सव्वाओ	अणुदिसाओ	सहेति,	अणेगरूवाओ	जोणीओ

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

प्रा.	**सन्धेति,**	**विरूवरूवे**	**फासे**	**--**	**पडिसंवेदयति ।**	**७. तत्थ**
शु.	सन्धेइ,	विरूव—रूवे	फासे	—	पडिसंवेएइ ।	तत्थ
आ.	संधेइ,	विरूवरूवे	फासे	—	पडिसंवेदेइ(९)	तत्थ
जै.	संधेइ,	विरूवरूवे	फासे	य	पडिसंवेदेइ ॥	९. तत्थ
म.	संधेति,	विरूवरूवे	फासे	—	पडिसंवेदयति ।	७. तत्थ

प्रा.	**खलु**	**भगवता**	**परिन्ना**	**पवेदिता—**	**इमस्स**	**चेव**
शु.	खलु	भगवया	परिन्ना	पवेइया	इमस्स	चे'व
आ.	खलु	भगवता	परिण्णा	पवेइआ(१०)	इमस्स	चेव
जै.	खलु	भगवया	परिण्णा	पवेइया ॥ १०.	इमस्स	चेव
म.	खलु	भगवता	परिण्णा	पवेदिता ।	इमस्स	चेव

प्रा.	**जीवितस्स**	**परिवन्दन—मानन—पूजनाए**	**जाति—मरण—मोयनाए**
शु.	जीवियस्स	परिवन्दण — माणण—पूयणाए ,	जाइ—मरण—मोयणाए
आ.	जीवियस्स	परिवंदणमाणणपूयणाए	जाई—मरण—मोयणाए
जै.	जीवियस्स,	परिवंदण—माणण—पूयणाए ,	जाई—मरण—मोयणाए
म.	जीवियस्स	परिवंदण—माणण—पूयणाए	जाती—मरण—मोयणाए

प्रा.	**दुक्खपडिघातहेतुं— ८.**	**एतावन्ति**	**सव्वावन्ति**	**लोकंसि**
शु.	दुक्ख—पडिघाय—हेउं —	एयावन्ती	सव्वावन्ती	लोगंसि
आ.	दुक्खपडिघायहेउं (११)	एयावंति	सव्वावंति	लोगंसि
जै.	दुक्खपडिघायहेउं ॥ ११.	एयावंति	सव्वावंति	लोगंसि
म.	दुक्खपडिघातहेतुं । ८.	एतावंति	सव्वावंति	लोगंसि

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

प्रा.	**कम्मसमारम्भा**	**परिजानितव्वा**	**भवन्ति ।**	**९. जस्सेते लोकंसि**
शु.	कम्म–समारम्भा	परिजाणियव्वा	भवन्ति ।	जस्से'ए लोगंसि
आ.	कम्मसमारंभा	परिजाणियव्वा	भवंति (१२)	जस्सेते लोगंसि
जै.	कम्म–समारंभा	परिजाणियव्वा	भवंति ॥	१२. जस्सेते लोगंसि
म.	कम्मसमारंभा	परिजाणियव्वा	भवंति ।	९. जस्सेते लोगंसि

प्रा.	**कम्मसमारम्भा**	**परिन्नाता**	**भवन्ति**	**से**	**हु**	**मुनी**	**परिन्नातकम्मे**
शु.	कम्म–समारम्भा	परिन्नाया	भवन्ति,	से	हु	मुणी	परिन्नाय–कम्मे—
आ.	कम्मसमारंभा	परिण्णाया	भवंति	से	हु	मुणी	परिण्णायकम्मे(१३)
जै.	कम्म–समारंभा	परिण्णाया	भवंति,	से	हु	मुणी	परिण्णाय–कम्मे ॥
म.	कम्मसमारंभा	परिण्णाया	भवंति	से	हु	मुणी	परिण्णायकम्मे

प्रा.	**त्ति**	**बेमि ।**
शु.	त्ति	बेमि ।
आ.	त्ति	बेमि ।
जै.	त्ति	बेमि ।
म.	त्ति	बेमि ।

बितीये उद्देसगे

प्रा. १०.	**अट्टे**	**लोके**	**परिजुण्णे**	**दुस्सम्बोधे**	**अविजानए ।**	**अस्सिं**
शु.	अट्टे	लोए	परिजुण्णे	दुस्संबोहे	अविजाणए ।	अस्सिं
आ.	अट्टे	लोए	परिजुण्णे	दुस्संबोहे	अविजाणए	अस्सिं
जै. १३.	अट्टे	लोए	परिजुण्णे,	दुस्संबोहे	अविजाणए ॥	१४. अस्सिं
म. १०.	अट्टे	लोए	परिजुण्णे	दुस्संबोधे	अविजाणए ।	अस्सिं

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

प्रा.	**लोके पव्वथिते**		**तत्थ तत्थ**	**पुढो**	**पास**	**आतुरा**	**परितावेन्ति।**
शु.	लोए पव्वहिए		तत्थ–तत्थ	पुढो	पास	आउरा	परियोवेन्ति।
आ.	लोए पव्वहिए		तत्थ तत्थ	पुढो	पास	आतुरा	परितावेंति (१४)
जै.	लोए पव्वहिए ॥	१५.	तत्थ तत्थ	पुढो	पास,	आतुरा	परितावेंति ॥
म.	लोए पव्वहिए		तत्थ तत्थ	पुढो	पास	आतुरा	परितावेंति।

प्रा.	**११.**	**सन्ति**	**पाणा**	**पुढो–सिता।**		**१२.**	**लज्जमाना**	**पुढो**	**पास।**
शु.		सन्ति	पाणा	पुढो–सिया।			लज्जमाणा	पुढो	पास।
आ.		संति	पाणा	पुढो	सिया		लज्जमाणा	पुढो	पास
जै.	१६.	संति	पाणा	पुढो	सिया ॥	१७.	लज्जमाणा	पुढो	पास ॥
म.	११.	संति	पाणा	पुढो	सिता।	१२.	लज्जमाणा	पुढो	पास।

प्रा.	**'अनगारा**	**मो' त्ति**	**एके**	**पवदमाना**	**जमिणं**	**विरूवरूवेहि**
शु.	'अणगारा	मो' त्ति	एगे	पवयमाणा।	जमिणं	विरूव–रूवेहिं
आ	अणगारा	मोत्ति	एगे	पवयमाणा	जमिणं	विरूवरूवेहिं
जै. १८.	अणगारा	मोत्ति	एगे	पवयमाणा	जमिणं	विरूवरूवेहिं
म.	'अणगारा	मो'त्ति	एगे	पवयमाणा,	जमिणं	विरूवरूवेहिं

प्रा.	**सत्थेहि**	**पुढविकम्मसमारम्भेण**	**पुढविसत्थं**	**समारम्भमाणे**
शु.	सत्थेहिं	पुढवि–कम्मसमारम्भेणं	पुढवि–सत्थं	समारभमाणे
आ.	सत्थेहिं	पुढविकम्मसमारंभेणं	पुढविसत्थं	समारंभेमाणा
जै.	सत्थेहिं	पुढवि–कम्म–समारंभेणं	पुढवि–सत्थं	समारंभेमाणे
म.	सत्थेहिं	पुंढविकम्मसमारंभेणं	पुढविसत्थं	समारंभमाणो

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

प्रा.	**—**	**अनेकरूवे**	**पाणे**	**विहिंसति।**	**१३.**	**तत्थ**	**खलु**	**भगवता**
शु.	अन्ने	व'णेग-रूवे	पाणे	विहिंसइ—		तत्थ	खलु	भगवया
आ.	—	अणेगरूवे	पाणे	विहिंसइ(१५)		तत्थ	खलु	भगवया
जै.	अण्णे	वणेगरूवे	पाणे	विहिंसति॥	२०.	तत्थ	खलु	भगवया
म.	—	अणेगरूवे	पाणे	विहिंसति।	१३.	तत्थ	खलु	भगवता

प्रा.	**परिन्ना**	**पवेदिता**		**इमस्स**	**चेव**	**जीवितस्स**
शु.	परिन्ना	पवेइया		इमस्स	चेव	जीवियस्स
आ.	परिण्णा	पवेइया,		इमस्स	चेव	जीवियस्स
जै.	परिण्णा	पवेइया॥	२१.	इमस्स	चेव	जीवियस्स
म.	परिण्णा	पवेदिता —		इमस्स	चेव	जीवियस्स

प्रा.	**परिवन्दन—मानन—पूजनाए**	**जाति—मरण—मोयनाए**
शु.	परिवन्दण—माणण—पूयणाए	जाइ—मरण—मोयणाए
आ.	परिवंदणमाणणपूयणाए	जाइमरणमोयणाए
जै.	परिवंदण—माग्रण—पूयणाए,	जाई—मरण—मोयणाए,
म.	परिवंदण— माणण—पूयणाए	जाती—मरण—मोयणाए

प्रा.	**दुक्खपडिघातहेतुं—**		**से**	**सयमेव**	**पुढविसत्थं**	**समारम्भति,**	**अन्नेहि**
शु.	दुक्ख—पडिघाय—हेउं—		से	सयमेव	पुढवि-सत्थं	समारभइ	अन्नेहिं
आ.	दुक्खपडिघायहेउं		से	सयमेव	पुढविसत्थं	समारंभइ	अण्णेहिं
जै.	दुक्खपडिघायहेउं॥	२२.	से	सयमेव	पुढवि-सत्थं	समारंभइ,	अण्णेहिं
म.	दुक्खपडिघातहेउं		से	सयमेव	पुढविसत्थं	समारंभति,	अण्णेहिं

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

प्रा.	**वा**	**पुढविसत्थं**	**समारम्भावेति,**	**अन्ने**	**वा**	**पुढविसत्थं**	**समारम्भन्ते**
शु.	वा	पुढवि–सत्थं	समारम्भावेइ	अन्ने	वा	पुढवि–सत्थं	समारभन्ते
आ.	वा	पुढविसत्थं	समारंभावेइ	अण्णे	वा	पुढविसत्थं	समारंभंते
जै.	वा	पुढवि–सत्थं	समारंभावेइ,	अण्णे	वा	पुढवि-सत्थं	समारंभंते
म.	वा	पुढविसत्थं	समारंभावेति,	अण्णे	वा	पुढविसत्थं	समारंभंते

प्रा.	**समनुजानति।**	**तं**	**से**	**अहिताए,**	**तं**	**से**	**अबोधीए।**
शु.	समणुजाणइ;	तं	से	अहियाए,	तं	से	अबोहीए।
आ.	समणुजाणइ(१५)	तं	से	अहिआए	तं	से	अबोहीए
जै.	समणुजाणइ ॥	२३. तं	से	अहियाए,	तं	से	अबोहीए ॥
म.	समणुजाणति।	तं	से	अहिताए,	तं	से	अबोहीए।

प्रा.	**१४. से**	**त्तं**	**सम्बुज्झमाने**	**आदानीयं**	**समुट्ठाय**	**सोच्चा**
शु.	से	त्तं	संबुज्झमाणे	आयाणीयं,	समुट्ठाए–	सोच्चा
आ.	से	तं	संबुज्झमाणे	आयाणीयं	समुट्ठाय	सोच्चा
जै.	२४. से	तं	संबुज्झमाणे,	आयाणीयं	समुट्ठाए ॥	२५.सोच्चा
म.	१४. से	तं	संबुज्झमाणे	आयाणीयं	समुट्ठाए	सोच्चा

प्रा.	**–**	**भगवतो**	**अनगाराणं**	**वा**	**अन्तिए**	**इधमेकेसिं**	**नातं**
शु.	खलु	भगवओ	अणगाराणं	वा	अन्तिए	इहमेगेसिं	नायं
आ.	खलु	भगवओ	अणगाराणं	–	–	इहमेगेसिं	णातं
जै.	खलु	भगवओ	अणगाराणं	वा	अंतिए	इहमेगेसिं	णातं
म.	-	भगवतो	अणगाराणं	–	–	इहमेगेसिं	णातं

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

प्रा.	**भवति— एस**	**खलु**	**गन्थे,**	**एस**	**खलु**	**मोहे,**	**एस**	**खलु मारे**	
शु.	भवइ : एस	खलु	गन्थे,	एस	खलु	मोहे,	एस	खलु मारे,	
आ.	भवति— एस	खलु	गंथे	एस	खलु	मोहे	एस	खलु मारे	
जै.	भवति— एस	खलु	गंथे	एस	खलु	मोहे,	एस	खलु मारे,	
म.	भवति— एस	खलु	गंथे,	एस	खलु	मोहे,	एस	खलु मारे,	

प्रा.	**एस खलु**	**नरके।**	**इच्चत्थं**	**गढिते**	**लोके।**	**जमिणं**
शु.	एस खलु	नरए।	इच्चत्थं	गढिए	लोए।	जमिणं
आ.	एस खलु	णरए	इच्चत्थं	गड्ढिए	लोए	जमिणं
जै.	एस खलु	णरए॥ २६.	इच्चत्थं	गढिए	लोए॥ २७.	जमिणं
म.	एस खलु	निरए।	इच्चत्थं	गढिए	लोए,	जमिणं

प्रा.	**विरूवरूवेहि**	**सत्थेहिं**	**पुढविकम्मसमारम्भेण**	**पुढविसत्थं**
शु.	विरूवरूवेहिं	सत्थेहिं	पुढवि—कम्मसमारम्भेणं	पुढवि—सत्थं
आ.	विरूवरूवेहिं	सत्थेहिं	पुढविकम्मसमारंभेण	पुढविसत्थं
जै.	'विरूवरूवेहिं	सत्थेहिं'	पुढवि—कम्म—समारंभेणं	पुढवि—सत्थं
म.	विरूवरूवेहिं	सत्थेहिं	पुढविकम्मसमारंभेणं	पुढविसत्थं

प्रा.	**समारम्भमाणे**	**अन्ने**	**वऽनेकरूवे**	**पाणे**	**विहिंसति।**	**१५.**	**से**
शु.	समारभमाणे	अन्ने	व'णेग—रूवे	पाणे	विहिंसइ—		से
आ.	समारंभमाणे	अण्णे	अणेगरूवे	पाणे	विहिंसइ,		से
जै.	समारंभेमाणे	अण्णे	वणेगरूवे	पाणे	विहिंसइ॥	२८.	से
म.	समारभमाणे	अण्णे	वऽणेगरूवे	पाणे	विहिंसति।	१५.	से

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

प्रा.	बेमि—	अप्पेके	अन्धमब्भे	अप्पेके	अन्धमच्छे,	अप्पेके	पादमब्भे
शु.	बेमि :	अप्पेगे	अच्चमब्भे	अप्पेगे	अच्चमच्छे;	अप्पेगे	पायमब्भे
आ.	बेमि	अप्पेगे	अंधमब्भे	अप्पेगे	अंधमच्छे,	अप्पेगे	पायमब्भे
जै.	बेमि-	अप्पेगे	अंधमब्भे,	अप्पेगे	अंधमच्छे ॥	२९.अप्पेगे	पायमब्भे,
म.	'बेमि-	अप्पेगे	अंधमब्भे	अप्पेगे	अंधमच्छे,	अप्पेगे	पादमब्भे २,

प्रा.	अप्पेके	पादमच्छे,	अप्पेके	गुप्फमब्भे	अप्पेके	गुप्फमच्छे,
शु.	अप्पेगे	पायमच्छे;	—	गुप्फं	—	—
आ.	अप्पेगे	पायमच्छे	अप्पेगे	गुप्फमब्भे	अप्पेगे	गुप्फमच्छे
जै.	अप्पेगे	पायमच्छे,	अप्पेगे	गुप्फमब्भे	अप्पेगे	गुप्फमच्छे,
म.	—	—	अप्पेगे	गुप्फमब्भे२,	-	-

प्रा.	अप्पेके	जङ्घमब्भे	अप्पेके	जङ्घमच्छे	अप्पेके
शु.	—	जङ्घं	—	—	—
आ.	अप्पेगे	जंघमब्भे२	—	—	अप्पेगे
जै.	अप्पेगे	जंघमब्भे,	अप्पेगे	जंघमच्छे	अप्पेगे
म.	अप्पेगे	जंघमब्भे २,	—	—	अप्पेगे

प्रा.	जानुमब्भे	अप्पेके	जानुमच्छे,	अप्पेके	ऊरुमब्भे
शु.	जाणुं	—	-	—	ऊरुं
आ.	जाणुमब्भे २	—	—	अप्पेगे	ऊरुमब्भे२
जै.	जाणुमब्भे,	अप्पेगे	जाणुमच्छे,	अप्पेगे	ऊरुमब्भे,
म.	जाणुमब्भे २,	—	—	अप्पेगे	ऊरुमब्भे २,

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

प्रा.	**अप्पेके**	**ऊरुमच्छे,**	**अप्पेके**	**कडिमब्भे**	**अप्पेके**	**कडिमच्छे,**
शु.	—	—	—	कडिं	—	—
आ.	—	—	अप्पेगे	कडिमब्भे २	—	—
जै.	अप्पेगे	ऊरुमच्छे,	अप्पेगे	कडिमब्भे,	अप्पेगे	कडिमच्छे,
म.	—	—	अप्पेगे	कडिमब्भे २,	—	—

प्रा.	**अप्पेके**	**नाभिमब्भे**	**अप्पेके**	**नाभिमच्छे,**	**अप्पेके**	**उदरमब्भे**
शु.	—	नाभिं	—	—	—	उयरं
आ.	अप्पेगे	णाभिमब्भे २	—	—	अप्पेगे	उदरभब्भे २
जै.	अप्पेगे	णाभिमब्भे,	अप्पेगे	णाभिमच्छे,	अप्पेगे	उयरमब्भे
म.	अप्पेगे	णाभिमब्भे २,	—	—	अप्पेगे	उदरमब्भे २,

प्रा.	**अप्पेके**	**उदरमच्छे,**	**अप्पेके**	**पासमब्भे**	**अप्पेके**	**पासमच्छे,**	**अप्पेके**
शु.	—	—	—	पासं	—	—	—
आ.	—	—	अप्पेगे	पासमब्भे २	—	—	अप्पेगे
जै.	अप्पेगे	उयरमच्छे,	अप्पेगे	पासमब्भे,	अप्पेगे	पासमच्छे,	अप्पेगे
म.	—	—	अप्पेगे	पासमब्भे २,	—	—	अप्पेगे

प्रा.	**पिट्ठिमब्भे**	**अप्पेके**	**पिट्ठिमिच्छे,**	**अप्पेके**	**उरमब्भे**
शु.	पिट्ठिं	—	—	—	उरं
आ.	पिट्ठिमब्भे २	—	—	अप्पेगे	उरमब्भे २
जै.	पिट्ठमब्भे,	अप्पेगे	पिट्ठमच्छे,	अप्पेगे	उरमब्भे
म.	पिट्ठिमब्भे २,	—	—	अप्पेगे	उरमब्भे २,

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

प्रा.	**अप्पेके**	**उरमच्छे,**	**अप्पेके**	**हिदयमब्भे**	**अप्पेके**	**हिदयमच्छे,**
शु.	—	—	—	हिययं	—	—
आ.	—	—	अप्पेगे	हिययमब्भे २	—	—
जै.	अप्पेगे	उरमच्छे,	अप्पेगे	हिययमब्भे	अप्पेगे	हिययमच्छे,
म.	—	—	अप्पेगे	हिययमब्भे२,	—	—

प्रा.	**अप्पेके**	**थनमब्भे**	**अप्पेके**	**थनमच्छे,**	**अप्पेके**	**खन्धमब्भे**
शु.	—	थणं	—	—	—	खन्धं
आ.	अप्पेगे	थणमब्भे २	—	—	अप्पेगे	खंधमब्भे२
जै.	अप्पेगे	थणमब्भे,	अप्पेगे	थणमच्छे,	अप्पेगे	खंधमब्भे,
म.	अप्पेगे	थणमब्भे २,	—	—	अप्पगे	खंधमब्भे २,

प्रा.	**अप्पेके**	**खन्धमच्छे,**	**अप्पेके**	**बाहुमब्भे**	**अप्पेके**	**बाहुमच्छे,**
शु.	—	—	—	बाहुं	—	—
आ.	—	—	अप्पेगे	बाहुमब्भे २	—	—
जै.	अप्पेगे	खंधमच्छे,	अप्पेगे	बाहुमब्भे,	अप्पेके	बाहुमच्छे,
म.	—	—	अप्पेगे	बाहुमब्भे २,	—	—

प्रा.	**अप्पेके**	**हत्थमब्भे.**	**अप्पेके**	**हत्थमच्छे,**	**अप्पेके**	**अङ्गुलिमब्भे**
शु.		हत्थं	—	—	—	अङ्गुलिं
आ.	अप्पेगे	हत्थमब्भे२	—	—	अप्पेगे	अंगुलिमब्भे२
जै	अप्पेके	हत्थमब्भे.	अप्पेगे	हत्थमच्छे,	अप्पेगे	अंगुलिमब्भे,
म.	अप्पेगे	हत्थमब्भे २,	—	—	अप्पेगे	अंगुलिमब्भे२,

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

प्रा.	अप्पेके	अङ्गुलिमच्छे,	अप्पेके	नहमब्भे	अप्पेके	नहमच्छे,	अप्पेके
शु.	—	—	—	नहं	—	—	—
आ.	—	—	अप्पेगे	णहमब्भे २	—	—	अप्पेगे
जै.	अप्पेगे	अंगुलिमच्छे	अप्पेगे	णहमब्भे	·अप्पेगे	णहमच्छे,	अप्पेगे
म.	—	—	अप्पेगे	णहमब्भे २,	—	—	अप्पेगे

प्रा.	गीवमब्भे	अप्पेके	गीवमच्छे,	अप्पेके	हनुमब्भे
शु.	गीवं	—	—	—	हणुं
आ.	गीवमब्भे २	—	—	अप्पेगे	हणुमब्भे२
जै.	गीवमब्भे,	अप्पेगे	गीवमच्छे,	अप्पेगे	हणुयमब्भे,
म.	गीवमब्भे २,	—	—	अप्पेगे	हणुमब्भे २,

प्रा.	अप्पेके	हनुमच्छे,	अप्पेके	होट्ठमब्भे	अप्पेके	होट्ठमच्छे,
शु.	—	—	—	होट्ठं	—	—
आ.	—	—	अप्पेगे	होट्ठमब्भे २	—	—
जै.	अप्पेगे	हनुमच्छे,	अप्पेगे	होट्ठमब्भे,	अप्पेगे	होट्ठमच्छे,
म.	—	—	अप्पेगे	होट्ठमब्भे २,	—	—

प्रा.	अप्पेके	दन्तमब्भे.	अप्पेके	दन्तमच्छे,	अप्पेके	जिब्भमब्भे
शु.	—	दन्तं	—	—	—	जिब्भं
आ.	—	—	अप्पेगे	दंतमच्छे	अप्पेगे	जिब्भमब्भे २
जै.	अप्पेगे	दंतमब्भे	अप्पेगे	दंतमच्छे,	अप्पेगे	जिब्भमब्भे,
म.	अप्पेगे	दंतमब्भे२,	—	-	अप्पेगे	जिब्भमब्भे२,

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

प्रा.	**अप्पेके**	**जिब्भमच्छे,**	**अप्पेके**	**तालुमब्भे**	**अप्पेके**	**तालुमच्छे,**
शु.	—	—	—	तालुं	—	—
आ.	—	—	अप्पेगे	तालुमब्भे २	—	—
जै.	अप्पेगे	जिब्भमच्छे,	अप्पेगे	तालुमब्भे,	अप्पेगे	तालुमच्छे,
म.	—	—	अप्पेगे	तालुमब्भे २,	—	—

प्रा.	**अप्पेके**	**गलमब्भे**	**अप्पेके**	**गलमच्छे,**	**अप्पेके**	**गण्डमब्भे**
शु.	—	गलं	—	—	—	गण्डं
आ.	अप्पेगे	गलमब्भे २	—	—	अप्पेगे	गंडमब्भे २
जै.	अप्पेगे	गलमब्भे,	अप्पेगे	गलमच्छे,	अप्पेगे	गंडमब्भे,
म.	अप्पेगे	गलमब्भे २,	—	—	अप्पेगे	गंडमब्भे २,

प्रा.	**अप्पेके**	**गण्डमच्छे,**	**अप्पेके**	**कण्णमब्भे**	**अप्पेके**	**कण्णमच्छे,**
शु.	—	—		कण्णं	—	—
आ.	—	—	अप्पेगे	कण्णमब्भे२	—	—
जै.	अप्पेगे	गंडमच्छे,	अप्पेगे	कण्णमब्भे	अप्पेगे	कण्णमच्छे,
म.	—	—	अप्पेगे	कण्णमब्भे २,	—	—

प्रा.	**अप्पेके**	**नासमब्भे**	**अप्पेके**	**नासमच्छे,**	**अप्पेके**	**अच्छिमब्भे**
शु.	—	नासं	—		—	अच्छि
आ.	अप्पेगे	णासमब्भे २			अप्पेगे	अच्छिमब्भे २
जै.	अप्पेगे	णासमब्भे,	अप्पेगे	णासमच्छे,	अप्पेगे	अच्छिमब्भे,
म.	अप्पेगे	णासमब्भे २,	—		अप्पेगे	अच्छिमब्भे २,

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

प्रा.	**अप्पेके**	**अच्छिमच्छे,**	**अप्पेके**	**भमुहमब्भे**	**अप्पेके**	**भमुहमच्छे,**
शु.	—	—	—	भमुहं	—	—
आ.	—	—	अप्पेगे	भमुहमब्भे२	—	—
जै.	अप्पेगे	अच्छिमच्छे,	अप्पेगे	भमुहमब्भे,	अप्पेगे	भमुहमच्छे,
म.	—	—	अप्पेगे	भमुहमब्भे २,	—	—

प्रा.	**अप्पेके**	**निडालमब्भे**	**अप्पेके**	**निडालमच्छे,**	**अप्पेके**	**सीसमब्भे**
शु.	—	निलाडं	—	—	—	सीसं
आ.	अप्पेगे	णिडालमब्भे २	—	—	अप्पेगे	सीसमब्भे
जै.	अप्पेगे	णिडालमब्भे,	अप्पेगे	णिडालमच्छे,	अप्पेगे	सीसमब्भे,
म.	अप्पेगे	णिडालमब्भे २,	—	—	अप्पेगे	सीसमब्भे २,

प्रा.	**अप्पेके**	**सीसमच्छे,**	**अप्पेके**	**सम्पमारए**	**अप्पेके**
शु.	—	—	अप्पेगे	संपमारए	अप्पेगे
आ.	—	—	अप्पेगे	संप (सा ?) मारए	अप्पेगे
जै.	अप्पेगे	सीसमच्छे ॥	३०.अप्पेगे	संपमारए,	अप्पेगे
म.	—	—	अप्पेगे	संपमारए	अप्पेगे

प्रा.	**उद्दवए**	**१६.**	**एत्थ**	**सत्थं**	**समारम्भमाणस्स**	**इच्चेते**	**आरम्भा**
शु.	उद्दवए		एत्थ	सत्थं	समारभमाणस्स	इच्चेए	आरंभा
आ.	उद्दवए		इत्थं	सत्थं	समारंभमाणस्स	इच्चेते	आरंभा
जै.	उद्दवए	३१.	एत्थ	सत्थं	समारंभमाणस्स	इच्चेते	आरंभा
म.	उद्दवए ।	१६.	एत्थं	सत्थं	समारभमाणस्स	इच्चेते	आरंभा

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

प्रा. अपरिन्नाता भवन्ति । एत्थ सत्थं असमारम्भमाणस्स इच्चेते

शु. अपरिन्नाया भवन्ति, एत्थ सत्थं असमारभमाणस्स इच्चेए

आ. अपरिण्णाता भवंति (१६) एत्थ सत्थं असमारभमाणस्स इच्चेते

जै. अपरिण्णाता भवंति । ३२. एत्थ सत्थं असमारंभमाणस्स इच्चेते

म. अपरिण्णाता भवंति । एत्थ सत्थं असमारभमाणस्स इच्चेते

प्रा. आरम्भा परिन्नाता भवन्ति । १७. तं परिन्नाय मेधावी नेव

शु. आरम्भा परिन्नाया भवन्ति । तं परिन्नाय मेहावी ने'व

आ. आरंभा परिण्णा भवंति । तं परिण्णाय मेहावी नेव

जै. आरंभा परिण्ण भवंति ।। ३३. तं परिण्णाय मेहावी नेव

म. आरंभा परिण्ण भवंति । १७. तं परिण्णाय मेहावी णेव

प्रा. सयं पुढविसत्थं रम्भेज्जा, नेवऽन्नेहि पुढविसत्थं समारम्भावेज्जा,

शु. सयं पुढवि-स ारभेज्जा ने'व' न्नेहिं पुढवि—सत्थं समारम्भावेज्जा

आ. सयं पुढविसत मारंभेज्जा णेवण्णेहिं पुढविसत्थं समारंभावेज्जा

जै. सयं पुढवि-स समारंभेज्जा, नेवण्णेहिं पुढवि—सत्थं समारंभावेज्जा,

म. सयं पुढविसत्थं समारभेज्जा, णेवऽणणेहिं पुढविसत्थं समारभावेज्जा,

---

प्रा. नेवऽन्ने पुढविसत्थं समारम्भन्ते समनुजानेज्जा । १८. जस्सेते

शु. ने'व'न्ने पुढवि—सत्थं समारभन्ते समणुजाणेज्जा । जस्से'ए

आ. णेवण्णे पुढविसत्थं समारंभंते समणुजाणेज्जा, जस्सेते

जै नेवण्णे पुढवि—सत्थं समारंभंते समणुजाणेज्जा ।। ३४. जस्सेते

म णेवऽण्णे पुढविसत्थं समारभंते समणुजाणेज्जा । १८. जस्सेते

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

प्रा.	**पुढविकम्मसमारम्भा**	**परिन्नाता**	**भवन्ति**	**स**	**हु**	**मुनी**
शु.	पुढवि—कम्म—समारम्भा	परिन्नाया	भवन्ति,	से	हु	मुणी
आ.	पुंढविकम्मसमारंभा	परिण्णाता	भवंति	से	हु	मुणी
जै.	पुढवि—कम्म—समारंभा	परिण्णाता	भवंति	से	हु	मुणी
म.	पुढविकम्मसमारंभा	परिण्णाता	भवंति	से	हु	मुणी

प्रा.	**परिन्नातकम्मे**	**त्ति बेमि ।**
शु.	परिन्नाय-कम्मे—	त्ति बेमि ।
आ.	परिण्णातकम्मेत्ति बेमि (१७)	
जै.	परिण्णात-कम्मे ।—त्ति बेमि ।	
म.	परिण्णायकम्मे	त्ति बेमि ।

ततीये उद्देसगे

प्रा.	**१९.**	**से**	**बेमि—**	**से**	**अधा**	**वि**	**अनगारे**	**उज्जुकडे**	**नियागपडिवन्ने**
शु.		से	बेमि :	से	जहा	वि	अणगारे	उज्जुकडे	नियाग—पडिवन्ने
आ.		से	बेमि	—	जहा	—	अणगारे	उज्जुकडे	नियायपडिवण्णे
जै.	३५.	से	बेमि—	से	जहावि	—	अणगारे	उज्जुकडे,	णियागपडिवण्णे,
म.	१९.	से	बेमि—	से	जहा	वि	अणगारे	उज्जुकडे	णियागपडिवण्णे

प्रा.	**अमायं**	**कुव्वमाणे**	**वियक्खाते ।**	**२०.**	**जाए**	**सद्धाए**	**निक्खन्तो**
शु.	अमायं	कुव्वमाणे	वियाहिए ।		जाए	सद्धाए	निक्खन्तो,
आ.	अमायं	कुव्वमाणे	वियाहिए(१८)		जाए	सद्धाए	निक्खंतो
जै.	अमायं	कुव्वमाणे	वियाहिए ॥	३६.	जाए	सद्धाए	णिक्खंतो,
म.	अमायं	कुव्वमाणे	वियाहिते ।	२०.	जाए	सद्धाए	णिक्खंतो

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

प्रा.	**तमेव**	**अनुपालिया**	**विजहित्तु**	**विसोत्तियं ।**	**२१.**	**पणता**	**वीरा**
शु.	तमेव	अणुपालिया;	वियहित्तु	विसोत्तियं		पणया	वीरा
आ.	तमेव	अणुपालिज्जा,	वियहित्ता	विसोत्तियं(१९)		पणया	वीरा
जै.	तमेव	अणुपालिया	'विजहित्तु	विसोत्तियं' ॥	३७.	पणया	वीरा
म.	तमेव	अणुपालिया	विजहित्ता	विसोत्तियं ।	२१.	पणया	वीरा

प्रा.	**महावीधिं ।**	**२२.**	**लोकं**	**च**	**आणाए**	**अभिसमेच्चा**
शु.	महा-वीहिं		लोगं	च	आणाए	अभिसमेच्चा
आ.	महावीहिं (२०)		लोगं	च	आणाए	अभिसमेच्चा
जै.	महावीहिं ।	३८.	लोगं	च	आणाए	अभिसमेच्चा
म.	महावीहिं ।	२२.	लोगं	च	आणाए	अभिसमेच्चा

प्रा.	**अकुतोभयं ।**	**से**	**बेमि–**	**नेव**	**सयं**	**लोकं**	**अब्भाइक्खेज्जा,**
शु.	अकुओभयं ।	से	बेमि :	ने'व	सयं	लोगं	अब्भाइक्खेज्जा,
आ.	अकुओभयं(२१)	से	बेमि	णेव	सयं	लोगं	अब्भाइक्खिज्जा
जै.	अकुतोभयं ॥	३९. से	बेमि–	णेव	सयं	लोगं	अब्भाइक्खेज्जा,
म.	अकुतोभयं ।	से	बेमि–	णेव	सयं	लोगं	अब्भाइक्खेज्जा,

प्रा.	**नेव**	**अत्तानं**	**अब्भाइक्खेज्जा ।**	**जे**	**लोकं**	**अब्भाइक्खति**
शु.	ने'व	अत्ताणं	अब्भाइक्खेज्जा ।	जे	लोगं	अब्भाइक्खइ,
आ.	णेव	अत्ताणं	अब्भाइक्खिज्जा,	जे	लोयं	अब्भाइक्खइ
जै.	णेव	अत्ताणं	अब्भाइक्खेज्जा ।	जे	लोयं	अब्भाइक्खइ,
म.	णेव	अत्ताणं	अब्भाइक्खेज्जा ।	जे	लोगं	अब्भाइक्खति

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

प्रा.	**से**	**अत्तानं**	**अब्भाइक्खति, जे**		**अत्तानं**	**अब्भाइक्खति**	**से**	**लोकं**
शु.	से	अत्ताणं	अब्भाइक्खइ;	जे	अत्ताणं	अब्भाइक्खइ,	से	लोगं
आ.	से	अत्ताणं	अब्भाइक्खइ,	जे	अत्ताणं	अब्भाइक्खइ	से	लोयं
जै.	से	अत्ताणं	अब्भाइक्खइ ।	जे	अत्ताणं	अब्भाइक्खइ,	से	लोयं
म.	से	अत्ताणं	अब्भाइक्खति,	जे	अत्ताणं	अब्भाइक्खति	से	लोगं

प्रा.	**अब्भाइक्खति ।**	**२३.**	**लज्जमाना**	**पुढो**	**पास ।**	**'अनगारा**	**मो'**
शु.	अब्भाइक्खइ ।		लज्जमाणा	पुढो	पास ।	"अणगारा	मो"
आ.	अब्भाइक्खइ (२२)		लज्जमाणा	पुढो	पास—	अणगारा	मो
जै.	अब्भाइक्खइ ॥	४०.	लज्जमाणा	पुढो	पास ॥	अणगारा	मोत्ति
म.	अब्भाइक्खति ।	२३.	लज्जमाणा	पुढो	पास ।	'अणगारा	मो'

प्रा.	**त्ति**	**एके**	**पवदमाना,**	**जमिणं**	**विरूवरूवेहि**	**सत्थेहि**
शु.	त्ति	एगे	पवयमाणा ।	जमिणं	विरूवरूवेहिं	सत्थेहिं
आ.	त्ति	एगे	पवयमाणा	जमिणं	विरूवरूवेहिं	सत्थेहिं
जै.	—	एगे	पवयमाणा ॥	४२. जमिणं	विरूवरूवेहिं	सत्थेहिं
म.	त्ति	एगे	पवयमाणा,	जमिणं	विरूवरूवेहिं	सत्थेहिं

प्रा.	**उदककम्मसमारम्भेण**	**उदकसत्थं**	**समारम्भमाणे**	**अन्ने**	**वऽनेकरूवे**
शु.	उदयकम्मसमारम्भेणं	उदयसत्थं	समारम्भमाणे	अन्ने	व'णेगरूवे
आ.	उदयकम्मसमारंभेणं	उदयसत्थं	समारंभमाणे	—	अणेगरूवे
जै.	उदय—कम्म—समारंभेणं	उदय—सत्थं	समारंभमाणे	अण्णे	वणेगरूवे
म.	उदयकम्मसमारंभेणं	उदयसत्थं	समारंभमाणे	अण्णे	वऽणेगरूवे

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

प्रा.	**पाणे**	**विहिंसति ।**	**२४.**	**तत्थ**	**सलु**	**भगवता**	**परिन्ना**
शु.	पाणे	विहिंसइ--		तत्थ	खलु	भगवया	परिणा
आ.	पाणे	विहिंसइ ।		तत्थ	खलु	भगवता	परिण्णा
जै.	पाणे	विहिंसति ॥	४३.	तत्थ	खलु	भगवया	परिण्णा
म.	पाणे	विहिंसति ।	२४.	तत्थ	खलु	भगवता	परिण्णा

प्रा.	**पवेदिता—**	**इमस्स**	**चेव**	**जीवितस्स**	**परिवन्दन-मानन-पूजनाए**
शु.	पवेइया	इमस्स	चे'व	जीवियस्स	परिवन्दण—माणण—पूयणाए
आ.	पवेदिता ।	इमस्स	चेव	जीवियस्स	परिवंदणमाणणपूयणाए
जै.	पवेदिता ॥ ४४.	इमस्स	चेव	जीवियस्स,	परिवंदण—माणण—पूयणाए
म.	पवेदिता —	इमस्स	चेव	जीवितस्स	परिवंदण—माणण—पूयणाए

प्रा.	**जाति—मरण—मोयनाए**	**दुक्खपडिघातहेतुं—**		**से**	**सयमेव**
शु.	जाइ—मरण—मोयणाए	दुक्ख—पडिघाय—हेउं—		से	सयमेव
आ.	जाइमरणमोयणाए	दुक्खपडिघायहेउं	४५.	से	सयमेव
जै.	जाई—मरण—मोयणाए,	दुक्खपडिघायहेउं ॥		से	सयमेव
म.	जाती—मरण—मोयणाए	दुक्खपडिघातहेतुं		से	सयमेव

प्रा.	**उदकसत्थं**	**समारम्भति,**	**अन्नेहि**	**वा**	**उदकसत्थं**
शु.	उदयसत्थं	समारम्भइ	अन्नेहिं	वा	उदयसत्थं
आ.	उदयसत्थं	समारभति	अण्णेहिं	वा	उदयसत्थं
जै.	उदय—सत्थं	समारंभति,	अण्णेहिं	वा	उदय-सत्थं
म.	उदय—सत्थं	समारभति,	अण्णेहिं	वा	उदयसत्थं

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

प्रा.	**समारम्भावेति,**	**अन्ने**	**वा**	**उदकसत्थं**	**समारम्भन्ते**	**समनुजानन्ति।**
शु.	समारम्भावेइ	अन्ने	वा	उदयसत्थं	समारभन्ते	समणुजाणइ;
आ.	समारंभावेति	अण्णे	—	उदयसत्थं	समारंभंते	समणुजाणंति।
जै.	समारंभावेति,	अण्णे	वा	उदय–सत्थं	समारंभंते	समणुजाणंति ॥
म.	समारभावेति,	अण्णे	वा	उदयसत्थं	समारभंते	समणुजाणंति।

प्रा.	**तं**	**से**	**अहिताए,**	**तं**	**से**	**अबोधीए।**	**२५.**	**से**	**त्तं**
शु.	तं	से	अहियाए,	तं	से	अबोहीए।		से	त्तं
आ.	तं	से	अहियाए	तं	से	अबोहीए।		से	तं
जै.४६.	तं	से	अहियाए,	तं	से	अबोहीए ॥	४७.	से	तं
म.	तं	से	अहिताए	तं	से	अबोधीए।	२५.	से	त्तं

प्रा.	**सम्बुज्झमाने**	**आदानीयं**	**समुट्ठाय,**		**सोच्चा**	**—**	**भगवतो**
शु.	संबुज्झमाणे	आयाणीयं,	समुट्ठाए–		सोच्चा	खलु	भगवओ
आ.	संबुज्झमाणे	आयाणीयं	समुट्ठाय		सोच्चा	—	भगवओ
जै.	संबुज्झमाणे,	आयाणीयं	समुट्ठाए ॥	४८.	सोच्चा	खलु	भगवओ
म.	संबुज्झमाणे	आयाणीयं	समुट्ठाए		सोच्चा	—	भगवतो

प्रा.	**अनगाराणं**	**वा**	**अन्तिए**	**इधमेकेसिं**	**नातं**	**भवति–**	**एस**	**खलु**
शु.	अणगाराणं	वा	अन्तिए	इहमेगेसिं	नायं	भवइ :	एस	खलु
आ.	अणगाराणं	—	अंतिए	इहमेगेसिं	णायं	भवति–	एस	खलु
जै.	अणगाराणं	वा	अंतिए	इहमेगेसिं	णायं	भवति–	एस	खलु
म.	अणगाराणं	—	—	इहमेगेसिं	णातं	भवति–	एस	खलु

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

प्रा. गन्थे, एस खलु मोहे, एस खलु मारे, एस खलु नरके।
शु. गन्थे, एस खलु मोहे, एस खलु मारे, एस खलु नरए।
आ. गंथे एस खलु मोहे एस खलु मारे एस खलु णरए,
जै. गंथे, एस सलु मोहे, एस खलु मारे, एस खलु णरए॥
म. गंथे, एस खलु मोहे, एस खलु मारे, एस खलु निरए।

प्रा. इच्चत्थं गढिते लोके। जमिणं विरूवरूवेहि सत्थेहि
शु. इच्चत्थं गढिए लोए। जमिणं विरूवरूवेहिं सत्थेहिं
आ. इच्चत्थं गड्ढिए लोए जमिणं विरूवरूवेहिं सत्थेहिं
जै. ४९.इच्चत्थं गढिए लोए॥ ५०. जमिणं 'विरूवरूवेहिं सत्थेहिं'
म. इच्चत्थं गढिए लोए, जमिणं विरूवरूवेहिं सत्थेहिं

प्रा. उदककम्मसमारम्भेण उदकसत्थं समारम्भमाणे अन्ने वऽनेकरूवे
शु. उदयकम्मसमारम्भेणं उदयसत्थं समारभमाणे अन्ने व'णेगरूवे
आ. उदयकम्मसमारम्भेणं उदयसत्थं समारंभमाणे अण्णे अणेगरूवे
जै. उदय–कम्म–समारंभेणं उदयसत्थं समारंभमाणे अण्णे वणेगरूवे
म. उदयकम्मसमारंभेणं उदयसत्थं समारभमाणे अण्णे वऽणेगरूवे

प्रा. पाणे विहिंसति। २६. से बेमि – – –
शु. पाणे विहिंसइ– से बेमि : – – –
आ. पाणे विहिंसइ। से बेमि : – – –
जै. पाणे विहिंसति॥ ५१. से बेमि– 'अप्पेगे अंधमब्भे
म. पाणे विहिंसति। २६. से बेमि – – –

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

प्रा.	–	–	–	–		–	–
शु.	–	–	–	–	–	–	–
आ.	–	–	–	–	–	–	–
जै.	अप्पेगे	अंधमच्छे ॥		५२.	अप्पेगे	पायमब्भे,	अप्पेगे
म.	–	–	–	–	–	–	–

प्रा.	–	–	–	–	– –	–	–	
शु.	–	–	–	–	– –	–	–	
आ.	–	–	–	–	– –	–	–	
जै.	पायमच्छे ॥	५३.	अप्पेगे संपमारए,	अप्पेगे		उद्दवए ॥	५४.से	बेमि—
म.	–	–	–	–	– –	–	–	

प्रा.	**सन्ति**	**पाणा**	**उदकनिस्सिता**	**जीवा**	**अनेका ।**		**इध**
शु.	सन्ति	पाणा	उदयनिस्सिया	जीवा	अणेगा ।		इहं
आ.	संति	पाणा	उदयनिस्सिया	जीवा	अणेगे (२३)		इहं
जै.	संति	पाणा	उदय–निस्सिया	जीवा	अणेगा ॥	५५.	इहं
म.	संति	पाणा	उदयणिस्सिया	जीवा	अणेगा ।		इहं

प्रा.	**च**	**खलु**	**भो**	**अनगाराणं**	**उदकं**	**जीवा**	**वियक्खाता ।**
शु.	च	खलु	भो	अणगाराणं	उदयं	जीवा	वियाहिया ।
आ.	च	खलु	भो !	अणगाराणं	उदयजीवा		वियाहिया (२४)
जै.	च	खलु	भो !	अणगाराणं	उदय–जीवा		वियाहिया ॥
म.	च	खलु	भो	अणगाराणं	उदयं	जीवा	वियाहिया ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

प्रा. सत्थं चेत्थ अनुवीयि पास, पुढो सत्थं पवेदितं ।
शु. सत्थं चेत्थ अणुवीइ, पास पुढो सत्थं पवेइयं :
आ. सत्थं चेत्थं अणुवीइ पासा, पुढो सत्थं पवेइयं(२५)
जै. सत्थं चेत्थ अणुवीइ पासा ॥ ५७. 'पुढो सत्थं' पवेइयं॥
म.५६ सत्थं चेत्थ अणुबीयि पास । पुढो सत्थं पवेदितं ।

प्रा. अदुवा अदिन्नादानं । २७. कप्पति ने, कप्पति ने
शु. अदु वा अइन्ना'याणं : 'कप्पइ णे कप्पइ णे
आ. अदुवा अदिन्नादाणं (२६) कप्पइ णे कप्पइ णे
जै. ५८. अदुवा अदिण्णादाणं ॥ ५९. कप्पइ णे, कप्पइ णे
म. अदुवा अदिण्णादाणं । २७. कप्पइ णे कप्पइ णे

प्रा. पातुं ।अदुवा विभूसाए पुढो सत्थेहि विउट्टन्ति ।
शु. पाउं', अदु वा विभूसाए पुढो सत्थेहिं विउट्टन्ति ।
आ. पाउं, अदुवा विभूसाए(२७) पुढो सत्थेहिं विउट्टन्ति(२८)
जै. पाउं, अदुवा विभूसाए ॥ ६०. पुढो सत्थेहिं विउट्टंति ॥
म. पातुं, अदुवा विभूसाए । पुढो सत्थेहिं विउट्टंति ।

प्रा. २८. एत्थ वि तेसिं नो निकरणाए । २९. एत्थ सत्थं
शु. एत्थ वि तेसिं नो निकरणाए । एत्थ सत्थं
आ. एत्थऽवि तेसिं नो निकरणाए (२९) एत्थ सत्थं
जै. ६१. एत्थवि तेसिं णो णिकरणाए ॥ ६२. एत्थ सत्थं
म. २८. एत्थ वि तेसिं णो णिकरणाए । २९. एत्थ सत्थं

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

प्रा.	**समारम्भमाणस्स**	**इच्चेते**	**आरम्भा**	**अपरिन्नाता**	**भवन्ति ।**		**एत्थ**
शु.	समारभमाणस्स	इच्चेए	आरम्भा	अपरिन्नाया	भवन्ति,		एत्थ
आ.	समारभमाणस्स	इच्चेए	आरंभा	अपरिण्णाया	भवंति,		एत्थ
जै.	समारंभमाणस्स	इच्चेते	आरंभा	अपरिण्णाया	भवंति ॥	६३.	एत्थ
म.	समारभमाणस्स	इच्चेते	आरंभा	अपरिण्णाया	भवंति ।		एत्थ

प्रा.	**सत्थं**	**असमारम्भमाणस्स**	**इच्चेते**	**आरम्भा**	**परिन्नाता**	**भवन्ति।**
शु.	सत्थं	असमारभमाणस्स	इच्चेए	आरम्भा	परिन्नाया	भवन्ति ।
आ.	सत्थं	असमारभमाणस्स	इच्चेते	आरंभा	परिण्णाया	भवंति,
जै.	सत्थं	असमारंभमाणस्स	इच्चेते	आरंभा	परिण्णाया	भवंति ॥
म.	सत्थं	असमारभमाणस्स	इच्चेते	आरंभा	परिण्णाया	भवंति ।

प्रा.	**३०.**	**तं**	**परिन्नाय**	**मेधावी**	**नेव**	**सयं**	**उदकसत्थं**	**समारम्भेज्जा,**
शु.		तं	परिन्नाय	मेहावी	ने'व	सयं	उदयसत्थं	समारभेज्जा
आ.		तं	परिण्णाय	मेहावी	णेव	सयं	उदयसत्थं	समारम्भेज्जा
जै.	६४.	तं	परिण्णाय	मेहावी	णेव	सयं	उदय—सत्थं	समारंभेज्जा,
म.	३०.	तं	परिण्णाय	मेहावी	णेव	सयं	उदयसत्थं	समारभेज्जा,

प्रा.	**नेवऽन्नेहि**	**उदकसत्थं**	**समारम्भावेज्जा,**	**—**	**उदकसत्थं**
शु.	ने'व'न्नेहिं	उदयसत्थं	समारम्भावेज्जा	ने'व'न्ने	उदयसत्थं
आ.	णेवण्णेहिं	उदयसत्थं	समारंभावेज्जा	—	उदयसत्थं
जै.	णेवन्नेहिं	उदय—सत्थं	समारंभावेज्जा,	—	उदय—सत्थं
म.	णेवण्णेहिं	उदयसत्थं	समारभावेज्जा,	—	उदयसत्थं

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

प्रा.	**समारम्भन्ते**	**वि**	**अन्ने**	**न**	**समनुजानेज्जा ।**	**३१. जस्सेते**
शु.	समारभन्ते	—	—	—	समणुजाणेज्जा ।	जस्से'ए
आ.	समारंभंतेऽवि		अण्णे	ण	समणुजाणेज्जा,	जस्सेते
जै.	समारंभंतेवि		अण्णे	ण	समणुजाणेज्जा ॥	६५. जस्सेते
म.	समारभंते	वि	अण्णे	ण	समणुजाणेज्जा ।	३१. जस्सेते

प्रा.	**उदकसत्थसमारम्भा**	**परिन्नाता**	**भवन्ति**	**से**	**हु**	**मुनी**
शु.	उदयकम्मसमारम्भा	परिन्नाया	भवन्ति	से	हु	मुणी
आ.	उदयसत्थसमारंभा	परिण्णाया	भवंति	से	हु	मुणी
जै.	उदय—सत्थ—समारंभा	परिण्णाया	भवंति,	से	हु	मुणी
म.	उदयसत्थसमारंभा	परिण्णाया	भवंति	से	हु	मुणी

प्रा.	**परिन्नातकम्मे**		**त्ति**	**बेमि ।**
शु.	परिन्नायकम्मे—		त्ति	बेमि ।
आ.	परिण्णातकम्मे(३०)		त्ति	बेमि ॥
जै.	परिण्णात—कम्मे ।	—	त्ति	बेमि ॥
म.	परिण्णात—कम्मे		त्ति	बेमि ।

चतुत्थे उद्देसगे

प्रा.	**३२.**	**से**	**बेमि—**	**नेव**	**सयं**	**लोकं**	**अब्भाइक्खेज्जा,**	**नेव**	**अत्तानं**
शु.		से	बेमि :	ने'व	सयं	लोगं	अब्भाइक्खेज्जा	ने'व	अत्ताणं
आ.		से	बेमि	णेव	सयं	लोगं	अब्भाइक्खेज्जा	णेव	अत्ताणं
जै.	६६.	'से	बेमि'—	णेव	सयं	लोगं	अब्भाइक्खेज्जा,	णेव	अत्ताणं
म.	३२.	से	बेमि—	णेव	सयं	लोगं	अब्भाइक्खेज्जा,	णेव	अत्ताणं

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

प्रा.	**अब्भाइक्खेज्जा ।**	**जे**	**लोकं**	**अब्भाइक्खति**	**से**	**अत्तानअब्भाइक्खति,**	
शु.	अब्भाइक्खेज्जा ।	जे	लोगं	अब्भाइक्खइ,	से	अत्ताणं	अब्भाइक्खइ;
आ.	अब्भाइक्खेज्जा,	जे	लोयं	अब्भाइक्खइ	से	अत्ताणं	अब्भाइक्खइ,
जै.	अब्भाइक्खेज्जा ॥	जे	लोगं	अब्भाइक्खइ,	से	अत्ताणं	अब्भाइक्खइ ।
म.	अब्भाइक्खेज्जा ।	जे	लोगं	अब्भाइक्खति	से	अत्ताणं	अब्भाइक्खति

प्रा.	**जे**	**अत्तानं**	**अब्भाइक्खति**	**से**	**लोकं**	**अब्भाइक्खति ।**	**जे**
शु.	जे	अत्ताणं	अब्भाइक्खइ,	से	लोगं	अब्भाइक्खइ ।	जे
आ.	जे	अत्ताणं	अब्भाइक्खइ	से	लोयं	अब्भाइक्खइ (३१)	जे
जै.	जे	अत्ताणं	अब्भाइक्खइ,	से	लोगं	अब्भाइक्खइ ॥	६७. जे
म.	जे	अत्ताणं	अब्भाइक्खति	से	लोगं	अब्भाइक्खति ।	जे

प्रा.	**दीहलोकसत्थस्स**	**खेत्तन्ने**	**से**	**असत्थस्स**	**खेत्तन्ने,**	**जे**
शु.	दीहलोग–सत्थस्स	खेयन्ने,	से	असत्थस्स	खेयन्ने;	जे
आ.	दीहलोगसत्थस्स	खेयण्णे	से	असत्थस्स	खेयण्णे	जे
जै.	दीहलोग–सत्थस्स	खेयण्णे,	से	असत्थस्स	खेयण्णे ।	जे
म.	दीहलोगसत्थस्स	खेत्तण्णे	से	असत्थस्स	खेत्तण्णे,	जे

प्रा.	**असत्थस्स**	**खेत्तन्ने**	**से**	**दीहलोकसत्थस्स**	**खेत्तन्ने ।**
शु.	असत्थस्स	खेयन्ने,	से	दीहलोग–सत्थस्स	खेयन्ने ।
आ.	असत्थस्स	खेयण्णे	से	दीहलोगसत्थस्स	खेयण्णे (३२)
जै.	असत्थस्स	खेयण्णे,	से	दीहलोग–सत्थस्स	खेयण्णे ॥
म.	असत्थस्स	खेत्तण्णे	से	दीहलोगसत्थस्स	खेत्तण्णे ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

प्रा. ३३. वीरेहि एतं अभिभूय दिट्ठं। सञ्जतेहि सदा जतेहि सदा
शु. वीरेहिं एयं अभिभूय दिट्ठं संजएहिं सया जएहिं सया
आ. वीरेहिं एयं अभिभूय दिट्ठं, संजएहिं सया जत्तेहिं सया
जै. ६८. वीरेहिं एयं अभिभूय दिट्ठं, संजतेहिं सया जतेहिं सया
म. ३३. वीरेहि एयं अभिभूय दिट्ठं संजतेहिं सता जतेहिं सदा

प्रा. अप्पमत्तेहि। जे पमत्ते गुणट्ठिते से हु दण्डे पवुच्चति
शु. अप्पमत्तेहिं ; जे पमत्ते गुणट्ठिए, से हु दण्डे पवुच्चइ ;
आ. अप्पमत्तेहिं (३३) जे पमत्ते गुणट्ठीए, से हु दंडेत्ति पवुच्चइ(३४)
जै. अप्पमत्तेहिं ॥ ६९. जे पमत्ते गुणट्ठिए, से हु दंडे पवुच्चति ॥
म. अप्पमत्तेहिं ।' जे पमत्ते गुणट्ठिते से हु दंडे पवुच्चति ।

प्रा. तं परिन्नाय मेधावी "इदानिं नो, जमहं पुव्वमकासी
शु. तं परिन्नाय मेहावी "इयाणिं नो, जमहं पुव्वमकासी
आ. तं परिण्णाय मेहावी इयाणिं णो जमहं पुव्वमकासी
जै. ७०. तं परिण्णाय मेहावी इयाणिं णो जमहं पुव्वमकासी
म. तं परिण्णाय मेहावी इदाणीं णो जमहं पुव्वमकासी

प्रा. पमादेन"। ३४. लज्जमाना पुढो पास। अनगारा
शु. पमाएणं"। लज्जमाणा पुढो पास। "अणगारा
आ. पमाएणं (३५) लज्जमाणा पुढो पास– अणगारा
जै. पमाएणं ॥ ७१. लज्जमाणा पुढो पास ॥ ७२. अणगारा
म. पमादेणं। ३४. लज्जमाणा पुढो पास। 'अणगारा

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

प्रा.	**मो त्ति**	**एके**	**पवदमाना,**	**जमिणं**	**विरूवरूवेहि**
शु.	मो''त्ति	एगे	पवयमाणा ।	जमिणं	विरूवरूवेहिं
आ.	मोत्ति	एगे	पवदमाणा	जमिणं	विरूवरूवेहिं
जै.	मोत्ति	एगे	पवयमाणा ।। ७३.	जमिणं	विरूवरूवेहिं
म.	मो'त्ति	एगे	पवदमाणा,	जमिणं	विरूवरूवेहिं

प्रा.	**सत्थेहि**	**अगनिकम्मसमारम्भेण**	**अगनिसत्थं**	**समारम्भमाणे**	**अन्ने**
शु.	सत्थेहिं	अगणिकम्मसमारम्भेणं	अगणिसत्थं	समारम्भमाणे	अन्ने
आ.	सत्थेहिं	अगणिकम्मसमारम्भेणं	अगणिसत्थं	समारभमाणे	अण्णे
जै.	सत्थेहिं	अगणि—कम्म—समारंभेणं	अगणि—सत्थं	समारंभमाणे,	अण्णे
म.	सत्थेहिं	अगणिकम्मसमारंभेणं	अगणिसत्थं	समारंभमाणे	अण्णे

प्रा.	**वऽनेकरूवे**	**पाणे**	**विहिंसति । ३५.**	**तत्थ**	**खलु**	**भगवता**	**परिन्ना**
शु.	व'णेगरूवे	पाणे	विहिंसइ—	तत्थ	खलु	भगवया	परिन्ना
आ.	अणेगरूवे	पाणे	विहिंसंति ।	तत्थ	खलु	भगवता	परिण्णा
जै.	वणेगरूवे	पाणे	विहिंसति ।। ७४.	तत्थ	खलु	भगवया	परिण्णा
म.	वऽणेगरूवे	पाणे	विहिंसति । ३५.	तत्थ	खलु	भगवता	परिण्णा

प्रा.	**पवेदिता—**	**इमस्स**	**चेव**	**जीवितस्स**	**परिवन्दन—मानन—पूजनाए**
शु.	पवेइया	इमस्स	चे'व	जीवियस्स	परिवन्दण—माणण—पूयणाए,
आ.	पवेदिता,	इमस्स	चेव	जीवियस्स	परिवंदणमाणणपूयणाए
जै.	पवेइया ।। ७५.	इमस्स	चेव	जीवियस्स,	परिवंदण—माणण—पूयणाए ,
म.	पवेदिता—	इमस्स	चेव	जीवियस्स	परिवंदण—माणण—पूयणाए

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

प्रा.	**जाति–मरण-मो॰॰ाए दुक्खपडिघातहेतुं–**	**से**	**सयमेव**
शु.	जाइ–मरण–मोयणाए दुक्खपडिघायहेउं–	से	सयमेव
आ.	जाइमरणमोयणाए ॰क्खपडिघायहेउं	से	सयमेव
जै.	जाई–मरण–मोयणाए, दुक्खपडिघायहेउं ॥ ७६.	से	सयमेव
म.	जाती–मरण–मोयणाए दुक्खपडिघातहेतुं	से	सयमेव

॰ा.	**अगनिसत्थं**	**समारम्भति,अन्नेहि**	**वा**	**अगनि॰॰त्थं**	**समारम्भावेति,**
शु.	अगणिसत्थं	समारम्भइ अ॰॰॰	वा	अग॰॰सत्थं	समारम्भावेइ
आ.	अगणिसत्थं	समारभइ ॰॰॰हिं	वा	अ॰॰णिसत्थं	समारंभावेइ
जै.	अगणि–सत्थं	॰॰ारंभइ, अण्णेहिं	वा	अगणि–सत्थं	समारंभावेइ,
म.	अगणि–सत्थं	समारभति, अण्णे॰हि	वा	अगणिसत्थं	समारभावेति,

प्रा.	**अन्ने**	**वा**	**॰निसत्थं**	**समारम्भमाणे**	**समनुजानति ।**	**तं**
शु.	अन्ने	वा	अगणिसत्थं	समारभन्ते	समणुजाणइ ;	तं
आ.	अण्णे	वा	अगणिसत्थं	समारभमाणे	समणुजाणइ,	तं
जै.	अण्णे	वा	अगणि–सत्थं	समारंभमाणे	समणुजाणइ ॥ ७७.	तं
म.	अण्णे	वा	अगणिसत्थं	समारभमाणे	समणुजाणति ।	तं

प्रा.	**से**	**अहिताए , तं**	**से**	**अबोधीए । ३६.**	**से**	**त्तं**	**सम्बुज्झमाने**
शु.	से	अहियाए , तं	से	अबोहीए ।	से	त्तं	सम्बुझमाणे
आ.	से	अहियाए तं	से	अबोहियाए	से	तं	संबुज्झमाणे
जै.	से	अहियाए , तं	से	अबोहीए ॥ ७८.	से	तं	संबुज्झमाणे,
म.	से	अहिताए , तं	से	अबोधीए । ३६.	से	त्तं	संबुज्झमाणे

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

प्रा.	आदानीयं	समुद्धाय		सोच्चा	–	भगवतो	अनगाराणं
शु.	आयाणीयं	समुट्ठाए—		सोच्चा	खलु	भगवओ	अणगाराणं
आ.	आयाणीयं	समुट्ठाय		सोच्चा	—	भगवओ	अणगाराणं
जै.	आयाणीयं	समुट्ठाए ॥	७९.	सोच्चा	खलु	भगवओ	अणगाराणं
म.	आयाणीयं	समुट्ठाए		सोच्चा	—	भगवतो	अणगाराणं

प्रा.	वा	-	इधमेकेसिं	नातं	भवति—	एस	खलु	गन्थे,	एस
शु.	वा	अन्तिए	इहमेगेसिं	नायं	भवइ;	एस	खलु	गन्थे,	एस
आ.	—	–	इहमेगेसिं	णायं	भवति—	एस	खलु	गंथे	एस
जै.	वा	अंतिए	इहमेगेसिं	णायं	भवति—	एस	खलु	गंथे,	एस
म.	—	—	इहमेगेसिं	णातं	भवति—	एस	खलु	गंथे,	एस

प्रा.	खलु	मोहे,	एस	खलु	मारे,	एस	खलु	नरके ।
शु.	खलु	मोहे,	एस	खलु	मारे,	एस	खलु	नरए ।
आ.	खलु	मोहे	एस	खलु	मारे	एस	खलु	णरए ॥
जै.	खलु	मोहे,	एस	खलु	मारे,	एस	खलु	णरए ॥
म.	खलु	मोहे,	एस	खलु	मारे,	एस	खलु	निरए ।

प्रा.		इच्चत्थं	गढिते	लोके ।		जमिणं	विरूवरूवेहि
शु.		इच्चत्थं	गढिए	लोए ।		जमिणं	विरूवरूवेहिं
आ.		इच्चत्थं	गड्ढिए	लोए		जमिणं	विरूवरूवेहिं
जै.	८०	इच्चत्थं	गढिए	लोए ॥	८१.	जमिणं	विरूवरूवेहिं
म.		इच्चत्थं	गढिए	लोए ,		जमिणं	विरूवरूवेहिं

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

प्रा.	**सत्थेहि**	**अगनिकम्मसमारम्भेण**	**अगनिसत्थं**	**समारम्भमाणे**	**अन्ने**
शु.	सत्थेहिं	अगणिसत्थसमारम्भेणं	अगणिसत्थं	समारभमाणे	अन्ने
आ.	सत्थेहिं	अगणिकम्मसमारंभमाणे	–	–	अण्णे
जै.	सत्थेहिं	अगणि–कम्म–समारंभेणं	अगणि–सत्थं	समारंभमाणे	अण्णे
म.	सत्थेहिं	अगणिकम्मसमारंभेणं	अगणिसत्थं	समारभमाणे	अण्णे

प्रा.	**वऽनेकरूवे**	**पाणे**	**विहिंसति।**	**३७.**	**से**	**बेमि–**	–
शु.	व'णेगरूवे	पाणे	विहिंसइ–		से	बेमिः	–
आ.	अणेगरूवे	पाणे	विहिंसइ (३६)		से	बेमि–	–
जै.	वणेगरूवे	पाणे	विहिंसति ॥	८२.	से	बेमि–	अप्पेगे
म.	वऽणेगरूवे	पाणे	विहिंसति ।	३७.	से	बेमि–	–

प्रा.	–	–	–	–	–	–
शु.	–	–	–	–	–	–
आ.	–	–	–	–	–	–
जै.	अंधमब्भे,	अप्पेगे	अंधमच्छे ॥	८३. अप्पेगे	पायमब्भे,	अप्पेगे
म.	–	–	–	–	–	–

प्रा.	–		–	–	–	–	–
शु.	–		–	–	–	–	–
आ.	–		–	–	–	–	–
जै.	पायमच्छे ॥	८४.	अप्पेगे	संपमारए,	अप्पेगे	उद्दवए	॥८५.से
म.	–		–	–	–	–	–

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

प्रा. – सन्ति पाणा पुढविनिस्सिता तणनिस्सिता पत्तनिस्सिता
शु. – सन्ति पाणा पुढवि–निस्सिया तण–निस्सिया पत्त–निस्सिया
आ. – संति पाणा पुढवीनिस्सिया तणणिस्सिया पत्तणिस्सिया
जै. बेमि– संति पाणा पुढवि–णिस्सिया, तण–णिस्सिया, पत्त–णिस्सिया,
म. – संति पाणा पुढविणिस्सिता तणणिस्सिता पत्तणिस्सिता

प्रा. कट्ठनिस्सिता गोमयनिस्सिता कयवरनिस्सिता। सन्ति सम्पातिमा
शु. कट्ठ–निस्सिया गोमय–निस्सिया कयवर–निस्सिया, 'सन्ति संपाइमाः
आ. कट्ठनिस्सिया गोमयणिस्सिया कयवरणिस्सिया, संति संपातिमा
जै. कट्ठ–णिस्सिया, गोमय–णिस्सिया, कयवर–णिस्सिया। संति संपातिमा
म. कट्ठणिस्सिता गोमयणिस्सिता कयवरणिस्सिया। संति संपातिमा।

प्रा. पाणा आहच्च सम्पतन्ति य। अगनिं च खलु पुट्ठा
शु. पाणा, आहच्च सम्पयन्ति य'। अगणिं च खलु पुट्ठा
आ. पाणा आहच्च संपयंति, – अगणिं च खलु पुट्ठा
जै. पाणा, आहच्च संपयंति य। अगणिं च खलु पुट्ठा,
म. पाणा आहच्च संपयंति य। अगणिं च खलु पुट्ठा

प्रा. एके सङ्घातमावज्जन्ति। जे तत्थ सङ्घातमावज्जन्ति ते तत्थ
शु. एगे संघायमावज्जन्ति ; जे तत्थ संघायमावज्जन्ति; ते तत्थ
आ. एगे संघायमावज्जंति, जे तत्थ संघायमावज्जंति ते तत्थ
जै. एगे संघायमावज्जंति ॥ जे तत्थ संघायमावज्जंति, ते तत्थ
म. एगे संघातमावज्जंति। जे तत्थ संघातमावज्जंति ते तत्थ

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

प्रा.	**परियावज्जन्ति ।**	**जे**	**तत्थ**	**परियावज्जन्ति**	**ते**	**तत्थ**	**उद्दायन्ति ।**
शु.	परियाविज्जन्ति;	जे	तत्थ	परियाविज्जन्ति,	ते	तत्थ	उद्दायन्ति ।
आ.	परियावज्जंति,	जे	तत्थ	परियावज्जंति	ते	तत्थ	उद्दायंति(३७)
जै.	परियावज्जंति ।	जे	तत्थ	परियावज्जंति,	ते	तत्थ	उद्दायंति ॥
म.	परियावज्जंति ।	जे	तत्थ	परियावज्जंति	ते	तत्थ	उद्दायंति ।

प्रा.	**३८.**	**एत्थ**	**सत्थं**	**समारम्भमाणस्स**	**इच्चेते**	**आरम्भा**
शु.		एत्थ	सत्थं	समारभमाणस्स	इच्चेए	आरम्भा
आ.		एत्थ	सत्थं	असमारंभमाणस्स	इच्चेते	आरंभा
जै.	८६.	एत्थ	सत्थं	समारंभमाणस्स	इच्चेते	आरंभा
म.	३८.	एत्थ	सत्थं	समारभमाणस्स	इच्चेते	आरंभा

प्रा.	**अपरिन्नाता**	**भवन्ति ।**	**एत्थ**	**सत्थं**	**असमारम्भमाणस्स**	**इच्चेते**
शु.	अपरिन्नाया	भवन्ति ।	एत्थ	सत्थं	असमारभमाणस्स	इच्चेए
आ.	परिण्णाया	भवंति ,	—	—	—	
जै.	अपरिण्णाया	भवंति ॥ ८७.	एत्थ	सत्थं	असमारंभमाणस्स	इच्चेते
म.	अपरिण्णाता	भवंति ।	एत्थ	सत्थं	असमारभमाणस्स	इच्चेते

प्रा.	**आरम्भा**	**परिन्नाता**	**भवन्ति ।**	**—**	**—**	**—**	**—**
शु.	आरम्भा	परिन्नाया	भवन्ति ।	—	—	—	—
आ.	—	—	—	तं	परिण्णाय	मेहावी	णेव
जै.	आरंभा	परिण्णाया	भवंति ॥ ८८.	तं	परिण्णाय	मेहावी	नेव
म.	आरंभा	परिण्णाता	भवंति ।	—	—	—	—

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

प्रा.	–	–	–	–	–	–
शु.	–	–	–	–	–	–
आ.	सयं	अगणिसत्थं	समारंभे	नेवऽण्णेहिं	अगणिसत्थं	समारंभावेज्जा
जै.	सयं	अगणि–सत्थं	समारंभेज्जा,	नेवण्णेहिं	अगणि–सत्थं	समारंभावेज्जा,
म.	–	–	–	–	–	–

प्रा.	–	–	–	–	–
शु.	–	–	–	–	–
आ.	अगणिसत्थं	समारंभमाणे	अण्णे	न	समणुजाणेज्जा,
जै.	अगणिसत्थं	समारंभमाणे	अण्णे	न	समणुजाणेज्जा ॥
म.	–	–	–	–	–

प्रा.	**३९.जस्स**	**एते**	**अगनिकम्मसमारम्भा**	**परिन्नाता**	**भवन्ति**
शु.	जस्स	एए	अगणिकम्मसमारम्भा	परिन्नाया	भवन्ति
आ.	जस्सेते		अगणिकम्मसमारंभा	परिण्णाया	भवंति
जै.	८९.जस्सेते		अगणि–कम्म–समारंभा	परिण्णाया	भवंति,
म.	३९.जस्स	एते	अगणिकम्मसमारंभा	परिण्णाता	भवंति

प्रा.	**से**	**हु**	**मुनी**	**परिन्नातकम्मे**	**त्ति**	**बेमि ।**
शु.	से	हु	मुणी	परिन्नाय–कम्मे	–त्ति	बेमि ।
आ.	से	हु	मुणी	परिण्णायकम्मे (३८)	त्ति	बेमि ॥
जै.	से	हु	मुणी	परिण्णाय–कम्मे ।	–त्ति	बेमि ॥
म.	से	हु	मुणी	परिण्णायकम्मे	त्ति	बेमि ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

पञ्चमे उद्देसगे

प्रा.	**४०.**	**तं**	**नो**	**करिस्सामि**	**समुट्ठाय**	**मत्ता**
शु.		तं	नो	करिस्सामि	समुट्ठाए	मत्ता
आ.		तं	णो	करिस्सामि	समुट्ठाए,	मत्ता
जै.	९०.	तं	णो	करिस्सामि	समुट्ठाए ॥	९१. मंता
म.	४०.	तं	णो	करिस्सामि	समुट्ठाए	मत्ता

प्रा.	**मतिमं**	**अभयं**	**विदित्ता ।**	**तं**	**जे**	**नो**	**करए,**	**एसोवरते,**
शु.	मइमं	अभयं	विइत्ता ।	तं	जे	नो	करए,	एसोवरए ;
आ.	मइमं,	अभयं	विदित्ता,	तं	जे	णो	करए,	एसोवरए,
जै.	मइमं	अभयं	विदित्ता ॥ ९२.	तं	जे	णो	करए	एसोवरए,
म.	मतिमं	अभयं	विदित्ता	तं	जे	णो	करए	एसोवरते,

प्रा.	**एत्थोवरते**	**एस**	**अनगारे**	**त्ति**	**पवुच्चति ।**	**४१.**	**जे**
शु.	एत्थोवरए	एस	अणगारे	त्ति	पवुच्चइ ।		जे
आ.	एत्थोवरए,	एस	अणगारेत्ति	–	पवुच्चई (३९)		जे
जै.	एत्थोवरए	एस	अणगारेत्ति	–	पवुच्चइ ॥	९३.	जे
म.	एत्थोवरए,	एस	अणगारे	त्ति	पवुच्चति ।	४१.	जे

प्रा.	**गुणे**	**से**	**आवट्टे,**	**जे**	**आवट्टे**	**से**	**गुणे ।**	**उड्ढं**	**अधं**
शु.	गुणे	से	आवट्टे,	जे	आवट्टे	से	गुणे:	उड्ढं	अहं
आ.	गुणे	से	आवट्टे	जे	आवट्टे	से	गुणे (४०)	उड्ढं	अहं
जै.	गुणे	से	आवट्टे,	जे	आवट्टे	से	गुणे ॥ ९४.	उड्ढं	अहं
म.	गुणे	से	आवट्टे,	जे	आवट्टे	से	गुणे ।	उड्ढं	अहं

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

प्रा.	**तिरियं**	**पाईनं**	**पासमाने**	**रूवाणि**	**पासति,**	**सुणमाने**	**सद्दानि**
शु.	तिरियं	पाईणं	पासमाणे	रूवाइं	पासइ,	सुणमाणे	सद्दाइं
आ.	तिरियं	पाईणं	पासमाणे	रूवाइं	पासति,	सुणमाणे	सद्दाइं
जै.	तिरियं	पाईणं	'पासमाणे	रूवाइं	पासति',	'सुणमाणे	सद्दाइं
म.	तिरियं	पाईणं	पासमाणे	रूवाइं	पासति,	सुणमाणे	सद्दाइं

प्रा.	**सुणेति**	**उड्ढं**	**अधं**	**तिरियं**	**पाईनं**	**मुच्छमाने**	**रूवेसु**	**मुच्छति,**
शु.	सुणइ ;	उड्ढं	अहं	तिरियं	पाईणं	मुच्छमाणे	रूवेसु	मुच्छइ
आ.	सुणेति,	उड्ढं	अहं	–	पाईणं	मुच्छमाणे	रूवेसु	मुच्छति,
जै.	सुणेति' ॥ ९५.	उड्ढं	अहं	तिरियं	पाईणं	मुच्छमाणे	रूवेसु	मुच्छति,
म.	सुणेति ।	उड्ढं	अहं	तिरियं	पाईणं	मुच्छमाणे	रूवेसु	मुच्छति,

प्रा.	**सद्देसु**	**यावि ।**	**एस**	**लोके**	**वियक्खाते**		**एत्थ**
शु.	सद्देसु	यावि ।	एस	लोए	वियाहिए		एत्थ
आ.	सद्देसु	आवि (४१)	एस	लोए	वियाहिए		एत्थ
जै.	सद्देसु	आवि ॥ ९६.	एस	लोए	वियाहिए ॥	९७.	एत्थ
म.	सद्देसु	यावि ।	एस	लोगे	वियाहिते ।		एत्थ

प्रा.	**अगुत्ते**	**अनाणाए ।**		**पुनो**	**पुनो**	**गुणासादे**
शु.	अगुत्ते	अणाणाए ।		पुणो	पुणो	गुणासाए
आ.	अगुत्ते	अणाणाए (४२)		पुणो	पुणो	गुणासाए,
जै.	अगुत्ते	अणाणाए ॥	९८.	पुणो-पुणो		गुणासाए,
म.	अगुत्ते	अणाणाए		पुणो	पुणो	गुणासाते

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

प्रा.	**वङ्कसमायारे**	**पमत्ते**	**गारमावसे ।**	**४२.**	**लज्जमाना पुढो**
शु.	वंक–समायारे	पमत्ते	गारमावसे ।		लज्जमाणा पुढो
आ.	वंकसमायारे (४३)	पमत्तेऽगारमावसे (४४)			लज्जमाणा पुढो
जै.	वंकसमायारे,	पमत्ते	गारमावसे ॥	९९.	लज्जमाणा पुढो
म.	वंकसमायारे	पमत्ते	गारमावसे ।	४२.	लज्जमाणा पुढो

प्रा.	**पास ।**	**अनगारा**	**मो त्ति**	**एके**	**पवदमाना,**	**जमिणं**
शु.	पास ।	"अणगारा	मो"त्ति	एगे	पवयमाणा	जमिणं
आ.	पास,	अणगारा	मोत्ति	एगे	पवदमाणा	जमिणं
जै.	पास ॥१००.	अणगारा	मोत्ति	एगे	पवयमाणा ॥१०१	जमिणं
म.	पास ।	'अणगारा	मो'त्ति	एगे	पवदमाणा,	जमिणं

प्रा.	**विरूवरूवेहि**	**सत्थेहि**	**वनस्सतिकम्मसमारम्भेण**	**वनस्सतिसत्थं**
शु.	विरूवरूवेहिं	सत्थेहिं	वणस्सइ–कम्म–समारम्भेणं	वणस्सइसत्थं
आ.	विरूवरूवेहिं	सत्थेहिं	वणस्सइकम्मसमारंभेणं	वणस्सइसत्थं
जै.	विरूवरूवेहिं	सत्थेहिं	वणस्सइ–कम्म–समारंभेणं	वणस्सइ–सत्थं
म.	विरूवरूवेहिं	सत्थेहिं	वणस्सतिकम्मसमारंभेणं	वणस्सतिसत्थं

प्रा.	**समारम्भमाणे**	**अन्ने**	**वऽनेकरूवे**	**पाणे**	**विहिंसति**	**४३.**	**तत्थ**
शु.	समारम्भमाणे	अन्ने	व'णेगरूवे	पाणे	विहिंसइ–		तत्थ
आ.	समारभमाणा	अण्णे	अणेगरूवे	पाणे	विहिंसति,		तत्थ
जै.	समारंभमाणे	अण्णे	वणेगरूवे	पाणे	विहिंसति ॥	१०२.	तत्थ
म.	समारभमाणे	अण्णे	वऽणेगरूवे	पाणे	विहिंसति ।	४३.	तत्थ

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

प्रा.	**खलु**	**भगवता**	**परिन्ना**	**पवेदिता—**		**इमस्स**	**चेव**
शु.	खलु	भगवया	परिन्ना	पवेइया		इमस्स	चे'व
आ.	खलु	भगवया	परिण्णा	पवेदिता,		इमस्स	चेव
जै.	खलु	भगवया	परिण्णा	पवेदिता ॥	१०३.	इमस्स	चेव
म.	खलु	भगवता	परिण्णा	पवेदिता—		इमस्स	चेव

प्रा.	**जीवितस्स**	**परिवन्दन—मानन—पूजनाए**	**जाति—मरण—मोयनाए**
शु.	जीवियस्स	परिवन्दण—माणण—पूयणाए,	जाइ—मरण—मोयणाए
आ.	जीवियस्स	परिवंदणमाणणपूयणाए	जातीमरणमोयणाए
जै.	जीवियस्स,	परिवंदण—माणण—पूयणाए,	जाती—मरण—मोयणाए ,
म.	जीवियस्स	परिवंदण—माणण—पूयणाए	जाती—मरण—मोयणाए

प्रा.	**दुक्खपडिघातहेतुं—**		**से**	**सयमेव**	**वनस्सतिसत्थं**	**समारम्भति,**
शु.	दुक्ख—पडिघाय—हेउं—		से	सयमेव	वणस्सइ—सत्थं	समारम्भइ
आ.	दुक्खपडिघायहेउं		से	सयमेव	वणस्सइसत्थं	समारंभइ
जै.	दुक्खपडिघायहेउं ॥	१०४.	से	सयमेव	वणस्सइ—सत्थं	समारंभइ,
म.	दुक्खपडिघातहेतुं		से	सयमेव	वणस्सतिसत्थं	समारभति,

प्रा.	**अन्नेहि**	**वा**	**वनस्सतिसत्थं**	**समारम्भावेति,**	**अन्ने**	**वा**
शु.	अन्नेहिं	वा	वणस्सइ—सत्थं	समारम्भावेइ	अन्ने	वा
आ.	अण्णेहिं	वा	वणस्सइसत्थं	समारंभावेइ	अण्णे	वा
जै.	अण्णेहिं	वा	वणस्सइ—सत्थं	समारंभावेइ,	अण्णे	वा
म.	अण्णेहिं	वा	वणस्सतिसत्थं	समारभावेति,	अण्णे	वा

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

प्रा. वनस्सतिसत्थं समारम्भमाणे समनुजानति । तं से अहिताए
शु. वणस्सइसत्थं समारम्भन्ते समणुजाणइ; तं से अहियाए,
आ. वणस्सइसत्थं समारभमाणे समणुजाणइ, तं से अहियाए
जै. वण्णस्सइ—सत्थं समारंभमाणे समणुजाणइ ॥ १०५.तं से अहियाए
म. वणस्सतिसत्थं समारभमाणे समणुजाणति । तं से अहियाए

प्रा. तं से अबोधीए । ४४.से त्तं सम्बुज्झमाने आदानीयं
शु. तं से अबोहीए । से त्तं संबुज्झमाणे आयाणीयं,
आ. तं से अबोहीए, । से तं संबुज्झमाणे आयाणीयं
जै. तं से अबोहीए ॥ १०६. से तं संबुज्झमाणे, आयाणीयं
म. तं से अबोहीए । ४४. से त्तं संबुज्झमाणे आयाणीयं

प्रा. समुट्ठाय सोच्चा - भगवतो अनगाराणं वा –
शु. समुट्ठाए— सोच्चा खलु भगवओ अणगाराणं वा अन्तिए
आ. समुट्ठाए सोच्चा - भगवओ अणगाराणं वा अंतिए
जै. समुट्ठाए ॥ १०७. सोच्चा - भगवओ, अणगाराणं वा अंतिए
म. समुट्ठाए सोच्चा - भगवतो अणगाराणं — —

प्रा. इधमेकेसिं नातं भवति— एस खलु गन्थे, एस खलु
शु. इहमेगेसिं नायं भवइ : एस खलु गन्थे, एस खलु
आ. इहमगेसिं णायं भवति— एस खलु गंथे एस खलु
जै. इहमेगेसिं णायं भवति— एस खलु गंथे, एस खलु
मं. इहमेगेसिं णायं भवति— एस खलु गंथे, एस खलु

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

प्रा.	**मोहे,**	**एस**	**खलु**	**मारे,**	**एस**	**खलु**	**नरके ।**		**इच्चत्थं**
शु.	मोहे,	एस	खलु	मारे,	एस	खलु	नरए ।		इच्चत्थं
आ.	मोहे	एस	खलु	मारे	एस	खलु	णरए,		इच्चत्थं
जै.	मोहे,	एस	खलु	मारे,	एस	खलु	णिरए ॥	१०८.	इच्चत्थं
म.	मोहे,	एस	खलु	मारे,	एस	खलु	णिरए ।		इच्चत्थं

प्रा.	**गढिते**	**लोके ।**		**जमिणं**	**विरूवरूवेहि**	**सत्थेहि**
शु.	गढिए	लोए ।		जमिणं	विरूवरूवेहिं	सत्थेहिं
आ.	गड्ढिए	लोए,		जमिणं	विरूवरूवेहिं	सत्थेहिं
जै.	गढिए	लोए,	१०९.	जमिणं	विरूवरूवेहिं	सत्थेहिं
म.	गढिए	लोए,		जमिणं	विरूवरूवेहिं	सत्थेहिं

प्रा.	**वणस्सइकम्मसमारम्भेण**	**वनस्सतिसत्थं**	**समारम्भमाणे**	**अन्ने**
शु.	वणस्सइ—कम्म—समारम्भेणं	वणस्सइसत्थं	समारम्भमाणे	अन्ने
आ.	वणस्सइकम्मसमारंभेणं	वणस्सइसत्थं	समारंभमाणे	अण्णे
जै.	वणस्सइ—कम्म—समारंभेणं	वणस्सइ—सत्थं	समारंभेमाणे	अण्णे
म.	वणस्सतिकम्मसमारंभेणं	वणस्सतिसत्थं	समारभमाणे	अण्णे

प्रा.	**वऽनेकरूवे**	**पाणे**	**विहिंसति ।**	**४५.**	**से**	**बेमि —**	**—**
शु.	व'णेगरूवे	पाणे	विहिंसइ—		से	बेमि :	—
आ.	अणेगरूवे .	पाणे	विहिंसंति (४५)		से	बेमि	—
जै.	वणेगरूवे	पाणे	विहिंसति ॥	११०.	से	बेमि—	अप्पेगे
म.	वऽणेगरूवे	पाणे	विहिंसति ।	४५.	से	बेमि—	—

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

प्रा.	—	—	—		—	—
शु.	—	—	—		—	—
आ.	—	—	—		—	—
जै.	अंधमब्भे,	अप्पेगे	अंधमच्छे ॥	१११.	अप्पेगे	पायमब्भे,
म.	—	—	—		—	—

प्रा.	—	—		—	—	—	
शु.	—	—		—	—	—	
आ.	—	—		—	—	—	
जै.	अप्पेगे	पायमच्छे ॥	११२.	अप्पेगे	संपमारए,	अप्पेगे	उद्दवए ॥
म.	—	—		—	—	—	—

प्रा.	**—**	**इमं**	**पि**	**जाति–धम्मयं,**	**एतं**	**पि**	**जाति–धम्मयं ।**
शु.	—	इमं	पि	जाइ–धम्मयं,	एयं	पि	जाइ–धम्मयं;
आ.	—	इमंपि		जाइधम्मयं	एयं	पि	जाइधम्मयं
जै.	से बेमि–	इमंपि		जाइधम्मयं,	एयं	पि	जाइधम्मयं ।
म.	—	इमं	पि	जातिधम्मयं,	एयं	पि	जातिधम्मयं;

प्रा.	**इमं**	**पि**	**वुड्ढिधम्मयं**	**एतं**	**पि**	**वुड्ढिधम्मयं ।**	**इमं**	**पि**
शु.	इमं	पि	वुड्ढि–धम्मयं,	एयं	पि	वुड्ढि–धम्मयं;	इमं	पि
आ.	इमंपि		वुड्ढिधम्मयं	एयंपि		वुड्ढिधम्मयं	इमं	पि
जै.	इमांप		वुड्ढिधम्मयं	एयंपि		वुड्ढिधम्मयं ।	इमं	पि
म.	इमं	पि	वुड्ढिधम्मयं,	एयं	पि	वुड्ढिधम्मयं;	इमं	पि

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

प्रा. चित्तमन्तयं, एतं पि चित्तमन्तयं। इमं पि छिन्नं मिलाति, एतं
शु. चित्तमन्तयं एयं पि चित्तमन्तयं; इमं पि छिन्नं मिलाइ एयं
आ. चित्तमंतयं एयं पि चित्तमंतयं इमंपि छिण्णं मिलाइ एयंपि
जै. चित्तमंतयं, एयं पि चित्तमंतयं। इमंपि छिन्नं मिलाति, एयंपि
म. चित्तमंतयं, एयं पि चित्तमंतयं; इमं पि छिण्णं मिलाति, एयं

प्रा. पि छिन्नं मिलाति। इमं पि आहारगं, एतं पि आहारगं।
शु. पि छिन्नं मिलाइ; इमं पि आहारगं, एयं पि आहारगं;
आ. छिण्णं मिलाइ इमंपि आहारगं एयंपि आहारगं
जै. छिन्नं मिलाति। इमंपि आहारगं, एयंपि आहारगं।
म. पि छिण्णं मिलाति; इमं पि आहारगं, एयं पि आहारगं;

प्रा. इमं पि अनितियं, एतं पि अनितियं। इमं पि असासतं,
शु. इमं पि अनिच्चयं, एयं पि अनिच्चयं; इमं पि असासयं,
आ. इमंपि अणिच्चयं एयं पि अणिच्चयं इमंपि असासयं
जै. इमंपि अणिच्चयं, एयं पि अणिच्चयं। इमंपि असासयं,
म. इमं पि अणितियं, एयं पि अणितियं; इमं पि असासयं,

प्रा. एतं पि असासतं। इमं पि चयावचइयं, एतं पि चयावचइयं।
शु. एयं पि असासयं; इमं पि चयावयइयं, एयं पि चयावचइयं;
आ. एयंपि असासयं इमंपि चओवचइयं एयंपि चओवचइयं
जै. एयंपि असासयं इमंपि चयावचइयं, एयंपि चयावचइयं।
म. एयं पि असासयं; इमं पि चयोवचइयं, एयं पि चयोवचइयं;

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

प्रा.	**इमं**	**पि**	**विपरिणामधम्मयं,**	**एतं**	**पि**	**विपरिणामधम्मयं ।**
शु.	इमं	पि	विपरिणाम–धम्मयं,	एयं	वि	विपरिणाम–धम्मयं
आ.	इमंपि		विपरिणामधम्मयं	एयंपि		विपरिणामधम्मयं (४६)
जै.	इमंपि		विपरिणामधम्मयं,	एयंपि		विपरिणामधम्मयं ॥
म.	इमं	पि	विप्परिणामधम्मयं,	एयं	पि	विप्परिणामधम्मयं ।

प्रा.४६.	**एत्थ**	**सत्थं**	**समारम्भमाणस्स**	**इच्चेते**	**आरम्भा**	**अपरिन्नाता**
शु.	एत्थ	सत्थं	समारम्भमाणस्स	इच्चेए	आरम्भा	अपरिन्नाया
आ.	एत्थ	सत्थं	समारभमाणस्स	इच्चेते	आरंभा	अपरिण्णाता
जै.११४.	एत्थ	सत्थं	समारंभमाणस्स	इच्चेते	आरंभा	अपरिण्णाया
म.४६.	एत्थ	सत्थं	समारभमाणस्स	इच्चेते	आरंभा	अपरिण्णाता

प्रा.	**भवन्ति ।**	**एत्थ**	**सत्थं**	**असमारम्भमाणस्स**	**इच्चेते**	**आरम्भा**
शु.	भवन्ति,	एत्थ	सत्थं	असमारम्भमाणस्स	इच्चेए	आरम्भा
आ.	भवंति,	एत्थ	सत्थं	असमारभमाणस्स	इच्चेते	आरंभा
जै.	भवंति ॥११५.	एत्थ	सत्थं	असमारंभमाणस्स	इच्चेते	आरंभा
म.	भवंति ।	एत्थ	सत्थं	असमारभमाणस्स	इच्चेते	आरंभा

प्रा.	**परिन्नाता**	**भवन्ति ।**	**४७.**	**तं**	**परिन्नाय**	**मेधावी**	**नेव**	**सयं**
शु.	परिन्नाया	भवन्ति ।		तं	परिन्नाय	मेहावी	ने'व	सयं
आ.	परिन्नाया	भवंति,		तं	परिण्णाय	मेहावी	णेव	सयं
जै.	परिण्णाया	भवंति ॥	११६.	तं	परिण्णाय	मेहावी	णेव	सयं
म.	परिण्णाया	भवंति ।	४७.	तं	परिण्णाय	मेहावी	णेव	सयं

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

प्रा.	**वनस्सतिसत्थं**	**समारम्भेज्जा**	**नेवऽन्नेहि**	**वनस्सतिसत्थं**	**समारम्भावेज्जा,**
शु.	वणस्सइसत्थं	समारंभेज्जा	ने'व'न्नेहिं	वणस्सइसत्थं	समारम्भावेज्जा
आ.	वणस्सइसत्थं	समारंभेज्जा	णेवण्णेहिं	वणस्सइसत्थं	समारंभावेज्जा
जै.	वणस्सइ—सत्थं	समारंभेज्जा,	णेवण्णेहिं	वणस्सइ—सत्थं	समारंभावेज्जा,
म.	वणस्सतिसत्थं	समारभेज्जा,	णेवऽण्णेहिं	वणस्सतिसत्थं	समारभावेज्जा,

प्रा.	**नेवऽन्ने**	**वनस्सतिसत्थं**	**समारम्भन्ते**	**समनुजानेज्जा ।**
शु.	ने'व'न्ने	वणस्सइसत्थं	समारभन्ते	समणुजाणेज्जा ।
आ.	णेवण्णे	वणस्सइसत्थं	समारंभंते	समणुजाणेज्जा,
जै.	णेवण्णे	वणस्सइ—सत्थं	समारंभंते	समणुजाणेज्जा ॥
म.	णेवऽण्णे	वणस्सतिसत्थं	समारभंते	समणुजाणेज्जा ।

प्रा.	**४८.**	**जस्सेते**	**वनस्सतिसत्थसमारम्भा**	**परिन्नाता**	**भवन्ति**	**से**
शु.		जस्से'ए	वणस्सइ—कम्म—समारम्भा	परिन्नाया	भवन्ति	से
आ.		जस्सेते	वणस्सतिसत्थसमारंभा	परिण्णाया	भवंति	से
जै.	११७.	जस्सेते	वणस्सइ—सत्थ—समारंभा	परिण्णाया	भवंति,	से
म.	४८.	जस्सेते	वणस्सतिसत्थसमारंभा	परिण्णाया	भवंति	से

प्रा.	**हु**	**मुनी**	**परिन्नातकम्मे**	**त्ति**	**बेमि ।**
शु.	हु	मुणी	परिन्नाय—कम्मे—	त्ति	बेमि ।
आ.	हु	मुणी	परिण्णायकम्मे (४७)	त्ति	बेमि ॥
जै.	हु	मुणी	परिण्णाय—कम्मे ।—	त्ति	बेमि ॥
म.	हु	मुणी	परिण्णायकम्मे	त्ति	बेमि ॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

छट्ठे उद्देसगे

ग. ४९. से बेमि— सन्निमे तसा पाणा तं अधा— अण्डया
से बेमि: सन्निमे तसा पाणा, तं जहा : अण्डया
ग. से बेमि संतिमे तसा पाणा, तं जहा अंडया
११८. से बेमि— संतिमे तसा पाणा, तं जहा— अंडया
४९. से बेमि— संतिमे तसा पाणा, तं जहा— अंडया

ग. पोतया जराउया रसया संसेदया सम्मुच्छिमा उब्भिया ओववातिया।
पोयया जराउया रसया संसेयया सम्मुच्छिमा उब्भिया उववाइया।
ग. पोयया जराउया रसया संसेयया संमुच्छिमा उब्भियया उववाइया,
पोयया जराउया रसया संसेयया संमुच्छिमा उब्भिया ओववाइया ॥
पोतया जराउया रसया संसेयया सम्मुच्छिमा उब्भिया उववातिया।

ग. एस संसारे त्ति पवुच्चति मन्दस्स
एस संसारे त्ति पवुच्चइ मन्दस्स
ग. एस संसारेत्ति पवुच्चई (४८) मन्दस्सावियाणओ(४९)
११९. एस संसारेत्ति पवुच्चति ॥ १२०. मंदस्स
एस संसारे त्ति पवुच्चति मंदस्स

ग. अविजानतो। निज्झाइत्ता पडिलेहित्ता पत्तेगं परिनिव्वाणं।
अविजाणओ। निज्झाइत्ता पडिलेहित्ता पत्तेयं परिनिव्वाणं
निज्झाइत्ता पडिलेहित्ता पत्तेयं परिनिव्वाणं
अवियाणओ ॥ १२१. णिज्झाइत्ता पडिलेहित्ता पत्तेयं परिनिव्वाणं ॥
अवियाणओ। णिज्झाइत्ता पडिलेहित्ता पत्तेयं परिनिव्वाणं

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

प्रा.		**सव्वेसिं**	**पाणानं**	**सव्वेसिं**	**भूतानं,**	**सव्वेसिं**	**जीवानं**
शु.		सव्वेसिं	पाणाणं	सव्वेसिं	भूयाणं,	सव्वेसिं	जीवाणं,
आ.		सव्वेसिं	पाणाणं	सव्वेसिं	भूयाणं	सव्वेसिं	जीवाणं
जै.	१२२.	सव्वेसिं	पाणाणं	सव्वेसिं	भूयाणं	सव्वेसिं	जीवाणं
म.		सव्वेसिं	पाणाणं	सव्वेसिं	भूताणं	सव्वेसिं	जीवाणं

प्रा.	**सव्वेसिं**	**सत्तानं**	**असातं**	**अपरिनिव्वाणं**	**महब्भयं**	**दुक्खं**	**ति**
शु.	सव्वेसिं	सत्ताणं	असायं	अपरिणिव्वाणं	महब्भयं	दुक्खं	ति
आ.	सव्वेसिं	सत्ताणं	अस्सायं	अपरिनिव्वाणं	महब्भयं	दुक्खं	तिबेमि,
जै.	सव्वेसिं	सत्ताणं	अस्सायं	अपरिणिव्वाणं	महब्भयं	दुक्खं	ति
म.	सव्वेसिं	सत्ताणं	अस्सातं	अपरिणिव्वाणं	महब्भयं	दुक्खं	ति

प्रा.	**बेमि ।**	**तसन्ति**	**पाणा**	**पदिसो**	**दिसासु**	**य ।**
शु.	बेमि ।	तसन्ति	पाणा	पदिसो	दिसासु	य ।
आ.		तसंति	पाणा	पदिसो	दिसासु	य (५०)
जै.	बेमि ॥ १२३.	तसंति	पाणा	पदिसो	दिसासु	य ॥
म.	बेमि ।	तसंति	पाणा	पदिसो	दिसासु	य ॥

प्रा.		**तत्थ**	**तत्थ**	**पुढो**	**पास**	**आतुरा**	**परितावन्ति ।**	**सन्ति**
शु.		तत्थ	तत्थ	पुढो	पास	आउरा	परियावेन्ति ।	सन्ति
आ.		तत्थ	तत्थ	पुढो	पास	आतुरा	परितावंति,	संति
जै.	१२४.	तत्थ	-तत्थ	पुढो	पास,	आउरा	परितावेंति ॥ १२५.	संति
म.		तत्थ	तत्थ	पुढो	पास	आतुरा	परितावेंति ।	संति

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

प्रा. पाणा पुढो-सिता ५०. लज्जमाना पुढो पास ।
शु. पाणा पुढो-सिया । लज्जमाणा पुढो पास ।
आ. पाणा पुढो सिया (५१) लज्जमाणा पुढो पास
जै. पाणा पुढो सिया ॥ १२६. लज्जमाणा पुढो पास ॥
म. पाणा पुढो सिता । ५० लज्जमाणा पुढो पास ।

प्रा. 'अनगारा मो' त्ति एके पवदमाना, जमिणं
शु. "अणगारा मो" त्ति एगे पवयमाणा । जमिणं
आ. अणगारा मोत्ति एगे पवयमाणा जमिणं
जै. १२७. अणगारा मोत्ति एगे पवयमाणा ॥ १२८. जमिणं
म. 'अणगारा मो' त्ति एगे पवदमाणा, जमिणं

प्रा. विरूवरूवेहि सत्थेहि तसकायसमारम्भेण तसकायसत्थं समारम्भमाणे
शु. विरूवरूवेहिं सत्थेहिं तसकायसमारम्भेणं तसकायसत्थं समारम्भमाणे
आ. विरूवरूवेहिं सत्थेहिं तसकायसमारंभेण तसकायसत्थं समारभमाणा
जै. विरूवरूवेहिं सत्थेहिं तसकाय-समारंभेणं तसकाय-सत्थं समारंभमाणे
म. विरूवरूवेहिं सत्थेहिं तसकायसमारंभेणं तसकायसत्थं समारभमाणे

प्रा. अन्ने वऽनेकरूवे पाणे विहिंसति । ५१. तत्थ खलु
शु. अन्ने व'णेगरूवे पाणे विहिंसइ— तत्थ खलु
आ. अण्णे अणेगरूवे पाणे विहिंसति, तत्थ खलु
जै. अण्णे वणेगरूवे पाणे विहिंसति ॥ १२९. तत्थ खलु
म. अण्णे वऽणेगरूवे पाणे विहिंसति । ५१. तत्थ खलु

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

प्रा.	**भगवता**	**परिन्ना**	**पवेदिता—**		**इमस्स**	**चेव**	**जीवितस्स**
शु.	भगवया	परिन्ना	पवेइया		इमस्स	चे'व	जीवियस्स
आ.	भगवया	परिण्णा	पवेइया,		इमस्स	चेव	जीवियस्स,
जै.	भगवया	परिण्णा	पवेइया ॥	१३०.	इमस्स	चेव	जीवियस्स,
म.	भगवता	परिण्णा	पवेदिता—		इमस्स	चेव	जीवियस्स

प्रा.	**परिवन्दन-मानन- पूजनाए**	**जाति-मरण-मोयनाए**	**दुक्खपडिघातहेतुं-**
शु.	परिवन्दण-माणण-पूयणाए,	जाइ-मरण-मोयणाए	दुक्ख-पडिघाय-हेउं—
आ.	परिवंदणमाणणपूयणाए	जाईमरणमोयणाए	दुक्खपडिघायहेउं
जै.	परिवंदण-माणण-पूयणाए,	जाई-मरण-मोयणाए,	दुक्खपडिघायहेउं ॥
म.	परिवंदण-माणण-पूयणाए	जाती-मरण-मोयणाए	दुक्खपडिघायहेतुं

प्रा.		**से**	**सयमेव**	**तसकायसत्थं**	**समारम्भति,**	**अन्नेहि**	**वा**
शु.		से	सयमेव	तसकायसत्थं	समारम्भइ	अन्नेहिं	वा
आ.		से	सयमेव	तसकायसत्थं	समारभति	अण्णेहिं	वा
जै.	१३१.	से	सयमेव	तसकाय-सत्थं	समारंभति,	अण्णेहिं	वा
म.		से	सयमेव	तसकायसत्थं	समारभति,	अण्णेहिं	वा

प्रा.	**तसकायसत्थं**	**समारम्भावेति,**	**अन्ने**	**वा**	**तसकायसत्थं**
शु.	तसकायसत्थं	समारम्भावेइ	अन्ने	वा	तसकायसत्थं
आ.	तसकायसत्थं	समारंभावेइ	अण्णे	वा	तसकायसत्थं
जै.	तसकाय-सत्थं	समारंभावेइ,	अण्णे	वा	तसकाय-सत्थं
म.	तसकायसत्थं	समारभावेति,	अण्णे	वा	तसकायसत्थं

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

प्रा.	**समारम्भमाणे**	**समनुजानति ।**		**तं**	**से**	**अहिताए**	**तं**	**से**
शु.	समारभन्ते	समणुजाणइ;		तं	से	अहियाए,	तं	से
आ.	समारभमाणे	समणुजाणइ,		तं	से	अहियाए	तं	से
जै.	समारंभमाणे	समणुजाणइ ॥	१३२	तं	से	अहियाए,	तं	से
म.	समारभमाणे	समणुजाणति ।		तं	से	अहिताए,	तं	से

प्रा.	**अबोधीए ।**	**५२. से**	**त्तं**	**सम्बुज्झमाने**	**आदानीयं**	**समुट्ठाय**
शु.	अबोहीए ।	से	त्तं	संबुज्झमाणे	आयाणीयं,	समुट्ठाए—
आ.	अबोहीए,	से	तं	संबुज्झमाणे	आयाणीयं	समुट्ठाय
जै.	अबोहीए ॥	१३३. से	तं	संबुज्झमाणे,	आयाणीयं	समुट्ठाए ॥
म.	अबोधीए ।	५२. से	त्तं	संबुज्झमाणे	आयाणीयं	समुट्ठाए

प्रा.		**सोच्चा**	**भगवतो**	**अनगाराणं**	**वा**	**-**	**इधमेकेसिं**
शु.		सोच्चा	भगवओ	अणगाराणं	वा	अन्तिए	इहमेगेसिं
आ.		सोच्चा	भगवओ	अणगाराणं	-	अंतिए	इहमेगेसिं
जै.	१३४.	सोच्चा	भगवओ,	अणगाराणं	'वा	अंतिए'	इहमेगेसिं
म.		सोच्चा	भगवतो	अणगाराणं	-	-	इहमेगेसिं

प्रा.	**नातं**	**भवति-**	**एस**	**खलु**	**गन्थे,**	**एस**	**खलु**	**मोहे,**	**एस**
शु.	नायं	भवइ;	एस	खलु	गन्थे,	एस	खलु	मोहे,	एस
आ.	णायं	भवति-	एस	खलु	गंथे,	एस	खलु	मोहे	एस
जै.	णायं	भवइ-	एस	खलु	गंथे,	एस	खलु	मोहे,	एस
म.	णातं	भवति-	एस	खलु	गंथे,	एस	खलु	मोहे,	एस

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

प्रा.	**खलु**	**मारे,**	**एस**	**खलु**	**नरके**		**इच्चत्थं**	**गढिते**
शु.	खलु	मारे,	एस	खलु	नरए।		इच्चत्थं	गढिए
आ.	खलु	मारे	एस	खलु	णरए,		इच्चत्थं	गड्ढिए
जै.	खलु	मारे,	एस	खलु	णरए।	१३५.	इच्चत्थं	गढिए
म.	खलु	मारे,	एस	खलु	निरए।		इच्चत्थं	गढिए

प्रा.	**लोके।**		**जमिणं**	**विरूवरूवेहिं**	**सत्थेहि**
शु.	लोए।		जमिणं	विरूवरूवेहिं	सत्थेहिं
आ.	लोए		जमिणं	विरूवरूवेहिं	सत्थेहिं
जै.	लोए ॥	१३६.	जमिणं	विरूवरूवेहिं	सत्थेहिं
म.	लोए,		जमिणं	विरूवरूवेहिं	सत्थेहिं

प्रा.	**तसकायकम्मसमारम्भेण**	**तसकायसत्थं**	**समारम्भमाणे**	**अन्ने**
शु.	तसकायकम्मसमारम्भेणं	तसकायसत्थं	समारम्भमाणे	अन्ने
आ.	तसकायसमारंभेण	तसकायसत्थं	समारंभमाणे	अण्णे
जै.	तसकाय-समारंभेणं	तसकाय-सत्थं	समारंभमाणे	अण्णे
म.	तसकायकम्मसमारंभेणं	तसकायसत्थं	समारंभमाणे	अण्णे

प्रा.	**वऽनेकरूवे**	**पाणे**	**विहिंसति।**		**से**	**बेमि-**	-
शु.	व'णेगरूवे	पाणे	विहिंसइ-		से	बेमि-	-
आ.	अणेगरूवे	पाणे	विहिंसति (५२)		से	बेमि-	-
जै.	वणेगरूवे	पाणे	विहिंसति ॥	१३७.	से	बेमि-	अप्पेगे
म.	वऽणगरूवे	पाणे	विहिंसति।		से	बेमि-	-

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

प्रा.	-	-	-	-	-	-
शु.	-	-	-	-	-	-
आ.	-	-	-	-	-	-
जै.	अंधमब्भे,	अप्पेगे	अंधमच्छे ॥	१३८.	अप्पेगे	पायमब्भे,
म.	-	-	-	-	-	-

प्रा.	-	-	-		-	-	-	-
शु.	-	-	-		-	-	-	-
आ.	-	-	-		-	-	-	-
जै.	अप्पेगे	पायमच्छे.	॥	१३९.	अप्पेगे	संपमारए,	अप्पेगे	उद्दवए ॥
म	-	-	-	-	-	-	-	-

प्रा.		-	-	**अप्पेके**	**अच्चाए**	**वधेन्ति,**	**अप्पेके**	**अजिनाए**
शु.		-	-	अप्पेगे	अच्चाए	हणन्ति,	अप्पेगे	अजिणाए
आ.		-	-	अप्पेगे	अच्चाए	हणंति,	अप्पेगे	अजिणाए
जै.	१४०.	से	बेमि-	अप्पेगे	अच्चाए	वहंति,	अप्पेगे	अजिणाए
म.		-	-	अप्पेगे	अच्चाए	वधेंति,	अप्पेगे	अजिणाए

प्रा.	**वधेन्ति,**	**अप्पेके**	**मंसाए**	**वधेन्ति,**	**अप्पेके**	**सोणिताए**	**वधेन्ति**
शु.	वहन्ति,	अप्पेगे	मंसाए	वहन्ति,	अप्पेगे	सोणियाए	वहन्ति,
आ.	वहंति,	अप्पेगे	मंसाए	वहंति,	अप्पेगे	सोणियाए	वहंति,
जै.	वहंति,	अप्पेगे	मंसाए	वहंति,	अप्पेगे	सोणियाए	वहंति,
म.	वधेंति,	अप्पेगे	मंसाए	वहेंति,	अप्पेगे	सोणिताए	वधेंति,

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

प्रा.	**अप्पेके**	**—**	**हिदयाए**	**वधेन्ति,**	**-**	**एवं**	**पित्ताए**
शु.	अप्पेगे	एवं	हिययाए	-	-	-	पित्ताए
आ.	-	एवं	हिययाए	-	-	-	पित्ताए
जै.	अप्पेगे	-	हिययाए	वहंति,	अप्पेगे	-	पित्ताए
म.	अप्पेगे	-	हिययाए	वहिंति,	-	एवं	पित्ताए

प्रा.	**—**	**—**	**वसाए**	**—**	**—**	**पिच्छाए**	**—**	**—**
शु.	—	—	वसाए	—	—	पिच्छाए	—	—
आ.	—	—	वसाए	—	—	पिच्छाए	—	—
जै.	वहंति,	अप्पेगे	वसाए	वहंति,	अप्पेगे	पिच्छाए	वहंति,	अप्पेगे
म.	—	—	वसाए	—	—	पिच्छाए	—	—

प्रा.	**पुच्छाए**	**—**	**—**	**वालाए**	**—**	**—**	**सिङ्गाए**	**—**
शु.	पुच्छाए	—	—	वालाए	—	—	सिङ्गाए	—
आ.	पुच्छाए	—	—	वालाए	—	—	सिंगाए	—
जै.	पुच्छाए	वहंति,	अप्पेगे	बालाए	वहंति,	अप्पेगे	सिंगाए	वहंति,
म.	पुच्छाए	—	—	वालाए	—	—	सिंगाए	—

प्रा.	**—**	**विसाणाए**	**—**	**—**	**दन्ताए**	**—**	-
शु.	—	विसाणाए	—	—	दन्ताए	—	-
आ.	—	विसाणाए	—	—	दंताए	—	-
जै.	अप्पेगे	विसाणाए	वहंति,	अप्पेगे	दंताए	वहंति,	अप्पेगे
म.	—	विसाणाए	—	—	दंताए	—	-

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

प्रा.	**दाढाए**	**–**	**–**	**नहाए**	**–**	**–**	**ण्हारुणीए**
शु.	दाढाए	–	–	नहाए	–	–	ण्हारुणीए
आ.	दाढाए	–	–	णहाए	–	–	ण्हारुणीए
जै.	दाढाए	वहंति,	अप्पेगे	नहाए	वहंति,	अप्पेगे	ण्हारुणीए
म.	दाढाए	–	–	नहाए	–	–	ण्हारुणीए

प्रा.	**–**	**–**	**अट्ठीए**	**–**	**–**	**अट्ठिमिज्जाए**	-
शु.	–	–	अट्ठीए	–	–	अट्ठि–मिञ्जाए	-
आ.	–	–	अट्ठीए	–	–	अट्ठिमिंजाए	-
जै.	वहंति,	अप्पेगे	अट्ठीए	वहंति,	अप्पेगे,	अट्ठिमिंजाए	वहंति,
म.	–	–	अट्ठिए	–	–	अट्ठिमिंजाए	-

प्रा.	**–**	**अत्थाए**	**–**	**–**	**अनत्थाए ।**	**–**
शु.	–	अट्ठाए	–	–	अणट्ठाए;	–
आ.	–	अट्ठाए	–	–	अणट्ठाए,	–
जै.	अप्पेगे	अट्ठाए	वहंति,	अप्पेगे	अणट्ठाए	वहंति,
म.	–	अट्ठाए	–	–	अणट्ठाए,	–

प्रा.	**अप्पेके**	**हिंसिंसु**	**मे**	**त्ति**	**वा**	**वधेन्ति,**	**अप्पेके**
शु.	अप्पेगे	'हिंसिंसु	मे'	त्ति	वा	वहन्ति,	अप्पेगे
आ.	अप्पेगे	हिंसिसु	मेत्ति		वा	वहंति	अप्पेगे
जै.	अप्पेगे	'हिंसिंसु	मेत्ति		वा'	वहंति,	अप्पेगे
म.	अप्पेगे	हिंसिसु	मे	त्ति	वा,	–	अप्पेगे

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

प्रा.	**हिंसन्ति**	**मे**	**त्ति**	**वा**	**वधेन्ति,**	**अप्पेके**	**हिंसिस्सन्ति**
शु.	'हिंसन्ति	मे'	त्ति	वा	वहन्ति,	अप्पेगे	'हिंसिस्सन्ति
आ.	हिंसंति	मेत्ति		वा	वहंति	अप्पेगे	हिंसिस्संति
जै.	हिंसंति	मेत्ति		वा	वहंति,	अप्पेगे	हिंसिस्संति
म.	हिंसंति	—	—	वा	—	अप्पेगे	हिंसिस्संति

प्रा.	**मे**	**त्ति**	**वा**	**—**	**वधेन्ति ।**	**५३.**	**एत्थ**	**सत्थं**
शु.	मे'	त्ति	वा	—	वहन्ति ।		एत्थ	सत्थं
आ.	मेत्ति		वा	—	वहंति (५३)		एत्थ	सत्यं
जै.	मेत्ति		वा	—	वहंति ॥	१४१.	एत्थ	सत्थं
म.	—	—	वा	णे	वधेंति	५३.	एत्थ	सत्थं

प्रा.	**समारम्भमाणस्स**	**इच्चेते**	**आरम्भा**	**अपरिन्नाता**	**भवन्ति ।**
शु.	समारभमाणस्स	इच्चेए	आरम्भा	अपरिन्नाया	भवन्ति,
आ.	समारभमाणस्स	इच्चेते	आरंभा	अपरिण्णाया	भवंति,
जै.	समारंभमाणस्स	इच्चेते	आरंभा	अपरिण्णाया	भवंति ॥
म.	समारभमाणस्स	इच्चेते	आरंभा	अपरिणाया	भवंति ।

प्रा.	**एत्थ**	**सत्थं**	**असमारम्भमाणस्स**	**इच्चेते**	**आरम्भा**	**परिन्नाता**	**भवन्ति।**
शु.	एत्थ	सत्थं	असमारभमाणस्स	इच्चेए	आरम्भा	परिन्नाया	भवन्ति ।
आ.	एत्थ	सत्थं	असमारभमाणस्स	इच्चेते	आरंभा	परिण्णाया	भवन्ति,
जै.	१४२. एत्थ	सत्थं	असमारंभमाणस्स	इच्चेते	आरंभा	परिण्णाया	भवंति ॥
म.	एत्थ	सत्थं	असमारभमाणस्स	इच्चेते	आरंभा	परिण्णाया	भवंति ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

प्रा.	**५४.**	**तं**	**परिन्नाय**	**मेधावी**	**नेव**	**सयं**	**तसकायसत्थं**
शु.		तं	परिन्नाय	मेहावी	ने'व	सयं	तसकायसत्थं
आ.		तं	परिण्णाय	मेहावी	णेव	सयं	तसकायसत्थं
जै.	१४३.	तं	परिण्णाय	मेहावी	णेव	सयं	तसकाय–सत्थं
म.	५४.	तं	परिण्णाय	मेधावी	णेव	सयं	तसकायसत्थं

प्रा.	**समारम्भेज्जा,**	**नेवऽन्नेहि**	**तसकायसत्थं**	**समारम्भावेज्जा,**	**नेवऽन्ने**
शु.	समारभेज्जा	ने'व'न्नेहिं	तसकायसत्थं	समारम्भावेज्जा,	ने'व'न्ने
आ.	समारंभेज्जा	णेवऽण्णेहिं	तसकायसत्थं	समारंभावेज्जा	णेवऽण्णे
जै.	समारंभेज्जा,	णेवण्णेहिं	तसकाय–सत्थं	समारंभावेज्जा,	णेवण्णे
म.	समारभेज्जा,	णेवऽण्णेहिं	तसकायसत्थं	समारभावेज्जा,	णेवऽण्णे

प्रा.	**तसकायसत्थं**	**समारम्भन्ते**	**समनुजानेज्जा ।**	**५५.**	**जस्सेते**
शु.	तसकायसत्थं	समारभन्ते	समणुजाणेज्जा ।		जस्से'ए
आ.	तसकायसत्थं	समारंभंते	समणुजाणेज्जा,		जस्सेते
जै.	तसकाय–सत्थं	समारंभंते	समणुजाणेज्जा ॥	१४४.	जस्सेते
म.	तसकायसत्थं	समारभंते	समणुजाणेज्जा ।	५५.	जस्सेते

प्रा.	**तसकायसत्थसमारम्भा**	**परिन्नाता**	**भवन्ति**	**से**	**हु**	**मुनी**
शु.	तसकायसत्थसमारम्भा	परिन्नाया	भवन्ति	से	हु	मुणी
आ.	तसकायसमारंभा	परिण्णाया	भवंति	से	हु	मुणी
जै.	तसकाय–सत्थ-समारंभा	परिण्णाया	भवंति,	से	हु	मुणी
म.	तसकायसत्थसमारंभा	परिण्णाया	भवंति	से	हु	मुणी

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

प्रा.	**परिन्नातकम्मे**	**त्ति**	**बेमि ।**
शु.	परिन्नाय–कम्मे	त्ति	बेमि ।
आ.	परिण्णायकम्मे (५४)	त्तिबेमि ।	
जै.	परिण्णाय–कम्मे ।	–त्ति	बेमि ॥
म.	परिण्णातकम्मे	त्ति	बेमि ।

सत्तमे उद्देसगे

प्रा.	**५६.**	**पभू**	**–**	**एजस्स**	**दुगुञ्छनाए**		**आतङ्कदंसी**
शु.		पहू	य	एजस्स	दुगुञ्छणाए		आयंक–दंसी
आ.		पहू	–	एजस्स	दुगुंछणाए(५५)		आयंकदंसी
जै.	१४५.	'पहू	–	एजस्स'	दुगंछणाए ॥	१४६.	आयंकदंसी
म.	५६.	पभू	–	एजस्स	दुगुंछणाए		आतंकदंसी

प्रा.	**अहितं**	**ति**	**नच्चा ।**		**जे**	**अज्झत्थं**	**जानति**	**से**	**बहिया**
शु.	'अहियं'	ति	नच्चा ।		जे	अज्झत्थं	जाणइ,	से	बहिया
आ.	अहियंति		णच्चा,		जे	अज्झत्थं	जाणइ	से	बहिया
जै.	अहियं	ति	नच्चा ॥	१४७.	जे	अज्झत्थं	जाणइ,	से	बहिया
म.	अहियं	ति	णच्चा ।		जे	अज्झत्थं	जाणति	से	बहिया

प्रा.	**जानति,**	**जे**	**बहिया**	**जानति**	**से**	**अज्झत्थं**	**जानति ।**
शु.	जाणइ;	जे	बहिया	जाणइ,	से	अज्झत्थं	जाणइ;
आ.	जाणइ,	जे	बहिया	जाणइ	से	अज्झत्थं	जाणइ,
जै.	जाणइ ।	जे	बहिया	जाणइ,	से	अज्झत्थं	जाणइ ॥
म.	जाणति,	जे	बहिया	जाणति	से	अज्झत्थं	जाणति ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

प्रा.		**एतं तुलमन्नेसिं ।**		**इध**	**सन्तिगता**	**दविया**
शु.		एयं तुलं अन्नेसिं ।		इह	सन्ति–गया	दविया
आ.		एयं तुलमन्नेसिं (५६)		इह	संतिगया	दविया
जै.	१४८.	एयं तुलमण्णेसिं ॥	१४९.	इह	संतिगया	दविया,
म.		एतं तुलमण्णेसिं ।		इह	संतिगता	दविया

प्रा.	**नावकङ्खन्ति**	**वीजितुं ।**	**५७.**	**लज्जमाना**	**पुढो**	**पास ।**
शु.	नावकङ्खन्ति	जीविउं ।		लज्जमाणा	पुढो	पास ।
आ.	णावकंखंति	जीविउं (५७)		लज्जमाणे	पुढो	पास
जै.	णावकंखंति	वीजिउं ॥	१५०.	लज्जमाणा	पुढो	पास ॥
म.	णावकंखंनि	जीविउं ।	५७.	लज्जमाणा	पुढो	पास ।

प्रा.	**'अनागारा मो' त्ति**	**एके पवदमाना,**	**जमिणं**	**विरूवरूवेहि**
शु.	"अणगारा मो" त्ति	एगे पवयमाणा ।	जमिणं	विरूवरूवेहिं
आ.	अणगारा मोत्ति	एगे पवयमाणा	जमिणं	विरूवरूवेहिं
जै. १५१.	अणगारा मोत्ति	एगे पवयमाणा ॥	१५२. जमिणं	विरूवरूवेहिं
म.	'अणगारा मो' त्ति	एगे पवदमाणा,	जमिणं	विरूवरूवेहिं

प्रा.	**सत्थेहि**	**वाउकम्मसमारम्भेण**	**वाउसत्थं**	**समारम्भमाणे**	**अन्ने**
शु.	सत्थेहिं	वाउकम्मसमारम्भेणं	वाउसत्थं	समारम्भमाणे	अन्ने
आ.	सत्थेहिं	वाउकम्मसमारंभेणं	वाउसत्थं	समारंभमाणे	अण्णे
जै.	सत्थेहिं	वाउकम्म–समारंभेणं	वाउ–सत्थं	समारंभमाणे	अण्णे
म.	सत्थेहिं	वाउकम्मसमारंभेणं	वाउसत्थं	समारभमाणे	अण्णे

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

प्रा.	**वऽनेकरूवे**	**पाणे**	**विहिंसति ।**	**५८.**	**तत्थ**	**खलु**	**भगवता**
शु.	व'णेगरूवे	पाणे	विहिंसइ—		तत्थ	खलु	भगवया
आ.	अणेगरूवे	पाणे	विहिंसति ।		तत्थ	खलु	भगवया
जै.	वणेगरूवे	पाणे	विहिंसति ॥	१५३.	तत्थ	खलु	भगवया
म.	वऽणेगरूवे	पाणे	विहिंसति ।	५८.	तत्थ	खलु	भगवता

प्रा.	**परिन्ना**	**पवेदिता—**		**इमस्स**	**चेव**	**जीवितस्स**
शु.	परिन्ना	पवेइया		इमस्स	चे'व	जीवियस्स
आ.	परिण्णा	पवेइया ।		इमस्स	चेव	जीवियस्स
जै.	परिण्णा	पवेइया ॥	१५४.	इमस्स	चेव	जीवियस्स,
म.	परिण्णा	पवेदिता—		इमस्स	चेव	जीवियस्स

प्रा.	**परिवन्दन—मानन—पूजनाए**	**जाति—मरण—मोयनाए**	**दुक्खपडिघातहेतुं—**
शु.	परिवन्दण—माणण—पूयणाए,	जाइ—मरण—मोयणाए	दुक्ख—पडिघाय—हेउं—
आ.	परिवंदणमाणणपूयणाए	जाईमरणमोयणाए	दुक्खपडिघायहेउं
जै.	परिवंदण—माणण—पूयणाए ,	जाई—मरण—मोयणाए,	दुक्खपडिघायहेउं ॥
म.	परिवंदण—माणण—पूयणाए	जाती—मरण—मोयणाए	दुक्खपडिघातहेतुं

प्रा.	**से**	**सयमेव**	**वाउसत्थं**	**समारम्भति,**	**अन्नेहि**	**वा**	**वाउसत्थं**
शु.	से	सयमेव	वाउसत्थं	समारम्भइ	अन्नेहिं	वा	वाउसत्थं
आ.	से	सयमेव	वाउसत्थं	समारभति	अण्णेहिं	वा	वाउसत्थं
जै. १५५.	से	सयमेव	वाउ—सत्थं	समारंभति,	अण्णेहिं	वा	वाउ—सत्थं
म.	से	सयमेव	वाउसत्थं	समारभति,	अण्णेहिं	वा	वाउसत्थं

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

प्रा.	**समारम्भावेति,**	**अन्ने**	**वा**	**वाउसत्थं**	**समारम्भन्ते**
शु.	समारम्भावेइ	अन्ने	वा	वाउसत्थं	समारभन्ते
आ.	समारंभावेइ	अण्णे	—	वाउसत्थं	समारंभंते
जै.	समारंभावेति,	अण्णे	वा	वाउ—सत्थं	समारंभंते
म.	समारभावेति,	अण्णे	वा	वाउसत्थं	समारभंते

प्रा.	**समनुजानति ।**		**तं**	**से**	**अहिताए**	**तं**	**से**	**अबोधीए ।**
शु.	समणुजाणइ ;		तं	से	अहियाए	तं	से	अबोहीए ।
आ.	समणुजाणति,		तं	से	अहियाए	तं	से	अबोहीए,
जै.	समणुजाणइ ॥	१५६.	तं	से	अहियाए	तं	से	अबोहीए ॥
म.	समणुजाणति ।		तं	से	अहियाए,	तं	से	अबोधीए ।

प्रा.	**५९.**	**से**	**त्तं**	**सम्बुज्झमाने**	**आदानीयं**	**समुट्ठाय**	**सोच्चा**
शु.		से	त्तं	संबुज्झमाणे	आयाणीयं	समुट्ठाए—	सोच्चा
आ.		से	तं	संबुज्झमाणे	आयाणीयं	समुट्ठाए	सोच्चा
जै.	१५७.	से	तं	संबुज्झमाणे,	आयाणीयं	समट्ठाए ॥१५८.	सोच्चा
म.	५९.	से	त्तं	संबुज्झमाणे	आयाणीयं	समुट्ठाए	सोच्चा

प्रा.	**—**	**भगवतो**	**अनगाराणं**	**वा**	**—**	**इधमेकेसिं**	**नातं**
शु.	खलु	भगवओ	अणगाराणं	वा	अन्तिए	इहमेगेसिं	नायं
आ.	—	भगवओ	अणगाराणं	—	अंतिए	इहमेगेसिं	णायं
जै.	—	भगवओ,	अणगाराणं	वा	अंतिए	इहमेगेसिं	णायं
म.	—	भगवतो	अणगाराणं	—	—	इहमेगेसिं	णातं

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

प्रा.	**भवति—**	**एस**	**खलु**	**गन्थे,**	**एस**	**खलु**	**मोहे,**	**एस**	**खलु**	**मारे,**
शु.	भवइ :	एस	खलु	गन्थे,	एस	खलु	मोहे,	एस	खलु	मारे,
आ.	भवति—	एस	खलु	गंथे	एस	खलु	मोहे	एस	खलु	मारे
जै.	भवइ—	एस	खलु	गंथे,	एस	खलु	मोहे,	एस	खलु	मारे,
म.	भवति—	एस	खलु	गंथे,	एस	खलु	मोहे,	एस	खलु	मारे,

प्रा.	**एस**	**खलु**	**नरके ।**		**इच्चत्थं**	**गढिते**	**लोके ।**
शु.	एस	खलु	नरए ।		इच्चत्थं	गढिए	लोए ।
आ.	एस	खलु	णिरए,		इच्चत्थं	गड्ढिए	लोए
जै.	एस	खलु	णिरए ॥	१५९.	इच्चत्थं	गढिए	लोए ॥
म.	एस	खलु	णिरए ।		इच्चत्थं	गढिए	लोगे,

प्रा.		**जमिणं**	**विरूवरूवेहि**	**सत्थेहि**	**वाउकम्मसमारम्भेण**	**वाउसत्थं**
शु.		जमिणं	विरूवरूवेहिं	सत्थेहिं	वाउकम्मसमारम्भेणं	वाउसत्थं
आ.		जमिणं	विरूवरूवेहिं	सत्थेहिं	वाउकम्मसमारंभेणं	वाउसत्थं
जै.	१६०.	जमिणं	विरूवरूवेहिं	सत्थेहिं	वाउकम्म—समारंभेणं	वाउ—सत्थं
म.		जमिणं	विरूवरूवेहिं	सत्थेहिं	वाउकम्मसमारंभेणं	वाउसत्थं

प्रा.	**समारम्भमाणे**	**अन्ने**	**वऽनेकरूवे**	**पाणे**	**विहिंसति ।**		**—**
शु.	समारभमाणे	अन्ने	व'णेगरूवे	पाणे	विहिंसइ—		—
आ.	समारंभमाणे	अण्णे	अणेगरूवे	पाणे	विहिंसति (५८)		—
जै.	समारंभमाणे	अण्णे	वणेगरूवे	पाणे	विहिंसति ॥	१६१.	से
म.	समारभमाणे	अण्णे	वऽणेगरूवे	पाणे	विहिंसति ।		—

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

प्रा.	**–**	**–**	**–**	**–**	**–**		**–**
शु.	–	–	–	–	–		–
आ.	–	–	–	–	–		–
जै.	बेमि–	अप्पेगे	अंधमब्भे,	अप्पेगे	अंधमच्छे ।	१६२.	अप्पेगे
म.	–	–	–	–	–		–

प्रा.	**–**	**–**	**–**	**–**	**–**	**–**
शु.	–	–	–	–	–	–
आ.	–	–	–	–	–	–
जै.	पायमब्भे,	अप्पेगे	पायमच्छे ॥ १६३.	अप्पेगे	संपमारए,	अप्पेगे
म.	–	–	–	–	–	–

प्रा.	**–**	**६०.**	**से**	**बेमि–**	**सन्ति**	**सम्पातिमा**	**पाणा**	**आहच्च**
शु.	–		से	बेमि :	सन्ति	संपाइमा	पाणा,	आहच्च
आ.	–		से	बेमि	संति	संपाइमा	पाणा	आहच्च
जै.	उद्दवए ॥	१६४.	से	बेमि–	संति	संपाइमा	पाणा,	आहच्च
म.	–	६०.	से	बेमि–	संति	संपाइमा	पाणा	आहच्च

प्रा.	**सम्पतन्ति**	**य ।**	**फरिसं**	**च**	**खलु**	**पुट्ठा**	**एके**	**सङ्घातमावज्जन्ति ।**
शु.	सम्पयन्ति	य ।	फरिसं	च	खलु	पुट्ठा	एगे	संघायमावज्जन्ति;
आ.	संपयंति	य	फरिसं	च	खलु	पुट्ठा	एगे	संघायमावज्जंति,
जै.	संपयंति	य ॥	फरिसं	च	खलु	पुट्ठा,	एगे	संघायमावज्जंति ॥
म.	संपतंति	य ।	फरिसं	च	खलु	पुट्ठा	एगे	संघायमावज्जंति ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

प्रा.	**जे**	**तत्थ**	**सङ्घातमावज्जन्ति**	**ते**	**तत्थ**	**परियावज्जन्ति ।**	**जे**	**तत्थ**
शु.	जे	तत्थ	संघायमावज्जन्ति	ते	तत्थ	परियाविज्जन्ति ।	जे	तत्थ
आ.	जे	तत्थ	संघायमावज्जंति	ते	तत्थ	परियावज्जंति,	जे	तत्थ
जै.	जे	तत्थ	संघायमावज्जंति,	ते	तत्थ	परियावज्जंति,	जे	तत्थ
म.	जे	तत्थ	संघायमावज्जंति	ते	तत्थ	परियाविज्जंति ।	जे	तत्थ

प्रा.	**परियावज्जन्ति**	**ते**	**तत्थ**	**उद्दायन्ति ।**	**एत्थ**	**सत्थं**
शु.	परियाविज्जन्ति	ते	तत्थ	उद्दायन्ति ।	एत्थ	सत्थं
आ.	परियावज्जंति	ते	तत्थ	उद्दायंति,	एत्थ	सत्थं
जै.	परियावज्जंति,	ते	तत्थ	उद्दायंति ॥	१६५. एत्थ	सत्थं
म.	परियाविज्जंति	ते	तत्थ	उद्दायंति ।	एत्थ	सत्थं

प्रा.	**समारम्भमाणस्स**	**इच्चेते**	**आरम्भा**	**अपरिन्नाता**	**भवन्ति ।**
शु.	समारभमाणस्स	इच्चेए	आरम्भा	अपरिन्नाया	भवन्ति,
आ.	समारभमाणस्स	इच्चेते	आरंभा	अपरिण्णाया	भवंति,
जै.	समारंभमाणस्स	इच्चेते	आरंभा	अपरिण्णाया	भवंति ॥
म.	समारभमाणस्स	इच्चेते	आरंभा	अपरिण्णाता	भवंति ।

प्रा.	**एत्थ**	**सत्थं**	**असमारम्भमाणस्स**	**इच्चेते**	**आरम्भा**	**परिन्नाता**	**भवन्ति ।**
शु.	एत्थ	सत्थं	असमारभमाणस्स	इच्चेए	आरम्भा	परिन्नाया	भवन्ति ।
आ.	एत्थ	सत्थं	असमारभमाणस्स	इच्चेते	आरंभा	परिण्णाया	भवंति,
जै.	१६६. एत्थ	सत्थं	आसमारंभमाणस्स	इच्चेते	आरंभा	परिण्णाया	भवंति ॥
म.	एत्थ	सत्थं	असमारभमाणस्स	इच्चेते	आरंभा	परिण्णाता	भवंति ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

प्रा.	**६१.**	**तं**	**परिन्नाय मेधावी**	**नेव**	**सयं**	**वाउसत्थं**	**समारम्भेज्जा,**
शु.		तं	परिन्नाय मेहावी	ने'व	सयं	वाउसत्थं	समारभेज्जा
आ.		तं	परिण्णाय मेहावी	णेव	सयं	वाउसत्थं	समारंभेज्जा
जै.	१६७.	तं	परिण्णाय मेहावी	णेव	सयं	वाउ–सत्थं	समारंभेज्जा,
म.	६१.	तं	परिण्णाय मेहावी	णेव	सयं	वाउसत्थं	समारभेज्जा,

प्रा.	**नेवऽन्नेहि**	**वाउसत्थं**	**समारम्भावेज्जा**	**नेवऽन्ने**	**वाउसत्थं**
शु.	ने'व'न्नेहिं	वाउसत्थं	समारम्भावेज्जा	ने'व'न्ने	वाउसत्थं
आ.	णेवऽण्णेहिं	वाउसत्थं	समारंभावेज्जा	णेवऽण्णे	वाउसत्थं
जै.	णेवण्णेहिं	वाउ–सत्थं	समारंभावेज्जा,	णेवण्णे	वाउ–सत्थं
म.	णेवऽण्णेहिं	वाउ–सत्थं	समारभावेज्जा,	णेवऽण्णे	वाउसत्थं

प्रा.	**समारम्भन्ते**	**समनुजानेज्जा ।**	**जस्सेते**	**वाउसत्थसमारम्भा**
शु.	समारभन्ते	समणुजाणेज्जा ।	जस्से'ए	वाउसत्थसमारम्भा
आ.	समारंभंते	समणुजाणेज्जा,	जस्सेते	वाउसत्थसमारंभा
जै.	समारंभंते	समणुजाणेज्जा ॥ १६८.	जस्सेते	वाउ–सत्थ–समारंभा
म.	समारभंते	समणुजाणेज्जा ।	जस्सेते	वाउसत्थसमारंभा

प्रा.	**परिन्नाता**	**भवन्ति**	**से**	**हु**	**मुनी**	**परिन्नातकम्मे**
शु.	परिन्नाया	भवन्ति	से	हु	मुणी	परिन्नाय–कम्मे
आ.	परिण्णाया	भवंति	से	हु	मुणी	परिण्णायकम्मे(५९)
जै.	परिण्णाया	भवंति,	से	हु	मुणी	परिण्णाय–कम्मे
म.	परिण्णाया	भवंति	से	हु	मुणी	परिण्णायकम्मे

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

प्रा.	**त्ति**	**बेमि ।**	**६२.**	**एत्थं**	**पि**	**जान**	**उवादीयामाना**
शु.	त्ति	बेमि ।		एत्थं	पि	जाणे	उवाईयमाणा
आ.	त्ति	बेमि		एत्थंपि		जाणे	उवादीयमाणा,
जै.	त्तिबेमि ॥		१६९.	एत्थं	पि	जाणे	उवादीयमाणा ॥
म.	त्ति	बेमि ।	६२.	एत्थं	पि	जाण	उवादीयमाणा,

प्रा.		**जे**	**आयारे**	**न**	**रमन्ति ।**		**आरम्भमाणा**	**विनयं**	**वदन्ति ।**
शु.		ज	आयारे	न	रमन्ति,		आरम्भमाणा	विणयं	वयन्ति;
आ.		जे	आयारे	ण	रमंति,		आरंभमाणा	विणयं	वयंति,
जै.	१७०.	जे	आयारे	न	रमंति ॥	१७१.	आरंभमाणा	विणयं	वयंति ॥
म.		जे	आयारे	ण	रमंति		आरंभमाणा	विणयं	वयंति

प्रा.		**छन्दोवनीता**	**अज्झोववन्ना**		**आरम्भसत्ता**	**पकरेन्ति**
शु.		छन्दोवणीया	अज्झोववन्ना		आरम्भ-सत्ता	पकरेन्ति
आ.		छंदोवणीया	अज्झोववण्णा,		आरंभसत्ता	पकरंति
जै.	१७२.	छंदोवणीया	अज्झोववण्णा ॥	१७३.	'आरंभसत्ता	पकरेंति
म.		छंदोवणीया	अज्झोववण्णा		आरंभसत्ता	पकरेंति

प्रा.	**सङ्गं ।**		**से**	**वसुमं**	**सव्वसमन्नागतपन्नाणेन**	**अप्पाणेन**
शु.	संगं ।		से	वसुमं	सव्व—समन्नागय—पन्नाणेणं	अप्पाणेणं
आ.	संगं(६०)		से	वसुमं	सव्वसमण्णागयपण्णाणेणं	अप्पाणेणं
जै.	संगं' ॥	१७४.	से	वसुमं	सव्व—समन्नागय—पण्णाणेणं	अप्पाणेणं
म.	संगं ।		से	वसुमं	सव्वसमण्णागतपण्णाणेणं	अप्पाणेणं

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

प्रा.	**अकरणिज्जं पावं**	**कम्मं**		**–**	**नो**	**अन्नेसिं ।**
शु.	अकरणिज्जं पावं	कम्मन्तं		–	नो	अन्नेसिं ।
आ.	अकरणिज्जं पावं	कम्मं		–	णो	अण्णेसिं,
जै.	अकरणिज्जं पावं	कम्मं ॥	१७५.	तं	णो	अण्णेसिं ॥
म.	अकरणिज्जं पावं	कम्मं		–	णो	अण्णेसिं ।

प्रा.	**तं**	**परिन्नाय**	**मेधावी**	**नेव**	**सयं**	**छज्जीवनिकायसत्थं**
शु.	तं	परिन्नाय	मेहावी	ने'व	सयं	छज्जीवनिकायसत्थं
आ.	तं	परिण्णाय	मेहावी	णेव	सयं	छज्जीवनिकायसत्थं
जै.	१७६. तं	परिण्णाय	मेहावी	णेव	सयं	छज्जीव–णिकाय–सत्थं
म.	तं	परिण्णाय	मेहावी	णेव	सयं	छज्जीवणिकायसत्थं

प्रा.	**समारम्भेज्जा**	**नेवऽन्नेहि**	**छज्जीवनिकायसत्थं**	**समारम्भावेज्जा,**
शु.	समारभेज्जा	ने'वे'न्नेहिं	छज्जीवनिकाय–सत्थं	समारम्भावेज्जा
आ.	समारंभेज्जा	णेवऽण्णेहिं	छज्जीवनिकायसत्थं	समारंभावेज्जा
जै.	समारंभेज्जा,	णेवण्णेहिं	छज्जीव–णिकाय–सत्थं	समारंभावेज्जा,
म.	समारभेज्जा,	णेवऽण्णेहिं	छज्जीवणिकायसत्थं	समारभावेज्जा,

प्रा.	**नेवऽन्ने**	**छज्जीवनिकायसत्थं**	**समारम्भन्ते**	**समनुजानेज्जा ।**
शु.	ने'व'न्ने	छज्जीवनिकाय–सत्थं	समारभन्ते	समणुजाणेज्जा ।
आ.	णेवऽण्णे	छज्जीवनिकायसत्थं	समारंभंते	समणुजाणेज्जा,
जै.	णेवण्णे	छज्जीवणिकाय–सत्थं	समारंभंते	समणुजाणेज्जा ॥
म.	णेवऽण्णे	छज्जीवणिकायसत्थं	समारभंते	समणुजाणेज्जा ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

प्रा.	**जस्सेते**	**छज्जीवनिकायसत्थसमारम्भा**	**परिन्नाता**	**भवन्ति**	**से हु**
शु.	जस्सेए	छज्जीवननिकाय—सत्थ—समारम्भा	परिन्नाया	भवन्ति	से हु
आ.	जस्सेते	छज्जीवनिकायसत्थसमारंभा	परिण्णाया	भवंति	से हु
जै.	जस्सेते	छज्जीव—णिकाय—सत्थ—समारंभा	परिण्णाया	भवंति,	से हु
म.	जस्सेते	छज्जीवणिकायसत्थसमारंभा	परिण्णाया	भवंति	से हु

प्रा.	**मुनी**	**परिन्नातकम्मे**	**त्ति**	**बेमि ।**
शु.	मुणी	परिन्नाय—कम्मे	त्ति	बेमि ।
आ.	मुणी	परिण्णायकम्मे (६१)	त्तिबेमि ।	
जै.	मुणी	परिण्णाय—कम्मे ।	त्ति	बेमि ॥
म.	मुणी	परिण्णाय—कम्मे	त्ति	बेमि ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

Āyāraṃgasuttaṃ edited by Prof. H. Jacobi, 1882 A.D.

Though late but fortunate to get a copy of the Ācārāṅga, Part I edited by Prof. H. Jacobi[1] who edited it on the basis of a palm leaf MS. A of 1292 A.D. and a paper MS. B of 1442 A.D. He consulted a number of other MSS. (all of later date) but they did not differ much, therefore he did not think it advisabe to note down variants from them.[2] According to him MS. A at times retains original medial consonant whereas MS. B prefers a substitute. In his text medial consonant is retained provided both the MSS. agree and if one of them drops medial consonants then an italicised letter is used e.g. 'vadati' is printed if both give this reading and if one of them has 'vayai' then 'va*d*a*t*i' is printed. An italicised *h* indicates that one of the MSS preserves the original aspirate.

His text[3] of the first chapter is reproduced here in its original form. It reveals that Prof. W. Schubring did not follow him *verbatim* and he dropped the medial consonants in consonance with the rules of Prakrit grammars composed at a very late age, i.e. almost 1000 years after the composition of the earliest and oldest parts of the Amg. canonicat works.

Jacobi's text has its own merits for us as it preserves archaic readings which are in ensonance with those of this linguistically re-edited text and it authenticates the contention of Āgama Prabhākara Muni Śrī Puṇyavijayajī that in the Amg. Prakrit medial consonants were not dropped so often as it is done in the case of Mahārāṣṭrī Prakrit.[4]

The method of Prof. Jacobi is worth commenadable in the sense that he has done great service in preserving the archaic nature of Amg. at least by taking note of older forms wherever they were available in contrast to Prof. W.Schubring who avoided noting down such variants in the text of Ācārāṅga edited by him and that way one is at loss in discovering the real archaic nature of the language of ancient Jain canonical works.

---

1. Published by the Pali Text Society, London, 1882 A.D.
2. See Preface, page, No. 4 of his Āyārāṃgasuttaṃ.
3. The author of this book is very grateful to Prof. J.C. Wright, SOAS, London for his kind gesture to supply the Xerox of the text.
4. See pp. XVIII - XXV of this edition.

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

PAḌHAME SUYAKKHAṂDHE.

PAḌHAMAṂ AJJHAYAṆAṂ.

SATTHAPARINNÂ.

Suyaṃ me, âusaṃ! teṇa bhagavayâ evam akkhâyaṃ: iham egesiṃ no sannâ bhavati; ‖1‖ taṃ/ jahâ: puratthimâo vâ disâo âgao aham aṃsi, dâhiṇâo vâ disâo âgao aham aṃsi, paccatthimâo vâ disâo âgao aham aṃsi, uttarâo vâ disâo âgao aham aṃsi, uḍḍhâo vâ disâo âgao aham aṃsi, ahedisâo vâ âgao aham aṃsi, annatarîo vâ disâo vâ aṇudisâo vâ âgao aham aṃsi. evam egesiṃ[1] no nâtaṃ bhavati: ‖2‖ atthi me âyâ ovavâie, n' atthi me âyâ ovavâie,[2] ke aham[3] âsî, ke vâ io cue[4] pĕccâ bhavissâmi?[4] ‖3‖ se jaṃ puṇa jâṇĕjjâ saha-sammudiyâe[5] paravâgaraṇeṇaṃ annesiṃ[6] vâ aṃtie[6] sŏccâ, taṃ jahâ: puratthimâo vâ disâo âgao aham aṃsi *jâva*[8] annatarîo[6] vâ disâo vâ aṇudisâo vâ âgao aham aṃsi; evam egesiṃ[1] nâtaṃ bhavati: atthi me âyâ ovavâie, jo imâo disâo aṇudisâo aṇusaṃcarai, savvâo disâo, savvâo aṇudisâo,[9] so 'haṃ. ‖4‖ se âyâvâî loyâvâî[10] kammâvâî[11] kiriyâvâî: akarissaṃ[12] c' ahaṃ, kârâvissaṃ[13] c' ahaṃ karao yâvi samaṇunne bhavissâmi;[4] eyâvaṃti[14] savvâvaṃti[14] logaṃsi kammasamârambhâ parijâṇiyavvâ bhavaṃti. ‖5‖ aparinnâyakammô khalu ayaṃ purise, jo imâo disâo aṇudisâo vâ aṇusaṃcarai, savvâo disâo aṇudisâo saheti, aṇegarûvâo joṇîo saṃdhei, virûvarûve phâse ya paḍisaṃvei.[15] ‖6‖ tattha khalu bhagavatâ parinnâ[6] paveiyâ: imassa c' eva jîviyassa parivaṃdaṇamâṇaṇapûyaṇâe jâi-[16] maraṇamoyaṇâe dukkhaparighâyaheuṃ eyâvaṃti[14] savvâvaṃti[14] logaṃsi[10] kammasamârambhâ parijâṇiyavvâ bha-

[1] A ekesiṃ. [2] A from n' i. marg. [3] B ṃ. [4] A °o. [5] B sahasammaie. [6] A ṇṇ. [7] A om. [8] B evaṃ dâhiṇâo vâ puratthimâo vâ, etc. [9] B adds vâ. [10] A lok. [11] B kaṃma. [12] B °uṃ. [13] B °ravesuṃ. [14] B °î. [15] A °vetai. [16] A jâî.

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

vaṃti. jass' ete kammasamârambhâ parinnâyâ[6] bhavaṃti, se hu muṇî parinnâya[6]-kamme[17] tti[18] bemi. ‖7‖1‖

padhamo uddesao.

aṭṭe loe parijuṇṇe[1] dussaṃbohe avijâṇae, assiṃ loe pavvahie
29 tattha tattha puḍho pâsa[2] âturâ paritâvĕṃti. ‖1‖ saṃti pâṇâ
puḍho siyâ, lajjamâṇâ puḍho pâsa; aṇagârâ 'mŏ tti ege pavayamâṇâ, jam iṇaṃ virûvarûvehiṃ satthehiṃ puḍhavikammasamârambheṇaṃ[3] puḍhavisatthaṃ samârambhamâṇe[4] aṇegarûve pâṇe vihiṃsai. ‖2‖ tattha khalu bhagavayâ parinnâ[1] paveiyâ: imassa c' eva jîviyassa parivaṃdaṇamâṇaṇapûyaṇâe jâimaraṇamoyaṇâe[5] dukkhaparighâyaheuṃ se sayam eva puḍhavisatthaṃ samârambhati, annehiṃ[1] vâ samârambhâvei,
31 anne[6] vâ puḍhavisatthaṃ samârambhaṃte[7] samaṇujâṇai. ‖3‖
taṃ se ahiyâe, taṃ abohîe; se taṃ saṃbujjhamâṇe âyâṇîyaṃ samuṭṭhâe[8] soccâ[9] khalu[10] bhagavao aṇagârâṇaṃ (vâ aṃtie),[7] iham egesiṃ nâyaṃ[11] bhavati; esa khalu gaṃthe, esa khalu mohe, esa khalu mâre, esa khalu narae, icc atthaṃ gaḍhie loe, jam iṇaṃ virûvarûvehiṃ[12] satthehiṃ[12] puḍhavikammasamârambheṇaṃ puḍhavisatthaṃ samârambhamâṇe anne[1] aṇegarûve pâṇe vihiṃsai. se bemi. ‖4‖

app ege aṃdham[13] abbhe, app ege aṃdham[13] acche; app ege pâyam abbhe, app ege pâyam acche; app ege guppham[14]
33 abbhe, (app ege guppham acche);[15] app ege jaṃgham abbhe 2; app ege jâṇum abbhe 2; app ege ûrum abbhe 2; app ege kaḍim abbhe 2; app ege nâbhim[11] abbhe 2; app ege udaraṃ[16] abbhe 2; app[17] ege piṭṭhim abbhe 2; app ege pâsam abbhe 2; app ege uram abbhe 2; app ege hiyam abbhe 2; app ege thaṇam abbhe 2; app ege khaṃdham abbhe 2; app ege bâhum abbhe 2; app ege hattham abbhe 2; app ege aṃgulim abbhe 2; app ege naham[11] abbhe 2; app ege gîvam abbhe 2; app ege haṇum[18] abbhe 2; app ege huṭṭham[19] abbhe 2; app ege daṃtam abbhe 2; app ege jibbham abbhe 2; app ege tâlum abbhe 2; app ege galam

[17] B kammi. [18] A ti.

[1] A ṇṇ, B nn. [2] A pâso. [3] B ṃm. [4] A °bhe mâṇâ. [5] A jâî. [6] A °siṃ, cf. 1. [7] A om. [8] B âya. [9] B su°. [10] B om. [11] A n. [12] A °esu. [13] A andham. [14] A gupphagam. [15] B 2. [16] B uy°. [17] A after the following phrase. [18] B °uam. [19] A ha°.

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

abbhe 2; app ege gaṃḍam abbhe 2; app ege kaṇṇam[1] abbhe 2; app ege nâsam[11] abbhe 2; app ege acchim abbhe 2; app ege bhamuham[20] abbhe 2; app ege nilâḍam abbhe 2; app ege 34
sîsam abbhe 2; app ege saṃpamârae, app ege uddavae. ||5|| ĕttha sattham samâraṃbhamâṇassa icc ete samâraṃbhâ aparinnâyâ[1] bhavaṃti. ĕttha[21] sattham asamâraṃbhamâṇassa icc ete samâraṃbhâ parinnâyâ[1] bhavaṃti. taṃ parinnâya[1] mehâvî n[11] eva sayaṃ puḍhavisatthaṃ samâraṃbhĕjjâ, n[11] eva annehiṃ[1] puḍhavisatthaṃ samâraṃbhâvĕjjâ,[22] anne[1] puḍhavisatthaṃ samâraṃbhaṃte na samaṇujâṇĕjjâ. jass' ete puḍhavikammasamâraṃbhâ parinnâyâ[1] bhavaṃti, se hu muṇî parinnâyakamme[1] tti[23] bemi. ||6||2||

biio uddesao.

se bemi,[1] jahâ: aṇagâre ujjukaḍe niyâga[2]-paḍivanne[3] amâ- 36
yaṃ kuvvamâṇe viyâhie. ||1|| jâe saddhâe nikkhaṃto, tâm eva aṇupâlijjâ[4] viyahittu[5] visŏttiyaṃ [puvvasaṃjogaṃ[6] pâṭhântaraṃ] paṇayâ vîrâ mahâvîhiṃ logaṃ ca âṇâe ahisamĕcca[7] akutobhayam se bemi. ||2|| n[8] eva sayaṃ logaṃ abbhâikkhĕjjâ, n[8] eva attâṇaṃ abbhâikkhĕjjâ; je logaṃ[9] abbhâikkhai, se attâṇaṃ abbhâikkhai; jo attâṇaṃ abbhâikkhai, se logaṃ[9] abbhâikkhai. ||3|| lajjamâṇâ puḍho
pâsa, aṇagârâ 'mu tti ege[10] pavayamâṇâ, jam iṇaṃ virûvarû- 42
vehiṃ satthehiṃ udayakammasamâraṃbheṇa udayasatthaṃ samâraṃbhamâṇâ[11] anne[12] aṇegarûve pâṇe vihiṃsaṃti. ||4|| tattha khalu bhagavayâ parinnâ[12] paveiyâ: imassa c' eva jîviyassa parivaṃdaṇamâṇaṇapûyaṇâe jâimaraṇamoyaṇâe[13] dukkhaparighâyaheuṃ se sayam eva udayasatthaṃ samâraṃbhati, annehiṃ[12] vâ udayasatthaṃ samâraṃbhâveti, anne[12] vâ udayasatthaṃ samâraṃbhaṃte samaṇujâṇati. ||5||
taṃ se ahiyâe[13] se abohîe se taṃ saṃbujjhamâṇe etc. [*all* 43
down to: vihiṃsai. se bemi 2, 4: *substitute only* udaya *for* puḍhavi]. ||6|| saṃti pâṇâ udayanissiyâ jîvâ aṇege,[14] ihaṃ ca khalu bho aṇagârâṇaṃ udayaṃ jîvâ viyâhiyâ. satthaṃ

[20] B °him. [21] B itthaṃ. [22] A adds ṇeva. [23] A ti.

[1] B adds so. [2] A °ya; pâṭhântara nikâya = moksha (niyâga = yajña). [3] A pari, cf. 2.[1]. [4] A °liyâ. [5] B vijahittâ. [6] A °yo°. [7] B abhi°. [8] cf. 2.[11]. [9] A loy°. [10] A eke. [11] AB °ṇo. [12] cf. 2.[1]. [13] cf. 2.[5]. [13] B *om. all down to* virûva. [14] B °yâ.

46 c' ettha aṇuvîi pâsa puḍho[15] sattham paveiyaṃ.[16] aduvâ
adinnâdâṇaṃ.[12] kappai ṇo[17] kappai ṇo[17] pâuṃ aduvâ[18] vibhûsâe.
puḍho satthehiṃ viuṭṭaṃti. ĕttha vi tesiṃ no[8] nikaraṇâe.[8]
ĕttha satthaṃ samârambhamâṇassa icc ee ârambhâ aparinnâyâ[12] bhavaṃti. ĕttha satthaṃ asamârambhamâṇassa
icc ee ârambhâ parinnâyâ[12] bhavaṃti. ‖7‖ taṃ parinnâya[12]
mehâvî n[8] eva sayaṃ udayasatthaṃ samârambhĕjjâ, n[8] ev'
49 annehiṃ[12] udayasatthaṃ samârambhâvĕjjâ etc. [*all as in* **2**, 6
down to the end; substitute only udaya *for* puḍhavi]. ‖8‖**3**‖
taio uddesao.

se bemi: n' eva sayaṃ logaṃ[1] abbhâikkhĕjjâ, n' eva attâṇaṃ abbhâikkhĕjjâ: jo logaṃ[1] abbhâikkhai, se attâṇaṃ abbhâikkhai; je attâṇaṃ abbhâikkhai, se logaṃ abbhâikkhai.[2] ‖1‖
je dîhalogasatthassa kheyanne, se asatthassa kheyanne; je asatthassa kheyanne,[3] se dîhalogasatthassa kheyanne. ‖2‖
vîrehiṃ eyaṃ abhibhûya diṭṭhaṃ saṃjatehiṃ sayâ
55 jaehiṃ sayâ appamattehiṃ. je pamatte guṇaṭṭhî,[4] se daṃḍe
pavuccai. taṃ parinnâya[5] mehâvî: iyâṇiṃ no,[5] jam ahaṃ
puvvam akâsî pamâeṇaṃ. ‖3‖ lajjamâṇâ puḍho pâsa [*all as
in* **2**, 2–4 *down to* vihiṃsai ti bemi, *substitute only* agaṇi *for*
57 puḍhavi]. ‖4 and 5‖ saṃti pâṇâ puḍhavinissiyâ[5] taṇanissiyâ[5]
pattanissiyâ[5] kaṭṭhanissiyâ[5] gomayanissiyâ[5] kayavarânissiyâ,[5]
saṃti sampâtimâ pâṇâ âhacca saṃpayaṃti, agaṇiṃ ca khalu
puṭṭhâ ege saṃghâyam âvajjaṃti. je tattha saṃghâyam
âvajjaṃti, te tattha pariyâvajjaṃti;[6] je tattha pariyâvajjaṃti,[6]
te tattha uddâyanti.[7] ‖6‖ ĕttha satthaṃ[8] samârambhamâṇassa icc ee ârambhâ aparinnâyâ[8] bhavaṃti; ĕttha satthaṃ
asamârambhamâṇassa icc ee ârambhâ parinnâyâ bhavaṃti.
59 taṃ parinnâya mehâvî n' eva sayaṃ [*all as in* **2**, 6 *down to
the end.* agaṇi *for* puḍhavi]. ‖7‖**4**‖
cauttho uddesao.

tan[1] no karissâmi samuṭṭhâe[2] mattâ maimaṃ abhayaṃ

[15] pâṭhântaraṃ: puḍho 'pâsaṃ pavoditaṃ. [16] A °veti°. [17] A ṇe, B ṇo.
[18] B ahavâ.

[1] A loy°. [2] B adds ti. [3] cf. 2.[1]. [4] B°ṭṭhie. [5] cf. 2.[11]. [6] A °vi°. [7] B °ṃti.
C ḍḍ. [8] A om.

[1] B taṃ. [2] B °âya.

vi*d*ittâ. taṃ je no karae, eso 'varae; ĕttho[3] 'varae, esa aṇagâre tti pavucca*t*i. ||1|| je guṇe, se âvaṭṭe; je âvaṭṭe, se guṇe. uḍḍhaṃ adhaṃ tiriyaṃ pâîṇaṃ pâsamâṇe rûvâiṃ pâsa*t*i, suṇamâṇe saddâiṃ suṇeti.[4] ||2|| uḍḍhaṃ adhaṃ tiri- 68
yaṃ pâîṇaṃ mucchamâṇe rûvesu muccha*t*i saddesu yâvi.[5] esa loe[6] viyâhie, ĕttha agutte aṇâṇâe puṇo puṇo guṇâsâe vaṃkasamâyâre matte agâram[7] âvase. ||3||

lajjamâṇâ puḍho pâsa aṇagârâ 'mŏ tti ege pavayamâṇâ, jam iṇaṃ virûvarûvehiṃ satthehiṃ vaṇassaikammasamâraṃbheṇaṃ vaṇassaisatthaṃ samâraṃbhamâṇe aṇṇe[8] aṇega[9]-pâṇe vihiṃsa*t*i. ||4|| tattha khalu ete. (*all as in* **2**, 3, 4 70
down to vihiṃsa*t*i se bemi. vaṇassai *for* puḍhavi). ||5||

imaṃ pi jâidhammayaṃ,[10] eyaṃ pi jâidhammayaṃ;[10] imaṃ pi vuḍḍhidhammayaṃ, eyaṃ pi vuḍḍhidhammayaṃ; imaṃ pi cittamaṃtayaṃ, eyaṃ pi cittamaṃtayaṃ; imaṃ pi chinnaṃ milâi, eyaṃ pi chinnaṃ milâi; imaṃ pi âhâragaṃ, eyaṃ pi âhâragaṃ; imaṃ pi aṇiccayaṃ, (eyaṃ pi aṇiccayaṃ; imaṃ pi asâsayaṃ),[11] eyaṃ pi asâsayaṃ; imaṃ pi cayâvacaiyaṃ, eyaṃ pi cayâvacaiyaṃ; imaṃ pi vipariṇâmadhammayaṃ, eyaṃ pi vipariṇâmadhammayaṃ. ||6||

ĕttha satthaṃ samâraṃbhamâṇassa etc. [*all as in* **2**, 6 73
down to the end. vaṇassai *for* puḍhavi]. ||7||**5**||

pamcamo uddesao.

se bemi. saṃt' ime tasâ pâṇâ; taṃ jahâ: aṃḍayâ, poyayâ, jarâuyâ, rasayâ, saṃseyayâ, sammucchimâ,[1] ubbhiyâ, ovavâiyâ. 78
esa saṃsâre tti pavucca*t*i ||1|| maṃdassa[2] aviyâṇao. ṇijjhâittâ paḍilehittâ patteyaṃ parinivvâṇaṃ savvesiṃ pâṇâṇaṃ, savvesiṃ bhûyâṇaṃ, savvesiṃ jîvâṇaṃ, savvesiṃ sattâṇaṃ, asâyaṃ[3] aparinivvâṇaṃ[4] mahabbhayaṃ dukkhaṃ ti bemi tasaṃti pâṇâ padiso disâsu ya. tattha tattha puḍho pâsa âurâ pariyâvemti.[5] ||2|| saṃti pâṇâ puḍho siyâ, lajjamâṇâ puḍho pâsa aṇagârâ mŏ tti ege pavayamâṇâ, jam iṇaṃ virûvarûvehiṃ satthehiṃ tasakâyasamâraṃbheṇaṃ tasakâya- 81
satthaṃ samâraṃbhamâṇe aṇṇe aṇegarûve pâṇe vihiṃsa*t*i. ||3||

[3] B itth. [4] B °ai. [5] AB âvi. [6] B loge. [7] gâram. [8] cf. 2.[1]. [9] A vaṇ° or caṇ. [10] B ṃm. [11] A om (—).

[1] B °iyâ. [2] B maṃdassâvi°. [3] A ass. [4] A °ṇevv. [5] B aṃti.

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

[*all as in* **2**, 3, 4 *down to* vihiṃsati. se bemi. tasakâya *for* puḍhavi]. ||4||

app ege accâe haṇaṃti, app ege ajiṇâe vahaṃti, app[6] ege[6] maṃsâe vahaṃti, app[6] ege[6] soṇiyâe vahaṃti,[7] evaṃ hidayâe[8] pittâe vasâe picchâe pucchâe vâlâe siṃgâe visâṇâe daṃtâe dâḍhâe nahâe ṇhâruṇîe aṭṭhîe[9] aṭṭhimiṃjâe[10] aṭṭhâe[11]
82 aṇaṭṭhâe. app ege hiṃsiṃsu me tti vâ, app ege hiṃsaṃti me[7] tti vâ, app ege hiṃsissaṃti me[7] tti vâ vahaṃti. ||5||

ĕttha satthaṃ samârambhamâṇassa icc *ete* ârambhâ etc. [*all as in* **2**, 6 *down to the end*, tasakâya *for* puḍhavi]. ||6||**6**||

chaṭṭho uddesao.

83 pahû ejassa[1] duguṃchaṇâe[2] âyaṃkadaṃsî[3] ahiyaṃ ti naccâ. je ajjhatthaṃ jâṇai, se bahiyâ jâṇai; je bahiyâ jâṇai, se ajjhatthaṃ jâṇai. *etaṃ* tulam annesiṃ. saṃtigayâ daviyâ nâ[4] 'vakaṃkhaṃti jîvituṃ. ||1|| lajjamâṇâ puḍho pâsa aṇagârâ mŏ tti ege pavayamâṇâ, jam iṇaṃ virûvarûvehiṃ satthehiṃ vâukammasamârambheṇa vâusatthaṃ samârambhamâṇâ anne aṇegarûve[5] pâṇe vihiṃsaṃti ||2|| etc. [*all as in*
88 **2**, 3, 4 *down to* vihiṃsati. se bemi. vâukâya *for* puḍhavi]. ||3||

saṃti saṃpâimâ pâṇâ âhacca saṃpayaṃti ya pharisaṃ[6] ca khalu puṭṭhâ ege saṃghâyam âvajjaṃti; je tattha saṃghâyam âvajjaṃti, te tattha pariyâvajjaṃti;[7] je tattha pariyâvajjaṃti,[8] te tattha uddâyaṃti. ||4||

ĕttha[9] satthaṃ samârambhamâṇassa icc *ete* ârambhâ etc.
89 [*all as in* **2**, 6 *down to the end*. vâukâya *for* puḍhavi.] ||5||

itthaṃ[10] pi jâṇa uvâdîyamâṇâ, je âyâre na[4] ramaṃti; ârambhamâṇâ viṇayaṃ vayaṃti chaṃdovaṇîyâ[12] ajjhovavannâ[13] ârambhasattâ pakaremti saṃgaṃ. se vasumaṃ savvasamannâgayapannâṇeṇaṃ[13] appâṇeṇaṃ karaṇijjaṃ
91 pâvaṃ kammaṃ tan[14] no annesiṃ. ||6|| taṃ parinnâya[13] mehâvî n' eva sayaṃ chajjîvanikâyasatthaṃ samârambhejjâ etc. [*all as in* **2**, 6 *down to the end*. chajjîvanikâya *for* puḍhavi]. ||7||**7**||

sattamo uddesao.

paḍhamam ajjhayaṇaṃ.

satthaparinnâ samattâ.

[6] B ovaṃ. [7] B om. [8] B hiyâo. [9] B °io. [10] A aṭṭhamiṃjjhâo. [11] A om.
[1] pûṭhântaram: pahuya egassa. [2] A °gaṃ°. [3] B dîsaṃ. [4] A ṇ, B n.
[5] A v'aṇ. [6] A par°. [7] A corr °vijj°. [8] B °vijj°. [9] B ittha. [10] A e°. [11] A °e.
[12] A viṇîyâ. [13] cf. **2**.[1]. [14] B om.

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

APPENDIX

परिशिष्ट

भाषिक दृष्टि से आचारांग के
पुनः सम्पादन
और
मूल अर्धमागधी भाषा की परिस्थापना
के विषय में
अभिप्राय और समीक्षा से उद्धृत अंश

Excerpts from the Reviews and Opinions on the Linguistically Re-editing of the Ācārāṅga-sūtra and Restoration of the Original Ardhamāgadhī Language

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

अनुक्रमणिका
CONTENTS

- आचाराङ्ग : प्रथम अध्ययन (भाषिक दृष्टि से पुनः सम्पादित) 279
- प्राचीन अर्धमागधी की खोज में, १९९२ 283
- Restoration of the Original Language of Ardhamāgadhī Texts, 1994 300
- परंपरागत प्राकृत व्याकरण की समीक्षा और अर्धमागधी, १९९५ 314
- विविध (Miscellaneous) 320

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

आचाराङ्ग

प्रथम श्रुत-सकन्ध : प्रथम अध्ययन

(भाषिक दृष्टि से पुनः सम्पादित)

Ācārāṅga, Chapter I

I have carefully perused your data (a fascicule of the **first uddesaga of Sattha-Parinnā-Ācārāṇga)** given in the notes and the constituent-text. **You have taken tremendous trouble in porting over every letter of the text.** I hope your effort will inspire other scholars to come together **for forming an institute for preparing a Critical Edititon of the Amg. Canon.**

Sangli, 15-5-93. **-Prof. G. V. Tagare**

The restoration of the original Ardhamāgadhī of the *Ācārāṅga* 1.1 attempted by Prof. K. R. Chandra is a memorable effort in the direction of the reconstruction of that language and should be extended to the entire portion of the book I as well as to other ancient *āgamas* of the Ardhamāgadhī canon. What we now expect from him is to enunciate the concrete rules for the formulation of the Ardhamāgadhī language and work out its standard grammatical system. That will greatly help others also to carry out further work on the phase II *āgamas*. **Dr. Chandra deserves the compliments of the philologists, linguists, and the students of early Nirgrantha religion.** The next problem to tackle with is the origin of the Ardhamāgadhī language recently claimed from the Śaurasenī used in the Yāpanīya and lately in the Digambara surrogate *āgama* works.

Varanasi **–Prof. M. A. Dhaky**

7-2-97

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

आगमों की अर्धमागधी भाषा का मूल स्वरूप निर्धारण करने के लिए आप जो प्रयत्न कर रहे हैं, वह बहुत उपयोगी है । **आगम की भाषा श्रुतधर मुनियों और आचार्यों के विहार-स्थल-परिवर्तन के साथ-साथ परिवर्तित होती रही है । इसलिए अर्धमागधी के प्राचीनतम** स्वरूप को खोज़ना **बहुत श्रम-साध्य कार्य है ।** प्राकृत व्याकरणों में अर्धमागधी के नियम बहुत स्वल्प हैं इलिए अर्धमागधी के **स्वरूप का निर्धारण बहुत जटिल काम है** फिर भी प्राचीन प्रति के आधार पर जो कुछ किया जा रहा है, उसका अपना महत्त्व है।

पाठ-निर्धारण के विषय में अन्य आगमों के संदर्भों पर ध्यान देना भी आवश्यक है ।

लाडनूँ **—आचार्य श्री महाप्रज्ञजी**

५-१२-९६

जैन अंग-आगम साहित्य भगवान् महावीर के उपदेशों के आधार पर अनेक साक्षात् शिष्यों अर्थात् गणधरों के द्वारा निर्मित हुआ और श्रुत-परम्परा से उनके शिष्य-प्रशिष्यों के द्वारा संरक्षित होता रहा, किन्तु स्मृति पर आधारित होने के कारण उसके भाषायी स्वरूप में कुछ परिवर्तन भी आया और कुछ स्खलनाएँ भी हुईं । कालान्तर में उन्हें संरक्षित करने हेतु जो वाचनाएँ हुईं, उनमें उन पर क्षेत्रीय प्राकृतों का प्रभाव आता गया । नवीं शती तक आगमों का जो पुनर्लेखन होता रहा उसमें मूल अर्धमागधी का काफी अंश बचा रहा किंतु क्रमशः लिपिकारों की असावधानी एवं क्षेत्रीय भाषा के प्रभाव से उनमें महाराष्ट्री प्राकृत के शब्दरूपों का बाहुल्य हो गया । आज जो अर्धमागधी आगम उपलब्ध हैं उनके शब्दरूप महाराष्ट्री प्राकृत से प्रभावित है । यद्यपि उनकी प्राचीन प्रतियों में आज भी अनेक मूल अर्धमागधी स्वरूप की झलक मिल जाती है । आज आगमों के प्रकाशित संस्करणों की तो यह स्थिति है कि उनमें एक ही पैराग्राफ में एक ही शब्द कहीं अपने अर्धमागधी स्वरूप में है तो कहीं महाराष्ट्री प्राकृत में । अतः आज यह आवश्यकता है कि आगमों के प्राचीन अर्धमागधी स्वरूप को उपलब्ध प्राचीन शब्द-रूपों के आधार पर पुनः

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

संरक्षित किया जाय, **तांकि आगमों में भगवान् महावीर की वाणी के मूल शब्दों को हम यथावत् सुरक्षित रख सकें । आगमों की भाषा के अर्धमागधी स्वरूप के संरक्षण के लिए प्रो.के.आर.चन्द्रा विगत ८-१० वर्षों से संशोधन कर रहे हैं ।** उन्होंने चूर्णिगत पाठों, प्राचीन हस्तप्रतों और उपलब्ध प्रकाशित संस्करणों के तुलनात्मक अध्ययन के आधार पर **आचारांगसूत्र, प्रथम श्रुतस्कंध, प्रथम अध्ययन** की मूल भाषा का पुनःस्थापन किया है । उनका यह प्रयत्न स्तुत्य है। यह एक सुनिश्चित लक्ष्य है कि आचारांग आज भी भगवान् महावीर के मूल वचनों को हमारे सामने प्रस्तुत करता है । पाश्चात्य विद्वान एकमत से यह मान रहे हैं **कि यह ग्रंथ अपने वर्तमान स्वरूप में ई.स.पूर्व ३-४ शताब्दी की रचना है और इसकी रचना अर्धमागधी भाषा-क्षेत्र में हुई है ।** अतः इसकी भाषा में परवर्तीकाल में जो विकृतियाँ आ गई हैं उनका संशोधन आवश्यक है । हम **प्रो. के. आर. चन्द्रा के अत्यन्त आभारी हैं कि उन्होंने इसके प्राचीन अर्धमागधी स्वरूप को पुनःस्थापित किया हैं । उनका यह प्रयत्न पूर्णतया प्रामाणिक है और आगम साहित्य के सम्पादन की दिशा में नये आयाम उद्घाटित करता है ।** विद्वानों के लिए यह न केवल प्रेरणास्वरूप है अपितु अनुमोदनीय और अनुकरणीय भी है । उन्होंने शब्द-रूपों के जो सांख्यकीय आँकडे प्रस्तुत किये हैं और विभिन्न संस्करणों के आधार पर जो तुलनात्मक विवरण दिया है **वह उनके कार्य की प्रामाणिकता का सबसे बड़ा प्रमाण है ।**

आशा है कि ऐसे प्रयत्न निरन्तर होते रहेंगे और हमारे युवा-विद्वान इस दिशा में रुचि लेंगे ।

वाराणसी **—डो.सागरमल जैन**
१-२-९७

તમે ઘણો પરિશ્રમ કરો છો, ઘણી ગવેષણા કરો છો. આ મારો અભિપ્રાય છે.

માંડલ (વિરમગામ), ગુજરાત **—જંબૂવિજય**
૧૦-૧-૯૭ (જૈન આગમોના સંપાદક વિદ્વદ્વર્ય મુનિશ્રી)

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

ભગવાન મહાવીરના ઉપદેશની ભાષા અર્ધમાગધી હતી એ હકીકત ભગવતીસૂત્ર જેવા આગમ ગ્રંથોના આંતરિક ઉલ્લેખો અને આચારાંગ, સૂત્રકૃતાંગ (બન્નેનાં પ્રથમ શ્રુત-સ્કંધ), ઋષિભાષિત આદિ પ્રાચીન ગ્રંથોની ભાષાના અધ્યયન દ્વારા નિર્વિવાદ સિદ્ધ થાય છે. પરંતુ જ્યારે ઉપલબ્ધ આગમ ગ્રંથો (પ્રકાશિત અને હસ્તપ્રતસ્થ)માં નજર નાખીએ છીએ તો તેમાં ભાષાનું **સ્વરૂપ એટલું બધું બદલાયેલું નજરે પડે છે કે આગમોના અભ્યાસી વિદેશી વિદ્વાનોએ આ ભાષાનું નામ જ જૈન મહારાષ્ટ્રી આપી દીધું !**

આગમોનું અર્ધમાગધી કલેવર આખું બદલાઈને મહારાષ્ટ્રીમય બની ગયું હતું. આમ કેમ બન્યું ? તેનાં અનેક ઐતિહાસિક-સાંસ્કૃતિક કારણો છે.

આ પ્રશ્ન ડૉ. કે. આર. ચન્દ્રને થયો તે દિવસથી તેઓ પ્રાચીન અર્ધમાગધીની ખોજમાં લાગી ગયા. દાયકા ઉપરાંતની તેમની આગમ-ગ્રંથોમાં અર્ધમાઘધીને શોધવાની પરિભ્રમણ-યાત્રાનો હું સાક્ષી છું. પ્રાચીન હસ્તપ્રતો, પ્રકાશિત આગમો, આગમિક ટીકાઓ, સમકાલીન શિલાલેખો, વ્યાકરણો અને અન્ય સાધનોના ખંતપૂર્વકના અધ્યયનના અંતે અને હજારો શબ્દોના ધ્વનિ-પરિવર્તનોવાળા પાઠોની કાળજીપૂર્વકની નોંધો અને ચકાસણી પછી તેમને **આગમોમાં જ છુપાઈ રહેલા અર્ધમાગધીના અંશોની ઝાંખી થઈ, આ પ્રયત્નનું અંતિમ ફળ છે પ્રસ્તુત ગ્રંથ.** આમાં તેમણે ભાષામાંના ધ્વનિ-પરિવર્તનને મુખ્યત્વે કેન્દ્રમાં રાખી આચારાંગ, પ્રથમ શ્રુતસ્કંધના પ્રથમ અધ્યયનનું નવસંસ્કરણ કર્યું છે.

પ્રાચીન આગમિક અર્ધમાગધીની ઈમારતનો નકશો તેમણે જાણે કે બનાવી લીધો છે. વિદ્વાનો પાસે મંજૂર પણ કરાવી લીધો છે. તેમાંથી એક ઓરડી અહીં નમૂના રૂપે તેમણે ચણી આપી છે.

— ડૉ. રમણીક શાહ

અમદાવાદ
૨-૪-૯૭

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

१. प्राचीन अर्धमागधी की खोज में, 1992

(1. PRĀCĪNA ARDHAMĀGADHĪ KĪ KHOJA MEÑ)

एक विशिष्ट प्रयत्न

कई विद्वानों ने जैनागम-आचारांग का समय ई. स. पूर्व ३०० के आसपास रखा है किन्तु अब तक किसी विद्वान ने उस समय में लिखे गये अशोक के शिलालेखों की भाषा के साथ आचारांग की भाषा की तुलना नहीं की। किसी को यह विचार भी नहीं आया कि जब दोनों का लगभग एक ही समय था तब भाषा में इतना अन्तर क्यों ? दूसरी बात यह है कि भ. महावीर और भ. बुद्ध दोनों ने अपने उपदेश बिहार में दिये हैं तो उस प्रदेश की भाषा में ही दिये होंगे तब फिर जैनागम और पालि पिटक की भाषा में भी समानता क्यों नहीं ?

इन्हीं प्रश्नों को लेकर डो. के. ऋषभचन्द्र ने सर्व प्रथम अशोक के लेख, पालि पिटक और जैनागम-आचारांग की भाषा का अभ्यास करने का प्रयत्न किया है। मै साक्षी हूँ कि इसके लिए उन्होंने अपने अभ्यास की सामग्री लगभग ७५ हजार कार्डों में एकत्र की है। आचारांग के साथ साथ सूत्रकृतांग, ऋषिभाषित, उत्तराध्ययन, दशवैकालिक, सुत्तनिपात और अशोक के शिलालेखों के शब्दों के संस्कृत रूपान्तर के साथ कार्ड तैयार करवाये हैं। **इसी सामग्री का प्रस्तुत ग्रन्थ "प्राचीन अर्धमागधी की खोज में" में उपयोग किया गया है।** उन्होंने इस समस्या के समाधान के लिए जो लेख लिखे उन्हीं का संग्रह प्रस्तुत ग्रंथ में है।

प्रस्तुत ग्रन्थ एक छोटी सी पुस्तिका ही है परन्तु उसके पीछे डो. चन्द्र का कई वर्षों का प्रयत्न है-यह हमें भूलना नहीं चाहिए। जैनागमों के संशोधन की प्रक्रिया शताधिक वर्षों से चल रही है किन्तु उस प्रक्रिया को एक नयो दिशा यह पुस्तिका दे रही है यह यहाँ ध्यान देने की बात है और इसके लिए विद्वज्जगत् डो. चन्द्र का आभारी रहेगा इसमें कोई संशय नहीं है।

विशेष रूप से भगवान् महावीर ने जिस भाषा में उपदेश दिया वह अर्धमागधी मानी जाती है तो उसका भूल स्वरूप क्या हो सकता है यह डो. चन्द्र के संशोधन का विषय है। इसीलिए उन्होंने प्रकाशित जैन आगमों के पाठों की परंपरा का परीक्षण किया है और दिखाने का प्रयत्न किया है कि भाषा के नूल

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

स्वरूप को बिना जाने ही जो प्रकाशन हुआ है या किया गया है अन्यथा एक ही पेरा में एक ही शब्द के जो विविध रूप मिलते हैं वह संभव नहीं था। उन्होंने प्रयत्न किया है कि प्राचीन अर्धमागधी का क्या और कैसा स्वरूप हो सकता है उसे प्रस्थापित किया जाय। आचार्य हेमचन्द्र के प्राकृत व्याकरण का भी नयी दृष्टि से किया गया अध्ययन प्रस्तुत ग्रन्थ में मिलेगा।

'क्षेत्रज्ञ' शब्द के उदाहरण के तौर पर विविध प्राकृत रूपों को लेकर तथा आचारांग के उपोद्घातरूप प्रथम वाक्य को लेकर जो चर्चा भाषा की दृष्टि से की गयी है वह यह दिखाने के लिए है कि जो अभी तक मुद्रण हुआ है वह भाषा विज्ञान की दृष्टि से कितना अधूरा है।

डो. चन्द्र का यह सर्व प्रथम प्रयत्न प्रशंसा के योग्य है। इतना ही नहीं किन्तु जैनागम के संपादन की प्रक्रिया को नयी दिशा का बोध देने वाला भी है और जो आगम-संपादन में रस ले रहे हैं वे सभी डो. चन्द्र के आभारी रहेंगे।

अहमदाबाद
११-१२-१९९१ —पं. दलसुख मालवणिया

In Search of the Original Ardhamāgadhī

The collection of Prof. K. R. Chandra's studies "प्राचीन अर्धमागधी की खोज में" aims at ascertaining the linguistic characteristics of the original language of the Śvetāmbara Jain canonical texts or what is usually referred to as the Ardhamāgadhī canon. Chandra points out, through a detailed comparison of the canonical texts as edited by various modern scholars, the disagreement and diversity of the criteria of selecting the various readings. He has made quite obvious the consequent linguistic heterogeneity that creates problems for making out the real character of the language of the Ardhamāgadhī canon. Secondly, he has sought to point out with the help of the Eastern Aśokan and Pali language that inspite of the considerably changed character (under the impact of the standard Mahārāṣṭrī Prakrit) of the language of the canonical texts during the long period of transmission certain old readings have been preserved that reveal some of the phonological, morphological and lexical traits of the

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

original Ardhamāgadhī, and hence in setting up the text they should be preferred over other modernized readings. In support of his contention Chandra has presented some typical case-studies. He has also examined the treatment accorded to Ardhamāgadhī by Hemacandra in the Prakrit section of the latter's grammar. Thus these studies put forth a strong and convincing plea for restoring the original character of the language of the Ardhamāgadhī canonical texts (some sections and portions of which probably go back to the pre-Aśokan period) so far as it is possible on the basis of all the available relevant texual data.

Ahmedabad — **Prof. H. C. Bhayani**

11-12-91

This treatise, *Prācīn Ardha-Māgadhī kī khoj-meṁ*, '*In Search of the Original Ardha-Māgadhī*' written in Hindi by K.R. Chandra, **is one of the finest specimens of research on Ardha-Māgadhī** (=Amg.). The author is to be congratulated for taking pains in doing such a productive research work. The main purpose of the author is **to find out the original features of Amg.** in which the canonical literature of **the Śvetāmbaras was written.**

The book has eight chapters, and a detailed content where each point of the text discussed is indicated. It has a short bibliography as well. But it does not have any word-index.

We are grateful to the author **for presenting such a thought-provoking research work.** The arguments put forward by the author for finding out the original features of **Amg. are praiseworthy**. In the debris of different readings, Dr. Chandra, intending to find out the original Amg., has compared the Prakrit forms with the Aśokan inscriptions and Pali canons, and in his opinion, what corresponds with these two languages must be regarded as the original old readings of the Śvetāmbara canons. He further adds that **during the long period of transmission, lots of original readings have undergone changes,** sometimes beyond recognition at the hands of the copyists, and, as a result, **we have these confused readings of the Āgama texts.** While accepting his arguments, it can also be added

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

that sometimes **lack of editorial discipline and grammatical insight may be responsible for these divergent readings.** Throughout his book Dr. Chandra has put forth **a strong argument and a convincing plea for tracing the original readings of the text.** He has neither discarded any readings, nor has accepted any one, but has presented all the readings before the scholarly world to apply their power of judgment to select any one for the original *Amg.* In some cases he has also suggested the older readings of the canonical texts.

The present treatise will contribute a lot to the field of Prakrit textual criticism (for which see the article by S.R.Banerjee in *'Jain Journal'*, Vol. XXII, No.3, 1988, pp. 87-97). Dr Chandra has discussed at great length various readings of the Śvetāmbara Jaina canonical texts as edited by modern scholars. He points out quite clearly the diversity and disagreement of the readings which baffle all our attempts to find out the original character of the Amg. language. He has compared the different readings of the same word; *e.g.* in the *Ācārāṅgasūtra*—the readings *egadā* vs *egatā*, *ṇassati* vs *nāsati*, *etaṁ* vs *eyaṁ* are found indiscriminately. In his opinion, there must be some forms which are earlier than the rest. Dr Chandra has also said that grammatically they are not wrong, but **these readings puzzle the scholars to trace the original readings of the text.** In the Ācārāṅga-sūtra as edited by Schubring, Āgamodaya, Jain Vishva Bharati and MJV, different forms of the same word have been accepted, e.g., *logāvāī* (Schub.), *loyāvādī* (Āgamo.), *logāvāī* (JVB) and *logāvādī* (MJV). It is to be remembered that the change of k into g in Amg. is, of course, very common in the Śvetāmbara canonical texts, but they are limited to a group of words; and hence all the *k*'s are not changed into *g*'s and in that case there will be no existence of *k* at all in *Amg.* texts. Similar is the case with the elision of intervocalic *d.* The loss of intervocalic single consonantal sounds is a tricky problem in Prakrit, and Amg. in particular. No norm is established in this regard, except the prescription of the Prakrit grammarians. **Editors of Prakrit texts fly into fancy in accepting or rejecting the readings** accordingly. However, the points raised by Dr. Chandra is commendable.

In search of the original *Amg.* Dr. Chandra has raised seve-

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

ral points in his book. In the first chapter (pp.1-34) he deals with different readings relating to the loss of non-conjunct intervocalic consonants found in different editions of the same texts. Out of many, only a few examples can be cited : *etaṁ-eyaṁ, logaṁ-loyaṁ, bahugā-bahuyā, bhagavatā-bhagavayā, paveditā-paveiyā, udaraṁ-uyaraṁ, cute-cue* vs *cuto-cuo, adhe-ahe, thībhi-thīhi*, and so on. In fact, one of the greatest difficulties in Prakrit in general, is the condition for the loss of intervocalic *k, g, c, j, t, d, p, y, v* (He. I. 177) which are generally elided in the intervocalic position. But where these sounds are to be elided is not easy to ascertain from the prescription of the Prakrit grammarians. Hemacandra has suggested by saying–*yatra śruti-sukham utpadyate sa tatra kāryaḥ (vṛtti* under 1.231); but this is merely an indication of how to look at the problem. My feeling is that all these sounds in an intervocalic position are to be elided in principle, otherwise the rule of Prakrit will be useless. So the readings where the elision of these sounds are found are to be accepted, but in case *t* is changed to *d* as in Śauraseni (where intervocalic *d* is retained), then, of course, that *d* is not elided. If that principle is followed, then we can avoid confusions of readings. The passage like *suyaṁ me āusaṁ* or *sudaṁ* or *sutaṁ me āusaṁ* are puzzling. In fact *sudaṁ* is a Śauraseni influence.

With regard to the changes between *dh* and *h, dh* is to be regarded as older than *h*, because *dh* is preserved in Vedic, e.g., Vedic idha > classical *iha*. This retention of *dh* is preserved in Śauraseni and in some Aśokan Prakrits, e.g., *idha na kiṁci jīva*, etc. So also *adha, atha>aha* (Mahā.). That is why in the history of OIA, there has always been an interchange between *dh* and *h*; e.g., *āghāta* and *āhāta, dhita* and *hita, gṛbhṇati* and *gṛhṇāti*. This is supported by Hemacandra's *sūtra–kha-gha-tha-dha-bhām* (I.180) where intervocalic *kh, gh, th, dh* and *bh* become *h* in Mahārāṣṭrī. But *dh* is retained in Śauraseni and *th* also becomes *dh* in the same dialect. So the readings, with *gh, dh*, etc. in *Amg.* seems to have been carelessly done.

In chapter II (pp. 35-52) Dr. Chandra discusses some forms of some words which seem to him to be confusing. He cites examples of some words which have several forms, such as, *ātman has attā, ātā, āyā* and *appā*, and the endings of locative singular are found in *-aṁsi, -ssiṁ, -mmi, -mhi (ṁ)* and so on. In chapter III (pp.53-67)

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

the author points out the antiquity and the place of the origin of the *Āgama* texts through the analysis of the language. In the next two chapters IV and V Dr. Chandra's main focussing line is on the characteristic features of Amg. In this connection, he has cited the views of Hemacandra (pp.68-79) and has also suggested some principles to be adopted for the *Amg.* language (pp. 80-84). One complete chapter (VI, pp. 85-93) is devoted to the various Prakrit forms of one Sanskrit word *kṣetrajña*, and this shows how the *Āgama* texts are inundated with several forms of the same word. In chapters VII and VIII Dr Chandra has discussed the question of stylistic presentation of some sentences (pp. 94-99) and finally the conclusion (pp.100-106) of his thesis is synoptically adumbrated.

One of the most interesting points of his treatise is the discussion on the formation of past tenses in *Amg.* (p.44f). In his opinion the forms like *akāsī, ahesi, akarissaṁ., āhaṁsu, abhaviṁsu, hiṁsiṁsu* and so on are the oldest features of the *Āgama* texts. These are,in fact, the remnants of some of the aorist forms crept into the canonical text, and hence the oldest. Pischel in his *Grammatik der Prakrit Sprachen* (§§ 516, 517) has given some forms which are the remnants of Vedic Sanskrit imperfect (§ 515), perfect (§ 518) and pluperfect (§ 519). Otherwise the entire systems of Sanskrit past tenses (imperfect, perfect and aorist) are lost in Prakrit, and are replaced by the past participial forms *ta* and *tavat*, of which again the latter form is extremely rare.

In judging the older forms of Prakrit what is wanted is to trace whether the forms in any way are connected with the other Sanskrit forms or not. Sometimes the older Vedic forms are preserved in Prakrit without realising that these Prakrit forms have come down to us through some rare Vedic occurrences. For example, the Prakrit words, *ṇāiṁ* and *māiṁ (aṇa ṇāiṁ naṇarthe / māiṁ mārthe//* He. II 190-1) are the remnants of Vedic *nakīm* and *mākīm (RV. VI.* 54. 7). In a similar way, we have Vedic *mākiḥ* = Greek *me-ti*'s (μητι'ς) meaning 'no one', 'none' 'never' and *nakiḥ*=Gk. *ti*'s (τι'ς), Latin *quis* Av cis also meaning 'no one', 'nothing' which are supposed to be very old even in Vedic. Just as we have *kim*, so also we have Vedic *kiḥ* (e.g. *ayaṁ yo hotā kiruḥ saḥ, RV. X.* 52,3)

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

from which the Prakrit forms *kissa* and *kīsa* have come down to us, though this form does not occur in classical Sanskrit.

In short, it can be said that **this small book shows Dr. Chandra's insight into the problem and records here the amount of indefatigable labour and sincerity** he has given in finding out the material from the printed texts. This idea is welcome, and I personally feel that **this should be a standard book of research for tracing the original *Amg.*** I think that every student of Prakrit must have this book by the side of his study-table.

I, therefore, heartily commend Dr. Chandra's inspiring and excellent study to the learned readers throughout the world.

'Jain Journal', Calcutta, April, '92 —**Satya Ranjan Banerjee**

This trail-blazing work on reconstitution of original Ardha-Māgadhī (AMG) canon **is based on years of careful and painstaking research.**

Religious-minded Śvetāmbara Jain community donated munificent grants for the publication of their secred Canons. It may be due to the manuscripts material (Critical apparatus) available to the editor, and/or his insufficient grounding in textual criticism or text-constitution or a deliberate attempt at simplification of the text (as noted by Muni Puṇyavijayajī in his edition of the *Kalpa Sūtra*) that **we find confusing readings in editions of the Canon.**

With due respect to the editors of the following editions, I give an example of the AMG formations of the Sk. word क्षेत्रज्ञ as found in different editions : (See pp. 85-93) from the book under review)

(1) खेयन्न (W.Schubring)

(2) खेयन्न (9times) and खेयण्ण (7 times) in the Āgamodaya Samiti Ed.

(3) खेयन्न (1) and खेयण्ण (15) in Jain Vishva Bhāratī Ed.

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

(4) खेयण्ण (2), खेतण्ण (6), खेत्तण्ण (8) in Mahāvīra Jaina Vidyālaya Ed.

The variants of this word in the Mahāvīra Jaina Vidyālaya Ed. are as follows : खित्तण्ण, खेदन्न, खेदण्ण, खेयन्न, खेअन्न

This confusing variety is not limited to forms of words only but even to sentences. For example (pp. 94-98 of the book under review) the very first sentence of the Ācārāṅga-sūtra (which is found at the beginning of other works) is seen as follows :

(१) सुयं मे आउसं ! तेणं भगवया एवमक्खायं... Ācārāṅga-sūtra

*(२) सुतं मे आउसंतेणं भगवता एवमक्खातं... Sūtrakṛtāṅga-sūtra

Finding such a chaotic state of the sacred Āgama, Dr. Chandra became "haunted" with the idea of restitution of the original texts. He published a number of papers in order to invite the attention of scholars to this linguistically anamolous state of the sacred texts.

The present book is a collection of some of his papers on this subject. In the first chapter **Dr. Chandra illustrates the linguistic anamoly in the published editions of the Canon.**

In the second chapter, Dr. Chandra discusses what he regards as the main features of old AMG. Common features in Pāli and AMG may indicate some of the characteristics of the language of ancient Magadha and/or Kosala. We can accept case-terminations like Instr. Pl. - *bhi*, Dat. Sg. *-āya*, Loc. Sg. *-ssiṁ* or the derivatives from Vedic forms as old AMG. **This whole chapter deserves careful study.**

Although I do not agree with the date assigned to the Pātaliputra Vācanā, I accept that it was the first Vācanā. (Dr. Chandra assigns 4th Cent. B.C. vide p.67, Footnote I, according to Max Mullar's "Sheet anchor of Ancient Indian Chronology", on the basis

* On fresh evidence the word-form आउसंतेणं had to be bifurcated as आउसंते णं(आउसंते as the Māgadhī vocative form and the णं as indedinable for emphasis)–See my article to this effect in the '**Śramaṇa**', Varanasi (Hindi), July-Septr, 1995, pp. 66-69 – Editor

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

of Brahmaṇical Mahāpurāṇas, Candragupta Maurya was coronated in 1530 B.C. which I follow). But that does not affect the historicity of the first Vācanā at Pātaliputra. I, however, doubt whether the AMG Canon was settled in that Vācanā or whether some time later but before Māthurī Vācanā. We come across references to the Vācanā at Mathurā. I wish to know if there are references to Pātaliputra Vācanā in the Canon. The same is the case with the Pāli Canon. Although Mahā Kassapa took the lead to collect the *Buddha Vacana* in the 1st Saṅgīti at Rājagṛha, scholars do not believe that the present Pali canon is the same as in the first Sangīti at Rājagṛha.

Apart from this, Dr. Chandra deserves our thanks for collecting linguistically interesting and important material in this chapter. There is no doubt that AMG was an East Indian language, though its name is rather enigmatic. Geographically it is supposed to belong to a "Half of Magadha". But which Half ? And what language was spoken in the other half of Magadha ? Linguistically AMG does not share the differentia of Māgadhī viz. the change of Sk. Ṣ, Ś, S to Ś and uniform change of Sk. R to L, Hemacandra rightly calls it ĀRṢA. Pāli and AMG are like the Sindhu and the Brahmaputrā. They rise from the Mānasa Lake, but flow in different directions. The same had happened in the case of Pāli and AMG. They belonged to practically the same region. But Pali was fortunate to get royal support and was preserved better. When it came to be fixed at the time of king Kanīṣka in Kashmir, its linguistic form remained more ancient. The history of Pali does not mention or reflect the effect of the great famine in the reign of Candragupta Maurya. Jain sages depending on public support had to migrate and those sages who remained behind retained with difficulty their Canon. The influence of Mahārāṣṭrī on AMG is due to the westward migration of the Magadhan sages. Pali also did not retain its pristine purity as the influence of Paiśācī on it shows. Hence the acceptance of Pali for ascertaining old AMG needs some caution. I write this for young scholars. Dr. Chandra has correctly traced the old AMG form for Kṣetrajña. **His attempt to trace old AMG on the basis of available material in chapter eight is**

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

worth careful study.

Dr. Chandra has taken enormous trouble for this guide to the next generation. **Generations of scholars will remain indebted to him for this beacon of linguistic research.**

I take this opportunity to palce before the scholarly world the **need of a critical edition of the AMG Canon**. The present editions as amply demonstrated by Dr. Chandra, are not that satisfactory. Fortunately Gujarat and Rajasthan have a good tradition of preserving ancient MSS. There are eminent scholars and Ācāryas who can **competently bring out such a reliable critical edition of the canon.** Formation of such a **Research Institute** will be the real fruit of the labour of persons like Dr. Chandra. **The Trustees of Seth Kasturbhai Lalbhai Trust deserve the thanks** of the scholarly world for their donation of a publication grant to this valuable work.

'तुलसी प्रज्ञा', लाडनूँ, सितम्बर, १९९२ — **Prof. G. V. Tagare**

The language of the Śvetāmbara Jain Canons is called Ardhamāgadhī. The total number of texts is 45 or 46. Some of these, as the *Āyāraṁga*, the *Sūyagaḍaṁga* and the *Uttarajjhayaṇa* are very old and their tradition may go back to the first recension of the Āgamas at Pataliputra in c. 3 rd century B. C. if not earlier. Others, such as the *Nandī* may be ascribed to the period of the last recension at Valabhi in c. 5th century A. D., it being authored by Devardhi himself, the chief of the Valabhi Vācanā. So one may conclude that compilation of the Āgamas was spread over at least a period of seven to eight hundred years.

The Magadha empire of the 6th-5th century B. C. being the main field of Lord Mahāvīra's and his gaṇadharas' activities, **it may be assumed that the Āgamas were formulated in Māgadhī or the eastern dialect of that period, which later, for certain reasons, was given the appellation of Ardhamāgadhī.** This too may be conceded that in the first recension at Pāṭaliputra the original language was

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

preserved. But It cannot be vouched that the texts preserved and also produced after the Pāṭaliputra Vācanā conformed to the original standards and did not undergo any phonetical or morphological variation in the Valabhi Vācanā when such variations are evidenced in Eastern, Western and North-Western versions of the Aśokan inscriptions.

Further, the language of the Āgamas, and for that matter of the Prakrits in general, not being standardized, phonetical and morphological changess (or developments) in the language continued with the change of time and place, and it can't be ruled out that the scribes took the liberty of substituting the prevalent forms in their texts.

So, when, in 12th century A.D., Hemacandra viewed the Āgamas from a grammatical point of view, **he was struck with variations.** He called the language Ārṣa (sacred or archaic) and **pronounced that here all the rules had alternatives** *(sarve vịdhayo vikalpyante).*

In the title under review Dr. Chandra suggests ways and means to reduce variations in the readings of the Ardhamāgadhī texts, specially the older ones. He postulates that Lord Mahavira and Lord Buddha, being contemporary and their activities centering in the same region, must have preached in a common language which might have been the Māgadhī of that time. So Pāli and Ardhamāgadhī, both coming from the same source, should have similar phonetical and morphological features. Again, the Pāṭaliputra Vācanā of the Ardhamāgadhī canons being close to emperor Aśoka in point of time and place, the former cannot but have common linguistic features with the eastern edicts of emperor Aśoka extant at Dhauli, Jaugaḍh and Kālasī. Further, the phonetic changes in MIA reached the stage of total elision of the medial consonants *k, g, c, j, t, d* gradually. The process started with softerning of the surds to the sonants and the latter remaining unchanged. Similarly, the voiceless and the voiced aspirates ***kh, gh, th, dh, ph, bh,*** before being reduced to pure aspiration (***h***), underwent the stage of the voiceless being voiced and the latter remaining unchanged. This process is confirmed by a comparative view of phonetic changes taking place in Pāli, Aśokan inscriptions,

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

Śauraseni ano Mahārāṣṭri. Dr. Chandra has stratified a number of verbal and nominal suffixes too, on the basis of their usages. **On the strength of the above he argues that in editing the Ardhamāgadhī texts, at least the older ones, the older forms, wherever found (as textual readings or variants) should be preferred.** With this point in view, he has also given a sample of editing in the seventh chapter of his book and has laid down the principles to be followed in this regard in the eighth and final chapter of his book.

All along the author has been meticulous and painstaking. He deserves careful attention of all scholars working in the field of editing texts in the Ardhamāgadhī or any other old Prakrit.

The language is simple, lucid and pleasant. But phrases like *Sudharmāsvāmī pharmāte haim* (page 94) and *'bhāṣākīya svarūpa'* (page 106) may jar on a puritanical reader. Printing is good and correct except a few lapses of proof-correction such as *'punarāvalokana'* for *'punaravalokana'* (on page 90) and wrong folio heading on pages 81 and 83.

BORI, LXXVI (1995), 1996 —**R. P. Poddar**
PUNE.

संस्कृत और प्राकृत के पाणिनिकल्प अपने कालोत्तर महावैयाकरण आचार्य हेमचन्द्र ने व्याकरण ग्रंथ 'सिद्धहेमशब्दानुशासनम्' के प्रारंभ (अध्याय ८, पाद १, सूत्र ३) में ही लिखा है कि 'आर्षे हि सर्वे विधयो विकल्प्यन्ते' अर्थात् ऋषि-प्रोक्त होने के कारण प्राकृत भाषा में सभी विधियों का विकल्पन यानी प्रयोग-वैविध्य के स्वातन्त्र्य का अवकाश रहता है। इसीलिए अर्धमागधी प्राकृत ही क्यों, महाराष्ट्री और शौरसेनी प्राकृतों में भी प्रयोगों की विविधता और विचित्रता सहज ही परिलक्षित होती है।

संस्कृत भाषा के समानान्तर प्रवाहित होती हुई प्राकृत भाषा चूंकि लोक-जीवन के बीच से गुजरने वाली भाषा रही है, इसीलिए इसमें विभिन्न प्रदेशों की लोकभाषाओं की प्रवृत्तियों और प्रकृतियों का समावेश होने से प्रयोग बाहुल्य अस्वाभाविक नहीं है। विशेषत: प्राचीन काल के शिलालेख, जिनमें अशोक के लेख अतिशय महार्घ हैं, प्राय: जन-जीवन में सम्यग् ज्ञान और सम्यक्

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

चारित्र के उन्नयन निमित्त उत्कीर्ण कराये जाते थे, इसीलिए उनमें लोक व्यवहार के उपयुक्त भाषिक प्रयोगों के प्रति अधिक आग्रह रहता था, इसलिए भी तद्विषयक प्राकृतों में प्रायोगिक विविधता का सहज समावेश हुआ। कदाचित् इन तत्त्वों को ही लक्ष्य करके आचार्य हेमचन्द्र ने लिखा कि 'आर्षं प्राकृतं बहुलं भवति', ८-१-३, जो हो भाषाओं के प्रयोग-वैविध्य और प्रयोग-वैचित्र्य का साग्रह अध्ययन और अनुशीलन भाषा-शास्त्रियों के लिए पुराकाल से ही एक रोचक प्रसंग रहा है। आन्तरिक (हार्दिक) प्रसन्नता की बात है **कि प्राकृत के मर्मज्ञ मनीषि डो. के. आर. चन्द्रा ने जैन आगमों की भाषा अर्धमागधी के प्रयोग-वैविध्य की गहराई में खोज-बीन करने के अपने सारस्वत संकल्प को क्रियान्वित करने का अतिशय सफल और प्राकृत भाषा के शोध-अधीतियों के लिए सहज अनुकरणीय विषिष्ट प्रयत्न किया है**। अवश्य ही डो. चन्द्रा का इस कृति के माध्यम से प्राचीन अर्धमागधी के शोधगर्भ अध्ययन-अन्वेषण के क्षेत्र में किया गया **यह भाषिक पद-निक्षेप डो. पिशेल के एतद्विषयक अध्ययन को आगे बढ़ानेवाला तो है ही, तथा अपने आप में क्रोशशिलात्मक और ऐतिहासिक महत्त्व भी रखता है**।

भाषा-व्यसनी विद्वान् डो. चन्द्रा की अपनी सार्थक संज्ञा से समन्वेत यह नातिबृहत् कृति '**प्राचीन अर्धमागधी की खोज में**' के संदर्भ में लिखे गये शोधपूर्ण नातिदीर्घ आठ लेखों का यह महत्त्वपूर्ण संकलन है, जिसमें उनका मूल लक्ष्य प्रायः **अशोक के शिलालेखों की भाषा के साथ 'आचारांग' की भाषा के तुलनात्मक अध्ययन तक केन्द्रित है** और इस सन्दर्भ में **उन्होंने अशोक के शिलालेख, पालि पिटक तथा जैन आगम आचारांग की भाषाओं का समेकित और व्यतिरेकी दोनों प्रकार से अनुशीलन करने की वैदुष्यपूर्ण और आशंसनीय चेष्टा की है**।

इस कृति में यथासंकलित लेखों के सटीक शीर्षकों से उनमें प्रतिपादित विषयों का प्रतिपाद्य विषय स्वतः स्पष्ट है। **इस क्रम में डो. चन्द्रने अर्धमागधी के तद्धितीय और कृदन्तीय दोनों प्रकार के शब्दों का व्यापक पाठलोचन किया है** और पाठालोचन के प्रसंग में उन्होंने भाषा विज्ञान के प्रायः सभी आयामों का उपयोग करते हुए उन पर सूक्ष्मेक्षिकापूर्वक विचार किया है। इस भाषिक विवेचन के निमित्त उन्होंने जैन विश्वभारती, लाडनूं, आगमोदय समिति, महेसाणा, महावीर जैन विद्यालय, बम्बई, तथा एम.ए. महेण्डले, जे. शार्पेण्टियर, डो. वाल्थेर शुब्रिंग, आदि द्वारा स्वीकृत

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

पाठ-भेदों को विवेच्य के आधार के रूप में स्वीकार किया है।

अवश्य ही कृतविद्य भाषाशास्त्री डो. चन्द्रा ने अपने स्वीकृत शोधश्रम के प्रति पूरी ईमानदारी से काम किया है और इस क्रम में जैन आगमों—आचारंग, सूत्रकृतांग, स्थानांग, व्यारव्याप्रज्ञप्ति, ज्ञातृधर्मकथा, कल्पसूत्र, उपासकदशा, औपपातिकसूत्र, उत्तराध्ययन, दशवैकालिक, ऋषिभाषित आदि तथा पालि आगमों (त्रिपिटक) सुत्तनिपात **आदि के गहन अध्ययन का विस्मयकारी परिचय दिया है।** इसके अतिरिक्त शोधश्रमी लेखक ने अपने भाषिक अध्ययन के उपजीव्य के रूप में शिलालेखों को ततोऽधिक मूल्य दिया है। इसके लिए उन्होंने अशोक के शिलालेखों को मुख्यता दी है और प्रत्यासत्तिवश शाहबाजगढी, मानसेहरा, धौली, जौगड, कालसी, गिरनार आदि शिलालेखों का भी यथोचित परिशीलन किया है। परन्तु अवश्य ही इस संदर्भ में यथाप्रत्यक खारवेल और हाथीगुंफा के शिलालेखों का अध्ययन अपेक्षित रह गया है।

कुल मिलाकर अधीती लेखक डो. चन्द्रा की यह कृति प्राचीन अर्धमागधी के पाठलोचन के क्षेत्र में सर्वथा नवीन निक्षेप के रूप में स्वीकृत होगी, ऐसा मेरा विश्वास है। साथ ही यह आशा है कि प्रज्ञावान् लेखक महोदय अपने इस लघुतर प्रशंसनीय प्रयास को बृहत्तर रूप देने के लिए अपनी स्वीकृत सारस्वत यात्रा को अविराम बनाये रखेंगे—**"अयभारम्भः शुभाय भवतु"।**

भाषा-विज्ञान जैसे जटिल और तकनीकी विषय से सम्बद्ध इस कृति के मुद्रण की स्वच्छता और शुद्धता साधुवाद के योग्य है। पर लेखक द्वारा किया गया 'भाषाकीय' शब्द का प्रयोग अपाणिनीय है। इसकी जगह 'भाषिक' शब्द का प्रयोग साधु होता।

अन्त में इस कृति की भूमिका में—**एक विशिष्ट प्रयत्न**—के महाप्रज्ञ लेखक, प्राकृत जैन-शास्त्र के शलाकापुरुष पं. दलसुख मालवणियाजी के साथ में भी समस्वर हूँ कि **डो. चन्द्रा का यह सर्व प्रथम भाषिक अध्ययन का प्रयत्न प्रशंसा के योग्य तो है ही, जैन आगमों के सम्पादन की प्रक्रिया को नई दिशा और नवीन बोध देने वाला भी है। निश्चय ही, जो लोग आगमों के पाठानुशीलन और सम्पादन में अभिरुचि रखते हैं वे डो. चन्द्रा के आभारी रहेंगे।**

पटना, 14-7-92 — **डो. श्रीरंजनसूरिदेव**

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

જે પ્રકારના અધ્યયન-સંશોધનની ઘણા સમયથી રાહ જોવાતી હતી તેનો શુભ આરંભ આ લુઘુપુસ્તકમાં થયો છે.

જેના કેટલાક અંશોનો રચનાકાળ ઈ.સ.પૂર્વે ૩૦૦ની આસપાસ માનવામાં આવે છે, તે શ્વેતાંબર જૈન આગમોની ભાષાને 'અર્ધમાગધી' એવું નામ અપાયું છે. આજે ઉપલબ્ધ સંસ્કરણોમાં 'મહારાષ્ટ્રી પ્રાકૃત'ના પ્રયોગો થોકબંધ મળે છે. એમ લાગે છે કે વચ્ચેના સેંકડો વર્ષોના ગાળામાં, સંભવતઃ લેહિયાઓ તથા અભ્યાસીઓના હાથે , મૂળ ભાષામાં ગજબનું પરિવર્તન થઈ ગયું છે ! આથી ઉપલબ્ધ હસ્તપ્રતોમાંનાં સર્વ પાઠાંતરોની સૂચિ બનાવી તેની મદદથી આગમોની ભાષામાંથી પ્રાચીન અને અર્વાચીન (અર્થાત્ 'મહારાષ્ટ્રી પ્રાકૃત'ના) અંશો અલગ પાડીને આર્ષ 'અર્ધમાગધી'નું મૂળ સ્વરૂપ પ્રકટ કરવું એ અત્યન્ત આવશ્યક છે.

ડૉ.ચન્દ્રએ પહેલી જ વાર પ્રાચીનતમ જૈનાગમ 'આચારાંગસૂત્ર' તથા પાલિ પિટક અને અશોકના શિલાલેખોની ભાષાનો તુલનાત્મક અભ્યાસ કર્યો. તેમણે જોયું કે 'આચારાંગસૂત્ર'ની મહાવીર જૈન વિધાયલયની આવૃત્તિમાં હસ્તપ્રતો તેમ જ ચૂર્ણીમાંથી પુષ્કળ પાઠાંતરો આપ્યાં છે. બીજી બાજુ શુબ્રિંગના સંસ્કરણમાં તો 'મહારાષ્ટ્રી પ્રાકૃત'ના ધ્વનિ-પરિવર્તનવિષયક નિયમોનું જ જાણે અક્ષરશઃ પાલન કરાયું છે અને પાઠાંતરો પણ જૂજ આપ્યાં છે.તેમણે આનંદ અને આશ્ચર્ય સાથે નોંધ્યું કે 'ઈસિભાસિયાઈં' (ઋષિભાષિતાનિ) ના શુબ્રિંગના જ સંસ્કરણમાં આર્ષ પ્રયોગો સારા પ્રમાણમાં સચવાયા છે ! - અને અહીંથી જ ડૉ. ચન્દ્રના સંશોધનનો પ્રારંભ થયો.

લબ્દપ્રતિષ્ઠ અને ઊંડા અભ્યાસી પં. દલસુખભાઈ માલવણિયા જણાવે છે તેમ, શતાધિક વર્ષોથી ચાલી રહેલ જૈનાગમોના સંશોધનની પ્રક્રિયાને આ પુસ્તિકા નવી જ દિશા આપે છે. તે લેખકના વર્ષોની મથામણના ફળસ્વરૂપ છે. 'આચારાંગ-સૂત્ર'ની મુખ્ય આવૃત્તિઓનો અભ્યાસ કરી તેની સાથે તેના સમકાલીન એવા પિટક તથા અશોકના શિલાલેખોની ભાષાની તુલના કરી મૂળ 'અર્ધમાગધી' ભાષાનાં લક્ષણો તારવવાનો તેમનો આ અતીપ્રશસ્ય પ્રયત્ન એક નવી જ પહેલ છે.

પુસ્તકના પ્રથમ અધ્યાયમાં પ્રાચીન ગ્રંથોમાંથી નમૂના લઈ ભાષાનો વિશ્લેષણાત્મક અભ્યાસ કરી લેખક એવા નિષ્કર્ષ પર આવ્યા છે કે 'અર્ધમાગધી'નું મહારાષ્ટ્રીકરણ જ થઈ ગયું છે. અને તેથી નવા સંસ્કરણમાં હસ્તપ્રતો તથા ચૂર્ણીઓમાં મળતા પ્રાચીન પાઠોને સ્વીકારી લેવા જોઈએ.

બીજા અધ્યાયમાં એવું દર્શાવ્યું છે કે 'મહારાષ્ટ્રી' તેમ જ 'શૌરસેની' કરતાં 'અર્ધમાગધી' પ્રાચીન ભાષા છે અને કેટલીક રીતે તે પાલિ ભાષા સાથે સામ્ય ધરાવે

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

છે.

આગમગ્રંથો, પાલિ 'સુત્તનિપાત' અને અશોકના શિલાલેખોના પ્રયોગોની તુલના પરથી ત્રીજા અધ્યાયમાં એવું પ્રતિપાદિત કરાયું છે કે 'અર્ધમાગધી'ના પ્રાચીન ગ્રંથો અશોકથી યે જૂના હોવા સંભવ છે અને તેમની રચના મૂળે પૂર્વભારતમાં જ થઈ હતી.

પછીનો અધ્યાય આચાર્ય હેમચંદ્રના પ્રાકૃત વ્યાકરણનું નવી દૃષ્ટિએ કરાયેલું અધ્યયન રજૂ કરે છે. આ મહાન વૈયાકરણ પોતાના ધર્મના આગમોની ભાષા અર્ધમાગધીનું કોઈ વ્યાકરણ આપતા જ નથી તે એક આશ્ચર્યની વાત છે. માત્ર કેટલેક સ્થળે પોતાની 'વૃત્તિ'માં આ ભાષાની થોડીક લાક્ષણિકતાઓ 'આર્ષ' શબ્દ યોજીને નિર્દેશી છે.

પાંચમાં અધ્યાયમાં લેખકે આ ભાષાની ૩૭ લાક્ષણિકતાઓ ચર્ચી છે. આગમગ્રંથોના સંપાદનમાં આ લાક્ષણિકતાઓનું જ્ઞાન ખૂબ ઉપયોગી થાય તેમ છે. આ રીતે જોતાં સ્પષ્ટ થાય છે કે પાલિ તેમ જ અશોકના પૂર્વીય શિલાલેખોની ભાષા સાથે સામ્ય ધરાવતી મૂળ 'અંર્ધમાગધી' સંસ્કૃતની વધારે નજીક છે.

'क्षेत्रज्ञ' શબ્દના અર્ધમાગધી રૂપ વિષેની સરસ ચર્ચાને એક આખો અધ્યાય ફાળવ્યો છે. વિવિધ આવૃત્તિઓમાં આવતાં આ સંસ્કૃત શબ્દનાં કુલ નવ પ્રાકૃત રૂપોનું મુદ્દાસર વિવેચન અહીં કર્યું છે. 'क्षेत्रज्ञ' શબ્દનાં ધ્વનિવિષયક 'પ્રાકૃત રૂપાંતરો' 'खेत्तटञ्ञ', 'खेत्तन्न', 'खेतन्न', 'खेदन्न' અને 'खेयण्ण' નું ઐતિહાસિક દૃષ્ટિએ સુંદર વિશ્લેષણ અહીં કરેલું છે. આ સઘળી ચર્ચામાંથી એ સ્પષ્ટ થાય છે કે મૂળ અર્ધમાગધી રૂપ 'खेत्तन्न' જ હતું.

પછીના અધ્યાયમમાં 'આચારાંગસૂત્ર' ના ઉપોદ્‌ઘાતના વાક્ય 'सुयं मे आजसं तेणं (પાઠાંતર तेण) भगवया एवमक्खायं...'ની શબ્દયોજનાની વિશદ છણાવટ કરી છે.

અંતિમ અધ્યાયમાંના સંક્ષિપ્ત વિવેચન પરથી સમજાય છે કે જુદા જુદા સંપાદકોએ, ઐતિહાસિક વિકાસ, સમય, ક્ષેત્ર અને ઉપદેશકની વાણીના સ્વરૂપને ધ્યાનમાં લીધા વિના જ, પોતપોતાની ભાષાકીય સિદ્ધાન્તોની માન્યતા મુજબ જ તથા, જે સમયની દૃષ્ટિએ ઐતિહાસિક છે જ નહિ અને અર્ધમાગધી ભાષાની વિશેષતાઓને સ્પષ્ટ કરતા જ નથી, તેવા પ્રાકૃત વ્યાકરણકારોના નિયમોના પ્રભાવમાં આવીને, જુદા જુદા પાઠો સ્વીકાર્યા છે. આનું મુખ્ય કારણ એ છે કે આપણને કોઈ વૈયાકરણ પાસેથી અર્ધમાગધી ભાષાનું વ્યાકરણ સ્પષ્ટતયા પ્રાપ્ત થયું જ નથી ! **પરિણામે પ્રાચીનતમ આગમ 'આચારાંગસૂત્ર'માં યે ભાષાની ખીચડી થઈ ગઈ છે !**

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

શુબ્રિંગ આદિ લબ્ધપ્રતિષ્ઠ વિદ્વાનોની બેદરકારી સામે અવાજ ઉઠાવનાર ડૉ. ચંદ્ર આદર્શ સંશોધક તરીકે ઊપસી આવે છે અને સર્વથા પ્રોત્સાહના અધિકારી બને છે. તેમણે અહીં રજૂ કરેલું અધ્યયન-સંશોધન આગમોની હસ્તપ્રતોને આધારે અર્ધમાગધી ભાષાનું અસલ સ્વરૂપ પુનઃ પ્રસ્થાપિત કરીને તદનુસાર શ્વેતાંબર જૈન આગમોનું નવું સંસ્કરણ પ્રકટ કરવાની આવશ્યકતા પ્રતિપાદિત કરે છે તથા તે દિશામાં નવું જ માર્ગદર્શન પુરું પાડે છે. આ તો માત્ર પ્રથમ પગલું જ છે. **આ દિશામાં તેમનું સંશોધન અબાધિત રીતે ચાલુ જ રહે તેવી અભિલાષા અને શ્રદ્ધા રાખીએ.**

આ પ્રકારે સાચા પ્રાધ્યાપકનો આદર્શ પૂરો પાડનારા ડૉ. કે. ઋષભચંદ્રને આપણે હાર્દિક અભિનંદન તો આપવાં જ જોઈએ; પણ આ નવી પહેલ માટે આપણે તેમના આભારી પણ બન્યા છીએ.

'સ્વાધ્યાય', વડોદરા — **પ્રો. જયન્ત પ્રે. ઠાકર**
(એપ્રિલ-ઓગસ્ટ, ૧૯૯૦) ૧૯૯૩

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

2. Restoration of the Original Language of Ardhamāgadhī Texts, 1994

(२. रेस्टोरेशन ओफ द ओरिजनल लैंग्वेज ओफ अर्धमागधी टेक्स्ट्स, १९९४)

FOREWORD

Dr. K.R.Chandra's remarkable investigations in the direction of determining the 'Original' linguistic character of the Jain Ardhamāgadhī Āgamic texts are well-known through his writings published so far. The present effort serves to provide some concrete basis to the views he has advanced in this subject. He has selected a number of words from the older stratum of the Ardhamāgadhī texts and has presented a systematic and statistical study of their all available variants in the printed editions. These can be well taken as typical case-studies. The study demonstrates that stray, isolated archaic word-forms preserved in MSS. are suggestive pointers that can give us a glimpse of the original language of the texts. We can not evaluate a particular variant reading and select it as genuine or reject it as later without taking into consideration the development of Middle Ino-Aryan onwards from the Aśokan dialects and without paying attention to the fact of gradual 'Śaurasenization' first and 'Mahārāṣṭrization' in later of the Āgamic Ardhamāgadhī.

If the findings of Dr. Chandra's present few case-studies are acceptable, they quite obviously necessitate a systematic effort to scan all the available variant readings of all Āgamic texts for spoting archaic and consequently genuine readings, As a 'follow-up work' we would require to re-edit some of the texts or therir parts. Of course, the metrical criteria also shall have to be taken into consideration for the re-editing of metrical texts, as is evident from the studies of L. Alsdorf and others.

I congratulate Dr. Chandra for his untiring critical work in this crucial area of Jain studies.

Ahmedabad —**Prof. H. C. Bhayani**

26-1-94

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

An Appreciation

The Jain Canonical Texts, specially the oldest among them, namely the Ācārāṅga I, the Sūtrakṛtāṅga I, Ṛṣibhāṣitāni, etc. were composed in Ardhamāgadhī, however, they were subjected to more and more influences of the later Mahārāṣṭrī during the long course of their transmission, both oral and written.

Dr. K.R. Chandra demonstrates now, through an examination of the variants recorded in older palm-leaf and younger paper Mss. of ten words and proves that the genuine Ardhamāgadhī forms can still be detected amongst the variants.

Dr. K. R. Chandra is to be congratulated for his successful attempts in this field and we wish him many more demonsrations in future. His study should be further resulted in linguistically re-editing of the oldest Ardhamāgadhī canonical texts.

Ahmedabad **–Pt. D. D. Malvania**

26-1-1994

I have perused the prepublication copy of Dr. K.R.Chandra's **'Restoration of the Original Language of Ardhamāgadhī Texts'** which deals with the various readings of the **Ācārāṅga-sūtra**, part-I as edited by different scholars with different manuscripts found in their respective footnotes. **This is a true piece of research work** and Dr. Chandra is to be congratulated for this treatise **which shows his brilliant scholarship** and **meticulous care**. In making a general estimate of Dr. Chandra's achievement as an editor, **one feels the difficulty of avoiding superlatives**; and I believe, **the superlatives are amply justified in this particular case**. What is most important is the fact that he has thoroughly ransacked the different readings of the text and **has tried his best to find out the original readings of the Ardhamāgadhī texts**. To find out the oldest readings of the canonical texts of the Śvetāmbara **is a Herculean task** and requires **a penetrating scientific outlook** with **a good background of linguistic insight**. One is very much puzzled when one sees various readings like *jahā* vs *jadhā*, or *ahā* vs *adhā* so also *tahā* vs *tadhā*, but not *ahā* vs *adhā* for Sanskrit *tathā*. It needs a historical or psychologi

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

cal approach to guess why this type of reading does not occur. In a similar way we also see *ege* vs *eke*, but not ee. **We can imagine several stages for the development of Prakrit.** It is true indeed that we must take into account the Inscriptional Prakrits and Pali in this respect, but they should not be taken as the only guidelines for the older specimens of Ardhamāgadhī. Sometimes Ardhamāgadhī shows greater affinity with old Persian than with classical Sanskrit, e.g. a great many pronominal forms of *ima* MIA, masc, *imo*, neut. *imaṁ*, Ang. *imesiṁ* and so on. So also Māgadhī gen. with -āha as in *puliśāha*<*purisāsa-puruṣasya* reminds us the gen. form *-āha* in old Persian as in *māzdāha*. However, **Dr. Chandra has shown the way for the future scholars how to do research work for a missing link.** When most of the manuscripts betray the Prakrit editors, **Dr. Chandra's work will guide us in this dry and dust subject.**

Calcutta
1-5-94 **– Satya Ranjan Banerjee**

As a methodological exemplar, Dr. K.R.Chandra's '*Restoration of the Original Language of Ardhamāgadhī Texts*' **is an outstanding contribution to both Ardhamāgadhī and Jaina textual scholarship.** Ardhamāgadhī is a variant of Prakrit and was instrumental in the early development of the Jaina tradition.

Although the oldest Jaina Canonical literature, such as the Ācārāṅga-I, the Sūtrakṛtāṅga-I and the Ṛṣibhāsitāni were originally composed in an archaic form of Ardhamāgadhī, it is Dr. Chandra's contention that over time the original idiom of these texts suffered so many alterations that the primary linguistic forms are *almost* unrecognizable. For example, some of these alterations included the interchange of *jahā* for *jadhā*, *ahā* for *adhā*, and "the older Prakrit form of the Sanskrit *yathā* as *adhā* (compared with the *atha* of the eastern Ashokan inscriptions in which the initial y- of the Sanskrit *yathā* is lost)".

The problem is, according to Dr. Chandra, that **"the charac-**

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

teristics of the language of this canonical work should be of an archaic nature in comparison with that of later Ardhamāgadhī and other Prakrit works. But it is not so as it has continuously undergone changes willingly or unwillingly at the hands of preachers and copyists even after the canon was put to writing...as the tradition goes the emphasis was on the meaning and not on the medium."

Compounding this problem was regional mobility, as Jains from the north-east region of the sub-continent moved westward, the original oral and written transmissions of the Āgamic Ardhamāgadhī tradition were impacted by such Ashokan dialects as Śaurasenī and more consequentially by Mahārāṣṭrī Prakrit. This would eventually lead to a jungle of variant textual readings with no uniformity of language.

As Dr. Chandra states, "in the absence of any earlier grammatical treatise it could not be possible to protect the original form of Ardhamāgadhī. Secondly, works on Prakrit grammar are of late origin having a time gap (with the Ardhamāgadhī) of one thousand to seventeen hundred years (i.e. of Vararuci, Caṇḍa and Hemacandra). These grammatical treatises do not help us in deciding the original form of Ardhamāgadhī for editing those canonical works which are comparatively regarded as the earliest compositions".

It is his contention, however, that with a thorough comparison of all extant Āgamic Ardhamāgadhī palm-leaf and paper manuscripts with the linguistic, stylistic and content based features of the Ashokan and Pāli dialects, it is possible to extract the rudimentary Ardhamāgadhī–content and context. In a mammoth undertaking, "*Restoration of the Original Language of Ardhamāgadhī Texts*" is the first step of what will hopefully be an ongoing project — a comprehensive explication of the entire Āgamic collection.

For the sutdy Dr. Chandra has selected ten words and, using a statistical methodology, compiled a textual database of all the known variants contained within the available manuscripts and compared them to the older stratum of the Ardhamāgadhī texts. As the

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

framework of his methodology he chose to:

* List the variant forms in the published text and its MSS.
* List the Sūtra–numbers of each variant of a word.
* List the frequency of each variant in MSS.
* List the total number of each variant in all the MSS.
* List the similar older forms from other older Ardhamāgadhī texts.
* Compile a comparative list for final analysis.

Using this model as a typical case-study, Dr. Chandra concludes that **this type of analysis demonstrates that isolated archaic word-forms preserved in manuscripts are suggestive pointers that can give us a glimpse of the original language of the texts.**

In conclusion, when one takes into account Dr. Banerjee's observations that inscriptional Prakrits and Pāli should not be the only primary external language-models, and keeps in mind that the develoment of Ardhamāgadhī sometimes shows a greater affinity with old Persian rather than classical Sanskrit, **one can view the text as an integral first step in the linguistic re-editing of the oldest Ardhamāgadhī canonical texts.**

Jinamanjari, April,1996 — **–Mikal Austin Radford**
Mississauga, Ontario
Canada

Dr. K.R. Chandra is a renowned scholar and a true researcher in the field of Texual Criticism of Prakrit language. I had the privilege of writing a review on his earlier book entitled 'परम्परागत प्राचीन व्याकरण की समीक्षा और अर्धमागधी' which has been published in last issue of Śramaṇa.

Dr. Chandra's erudition and critical insight make him a keen observer of the linguistic peculiarities of Jaina canons. **His main effort in this book is to find out and ascertain the original form of the Ardhamāgadhī**, the language of the sacred Jaina canons, as

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

there are many variants found in different editions, recensions and manuscripts.

At the outset it appears to me a futile exercise on the part of the author so far as the sanctity of Jaina canons is concered because unlike Vedic texts the Jaina canons do not attach much importance to the 'word'. They are only concerned with the 'true meaning' as is often said :

अत्थं भासइ अरहा सुत्तं गंथंति गणहरा निउणं ।

How does it matter whether it is अत्ता or आया or आता for आत्मा. What matters is that the reader should know the sense of आत्मा. The variants do not change the meaning and consequently the sanctity of the sacred text remains as it is whereas in the field of Vedas the 'word' has the supreme role to play, because the Veda is word-dominated (शब्द-प्रधान) sacred text. Not only the word even the accent is equally important. Even the slight shifting of the accent inadvertently will change the meaning of the word. This is the reason that even today the Vedic text is found intact even after a long long period of five thousand years.

The position of the sacred Jaina texts is different. Had it been like that of the Vedas there would not have been the problem of variants faced by the learned author today.

But inspite of what has been said above the effort on the part of the author is wonderful and as such highly commendable. In order to satisfy the curiosity and a long standing need of the lovers of Jaina literature and maintain the editorial discipline, **the direction shown by Dr. Chandra is an eye-opener.** The curiosity of all of us is there to reach as near as possible to the saying of the Lord *Tīrthaṅkara* if not the exact words which he uttered with his lotus like mouth.

This wonderful book under review comprises two sections. Section I contains the case-study of the variants of a few Ardhamāgadhī words from the Ācārāṅga Pt. I. The author has restricted his study to the following words :

यथा, तथा, प्रवेदितम्, एकदा, एकः, एके, एकेषाम्, औपपादिक,

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

औपपातिक, लोक, लोके, and क्षेत्रज्ञ ।

Each word has been shown in the tables with its numerous variants as found in different printed editions of palm-leaf manuscripts and paper manuscripts. Seven tables have been displayed in this section. Section II contains the study of the variants from *Ācārāṅga, Sūtrakṛtāṅga, Ṛṣibhāṣitāni, Uttarādhyayana, Daśavaikālika Sūtra, Cūrṇis* and Saṁskṛta commentaries.

It is a critical and comparative study of the variants based on the sound principles of linguistics. The variants as given above have been selected from the text of the Ācārāṅga Pt. I (MJV. edition, 1977) and compared with that of texual readings available in the various manuscripts (palm-leaf & paper manuscripts). After analysing the old Ardhamāgadhī forms of Saṁskṛta यथा and तथा the author concludes his findings as follows :

The study of variants of these two words reveals that with the passage of time and the evolutionary trend of the Prākṛta younger and new forms like *jahā* and *tahā* became popular and they replaced the old forms like अधा and तथा. The same is the case with other forms also.

That there is definitely a linguistic system working all through in the development of Ardhamāgadhī is strikingly revealed in the table No. 1 where the learned author has painstakingly shown numerous variants of यथा and तथा. The word यथा has variants जहा, जधा, अहा and अधा whereas the word तथा has तहा, तधा, तहं, तधं but never अहा or अधा or अहं.

By showing the direction towards the real Ardhamāgadhī form in the sacred Jaina canon and thereby satisfying our curiosity of knowing and going near to the scared and unpolluted language of the Lord *Tīrthaṅkara* **Prof. Chandra has done great service to the lovers of Prākṛta in general and the devotees of scared Jaina texts in particular. To solve the problem what he has posed is an uphill task and requires a team of scholars like him because one single scholar will not be able to complete the whole work.**

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

May God bless the author (Prof. Chandra) with hundred years life and make him instrumental in leading a team of scholars to bring out the most authentic editions of Ācārāṅga and Sūtrakṛtāṅga, etc.

'श्रमण', अप्रैल-जून, १९९६ —Prof. S. C. Pande

Dear Professor Chandra,

I have received your book 'Restoration of the Original Language of Ardhamāgadhī Texts' and have had the pleasure of appreciating your single-minded scholarly quest. Your study of variants of a few Ardhamāgadhī words from the Ācārāṅga and some of the words from old Ardhamāgadhī texts will go a long way in resolving difficult issues of linguistics and in achieving greater editorial coherence and textual understanding of canonical literature. The praise showered on your work by Pt. Dalsukhbhai Malvaniya and Prof. Bhayani is eloquent testimony of its high quality. I send you my hearty congratulations and good wishes.

Yours Sincerely
L. M. Singhvi
(High Commissioner for India)

London W. B.
7-10-95

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

Professor J. C. Wright
10-10-95

SOAS
School of Oriental
and African Studies
University of London

Dear Dr. Chandra,

Thank you very much for directing to me a cop of your 'Restoration... '**This is certainly most instructive and I am glad it is now more widely available.** It is a sad situation, however, that you find yourself unable to verify the readings from photographs.

As to comment, I would venture the opinion that subsequent editors **ought not to have ignored Jacobis's useful procedure for representing the oldest available readings,** i.e. italics to indicate inconsistency *(nātam bhavati*, etc.). **Schubring failed to profit from Jacobi's insights and mistakes, and MJV from Schubring's,** so far as I can see. In the present state of knowledge it seems very important to distinguish between readings found in various sorts of verse and those in prose, does it not ? **You have made me realize that I simply do not know why Jacobi and Schubring rejected** *ekesiṁ* **and** *annesiṁ* **readings** : this does not help me in trying to decide **whether they were wrong or right to do so.**

I suppose one ought to insist on the idea that a distinction is necessary between the MJV procedure, **which may be on the right lines when editing commentaries, and the Jacobi procedure for registering basic readings.** Again, my thanks for your letter and for the book.

Yours Sincerely

J. C. Wright

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

It is a very thorough, highly methodical and well-documented work whcih doubtless will involve **admiration from all students of Nirgranthology** including the linguists and philologists working in India and abroad.

Varanasi — **–Dr. M. A. Dhaky**

18-7-95 — American Inst. of Indian Studies

Your work shows how important is the study of variants in any critical study of texts. Variants are not only important for linguistic study **but also for the age of Mss., sometimes for the predilections of copyists.** My hearty congratulations for this serious work.

Nagarjunanagar — **– Prof. N. H. Santani**

3-8-95 — Nagarjuna Buddha University

This study is a land-mark in the field of phonology and morphology of the oriental linguistics..., it shows his depth in the study. **This a micro-study.**

Sirohi — **– Prof. Sohanlal Patni.**

30-8-95

Dr. Chandra deserves compliments for his recent crucial study of great importance undertaken to trace the original character of the Ardhamāgadhī language by carrying out painstaking research from a linguistic point of view.

I hope that **this study will serve as a path–finder and as a pace-setter for similar future reasearches in the subject.**

Kolhapur — **– Dr. Vilas S. Sagave**

17-9-95

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

आप अर्धमागधी भाषा के वैज्ञानिक अध्ययन करने वाले **धौरेय भाषा-शास्त्रियों में पांक्तेय हैं।** आपके इस पुंखानुपुंख भाषिक अनुशीलन से अर्धमागधी की भाषिक विवेचना के क्षेत्र में नवीन वातायन उद्घाटित हुआ है।......आशा है **आपकी यह भाषिक कृति भाषा-विज्ञान की शोधयात्रा में ऐतिहासिक क्रोशशिला सिद्ध होगी।**

— डॉ. रंजनसूरिदेव

पटना
२०-७-९५

आपने बहुत श्रम किया है और प्राकृत भाषा के प्राचीन स्वरूप तथा **अर्धमागधी ग्रन्थों की सही सम्पादन पद्धति को एक नयी दिशा प्रदान की है।**

डो. प्रेमसुमन जैन

उदयपुर
२४-७-९५

प्राकृत के क्षेत्र में आपका यह योगदान निश्चित ही विशेष स्मरणीय रहेगा। इस दिशा में **आपके द्वारा सुझाये गये मानदण्ड बड़े ही उपयोगी सिद्ध हो सकते हैं।**

— डो. भागचंद् चैन

नागपुर
१४-९-९५

आगम ग्रन्थों के सम्पादन के क्षेत्र में आपका यह प्रयास निश्चय ही अनुसन्धान के **नये आयामों का विस्तार कर रहा है।**

— डॉ. दामोदर शास्त्री

सृंगेरी (करनाटक)
21-9-95

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

आगमों का सम्पादन एक जटिल प्रक्रिया है । सम्पादन के सही मानदण्डों को अपनाकर किये जाने वाले सम्पादन कार्यों को रूढिवादी लोग 'आगमों में फेरबदल' जैसे फतवे देकर न केवल हतोत्साहित करते हैं, अपितु आगम-ग्रन्थों के मूलस्वरूप का निर्धारण ही नहीं करने देते हैं। व्याकरण आदि शास्त्रों के सहयोग एवं सूक्ष्म किंतु विशद अध्ययन के बिना यह कार्य कदापि संभव नहीं है । **इस दिशा में गंभीर अध्ययन का परिचायक एक अति महत्त्वपूर्ण कार्य उक्त पुस्तक के रूप में सामने आया है,** जो कि विज्ञजनों में नितान्त स्पृहणीय एवं अनुकरणीय आदर्श है ।

प्राचीन भारतीय साहित्य-सम्पदा के वैज्ञानिक एवं प्रामाणिक अध्ययन, सम्पादन एवं पाठ-निर्धारण के लिए प्रत्येक प्राचीन भाषा का इस विधि से अध्ययन अपेक्षित है, तथा यह पुस्तक इस दिशा में कार्य करने के इच्छुक विद्वानों के लिए अच्छा मोडल बन सकती है ।

परिश्रमी एवं मेधावी विद्वद्वर्य डो. के. आर. चन्द्रा का यह प्रयास अभिनंदनीय है ।

'प्राकृत विद्या' नयी दिल्ली, जुलाई - सितम्बर, १९९५ -सम्पादक

डो. के. आर. चन्द्रा प्राकृत भाषा के विशिष्ट विद्वान् हैं । **उन्होंने आगमों में प्रयुक्त अर्द्धमागधी के प्राचीन रूपों का निर्धारण करने की दिशा में महत्त्वपूर्ण कदम उठाया है ।** सन् १९९२ में उन्होंने 'प्राचीन अर्धमागधी की खोज में' पुस्तक लिखकर इस कार्य को एक दिशा दी तथा अब Restoration of the Original Language of Ardhamāgadhī Texts पुस्तक प्रकाशित कर उन्होंने अपने कार्य को बलवत्तर रूप में पुष्ट किया है। आज अर्द्धमागधी भाषा में जो आगम उपलब्ध हैं उनमें अनेक शब्दों के पाठ-भेद दिखाई देते हैं । **अर्द्धमागधी का प्राचीन रूप कौनसा है, इसे निर्धारित करने का प्रयत्न डो. चन्द्रा से पूर्व किसी अन्य विद्वान् ने नहीं किया** । डो. चन्द्रा ने इस पुस्तक के प्रथम-खण्ड में महावीर जैन विद्यालय, बम्बई से प्रकाशित आचारांग सूत्र में दिए गए पाण्डुलिपि-पाठ-भेदों को ही आधार बनाया है तथा इस खण्ड में उन्होंने **यथा, तथा, प्रवेदितम्, एकदा, एकः, एके, एकेषाम, औपपादिक/औपपातिक, लोकम्, लोके एवं क्षेत्रज्ञ**

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

शब्दों के विभिन्न प्राकृत पाठों का विश्लेषण किया है। द्वितीय-खण्ड में उन्होंने आचारांग, सूत्रकृतांग, ऋषिभाषित, उत्तराध्ययन, दशवैकालिक एवं विभिन्न चूर्णियों व टीकाओं में प्राप्त कुछ शब्दों का पाठ-भेद प्रस्तुत कर उनका भी प्राचीनता की दृष्टि से विश्लेषण किया है।

आगम-पाठ-संशोधकों, सम्पादकों एवं प्राकृत-भाषा-जिज्ञासुओं के लिए पुस्तक अतीव उपयोगी है।

'जिनवाणी', जयपुर, अगस्त, १९९५ **-संपा. धर्मचंद्र जैन**

જૈન આગમોની મૂળ અર્ધમાગધી ભાષાના પુનઃપ્રસ્થાપન માટેનો આ એક અત્યન્ત પ્રશંસનીય પ્રયત્ન છે. પ્રાચીનતમ આગમ મનાતા **"આચારાંગસૂત્ર"**ના પ્રથમ ભાગમાંથી છૂટાછવાયા દશ શબ્દો લઈને તેનાં પાઠાન્તરોનો એક અભ્યાસ અહીં રજૂ કરવામાં આવ્યો છે. આ માટે **અનેક કોષ્ઠકો દ્વારા સુન્દર પૃથક્કરણ કરેલું છે.** આ પૃથ્થકરણના અધ્યયન ઉપરથી ફલિત થાય છે કે **જાણે મૂળ અર્ધમાગધી ભાષાનું પ્રથમ શૌરસેની પ્રાકૃત અને પછી મહારાષ્ટ્રી પ્રાકૃતમાં રૂપાન્તર જ થઈ ગયું છે !** આ માટે અનેક કારણો જવાબદાર હોઈ શકે : એક તો સમય વીતતાં થઈ ગયેલ સ્વાભાવિક પરિવર્તનો, બીજું પૂર્વ ભારતમાંથી પશ્ચિમ ભારતમાં સ્થાળાન્તર, ત્રીજું લહિયાઓ તથા વાચકોની નિષ્કાળજી અને ચોથું તે તે સમયના સમાજને સરળતાથી સમજાય તે માટેના સહેતુક પ્રયત્નો. આમાં અન્ય ચાર પ્રકાશિત પ્રાચીન આગમોમાંના સમાન શબ્દરૂપો સાથે તુલના પણ કરેલી છે — જેથી કેટલાં જૂનાં રૂપો ઉપલબ્ધ થઈ શકે છે તેનો ખ્યાલ આવે.

આ તો એક નમૂનારૂપ આધ્યયન છે. આ જ રીતે સર્વે હસ્તપ્રતોને આધારે **પ્રાચીન આગમોમાં આવતા સર્વે પ્રાચીન પ્રયોગોનો *તુલનાત્મક અભ્યાસ* કરાય તો સમ્પાદકોને પ્રાચીન અર્ધમાગધી શબ્દો પુષ્કળ મળી રહે અને એ રીતે આગમોની નવી આવૃત્તિમાં મૂળ ભાષા પુનઃપ્રસ્થાપિત થઈ શકે.** આવા કેટલાક શબ્દોની સૂચિ પણ લેખકે આપી છે. હસ્તપ્રતોમાં તેમજ મુદ્રિત આગમોના પાઠમાં પણ જે પ્રાચીન પ્રયોગો મળે છે તે આ કાર્ય માટે દિશાશૂચન કરે છે. અને આવા કારણે જ ડૉ.ચન્દ્રને આ દિશામાં પહેલ કરવાની પ્રેરણા મળેલી.

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

મૂળ રૂપો જોતાં સ્પષ્ટ થાય છે કે અસલ અર્ધમાગધી ભાષા સંસ્કૃત તેમજ પાલિની અત્યન્ત નજીક છે જેથી 'त' નો 'द' કે 'न'નો'ण' એવા ફેરફારો ત્યારે નહોતા થતા તેમ સમજાય છે.

ડૉ. ચન્દ્ર સાચી દિશામાં પ્રયત્ન કરી રહ્યા છે અને તેમણે રજૂ કરેલા નમૂનારૂપ અભ્યાસ ઉપરતી સ્પષ્ટ થાય છે કે આ અત્યન્ત આવશ્યક પણ છે. તેમની સૂક્ષ્મેક્ષિકા અને આવશ્યક કાર્યમાંની પહેલ માટે તેઓ ખૂબ જ અભિનંદનને પાત્ર છે, ધન્યવાદને પાત્ર છે, અને આવા મન્થન દ્વારા પ્રાચીન આગમોના અધ્યેતાઓ ઉપર તેમના દ્વારા મોટો ઉપકાર થયો છે એમ કહેવામાં અતિશયોક્તિ નથી. આ નવી દષ્ટિએ બધાં આગમોની સમીક્ષિત આવૃત્તિ (Critical Edition) તૈયાર કરાય એ જરૂરી છે. આ માટે તેઓ "આચારાંગસૂત્ર"થી પ્રારમ્ભ કરવા ધારે છે. આવું ભગીરથ કાર્ય કોઈ સંસ્થા જ કરી શકે, અનેક વ્યક્તિઓનું જૂથ મંડે તો જ સફળ થાય. આ માટે ડૉ. ચન્દ્ર સર્વ દિશાએથી પ્રોત્સાહનના અધિકારી છે, જૈન આચાર્યવર્યો તરફથી પણ તેમને પૂરતું પ્રોત્સાહન પ્રાપ્ત થાય તેવી શ્રદ્ધા રાખીએ. જો તેમ થશે તો આ મહત્ત્વપૂર્ણ ક્ષેત્રમાં ક્રાન્તિ થઈ ગણાશે.

વડોદરા — પ્રો. જયન્ત પ્રે. ઠાકર

૧૨-૧-૯૭

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

३. परंपरागत प्राकृत व्याकरण की समीक्षा और अर्धमागधी, १९९५

(3. Paraṁparāgata Prākṛta Vyākaraṇa kī Samīkṣā aur Ardhamāgadhī, 1995)

Directions of Rehabilitating Ardhamāgadhī

Dr. Chandra has advanced in the book enough evidence to show that the original language of the Śvetāmbara Āgamas has suffered numerous alterations under the impact of later influential literary Śaurasenī especially literary Mahārāṣṭrī. Prakrit. Some glimpses of a number of original features of Ardhamāgadhī, we can get from a few earlier Canonical texts and from some preserved archaic variant readings. Chandra ends with a plea to accept those readings as genuine original features and revise the relevent text portions of edited Āgamic works on that basis.

One of the weighty implications of Chandra's finding is quite evidently the fact that **they explode the contentions of those critics of the Ardhamāgadhī Canon according to whom the whole of the latter is unauthentic and secondary.** Chandra's present investigations supplement and corroborate what other scholars and himself have found from the linguistic, formal, stylistic, and content-based features that are shared by the Aśokan and Pāli on the one hand and Canonical Ardhamāgadhī on the other.

Dr. Chandra's work necessitates revising prevalent view about the original Ardhamāgadhī and invites fresh efforts to determine its real linguistic character.

–Dr. H. C. Bhayani

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

The traditional works of Prakrit grammar are styled on the traditional Sanskrit grammars structured according to the Pāṇinian system or many others up to Hemacandra. They are in the form of *sūtras* in Sanskrit with a commentary which explains and supplements the *sūtras* by illustrations and technical discussions wherever necessary. As has been observed by Nitti-Dolci, Māhārāṣṭrī grammarians and the rest of other Prakrit grammarians wrote in Sanskrit; among them there were some, like Hemacandra and Kramādīśvara, who conceived Prakrit grammar as an appendix of Sanskrit grammar. There existed in Sanskrit for every system of grammar a *dhātupāṭha* in which the verbs were collected together in a section. The Prakrit grammarians were of the opinion that students would refer to them and be able to construct different types of Prakrit verbal forms, in analogy with nouns. The Prakrit grammarians did not take into account the verbs, at the time of framing the rules on the phonetic correspondences. Consequently they have expounded the alterations that the affixes have undergone without troubling their mind about the form of the verbal themes. They thought of filling up the lacunae by insertion as examples certain verbal themes of Prakrit, either in the section on conjugation or in the small supplementary list of *dhātvādeśas* rather as a collection of samples, than an exposition of the whole. We can harldy say anything about grammars of the Jaina-dialects. Without a grammar, probably these dialects had been employed the most and had spread far and wide in India. Since the Prakrits of the Jaina canonical and noncanonical texts offered strong similarities with Māhārāṣṭrī, they preferred to use the grammars of Māhārāṣṭrī by adopting it more or less according to their needs. It is due to this circumstance that Hemacandra who embarked upon teaching the diverse dialects of his religion dressed his materials about the frame-works of the *sūtras* of Vararuci on classical Māhārāṣṭrī. However, it so happened that a grammarian, while copying out merely inserts in his expositions certain facts taken from the languages of the texts that are of particular interest to him : the remarks on *Ārṣa* or Ardhamāgdhī that Hemacandra had made in his commentary is the result of this attitude.

Modern linguists like Sukumar Sen has noted that the Prakrit speeches, recognised by the old grammarians, that occur in Sanskrit dramas and in poems do not come in the direct line of development of

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

Indo-Aryan. The Prakrits are almost entirely based on artificial generalisation of the second phase of Middle-Indo-Aryan and *stand* in the same relation to the latter proper as classical Sanskrit stands to Vedic.

The author of our presents book, Dr. K. R. Chandra, **has taken a clue from both these scholars and many more too, and endeavoured to tread a new path of a syncretic viewpoint of describing the language objectively and tried to examine how far the rules of the traditional grammars apply to Prakrits in general and Ardhmāgadhī in particular.** Taking his clues form old word-forms preserved in the palm-leaf manuscripts, the readings whereof are recorded in some of the critical editions of *Āgamas* and *cūrṇis* of Jainism, and also from the fact that Mahāvīra who preached in Ardhamāgdhī was almost a contemporary of Buddha from chronological point of view, and not far removed in distance in point of geographical region of the sojourn for preaching, and from his logical inference that Pāli, the mother tongue of Buddha could not be far removed from Mahāvīra's original mother tongue, Ardhmāgdhī, **Dr. Chandra has embarked upon the task of discovering genuine original features of the text-portions of edited Āgamic works. His comparative study of traditional grammars is ultimately targeted at finding the original features of the language in which Mahāvīra actually preached.** It is to this end that he has discussed his subject in fifteen chapters and beginning with Bharatamuni and the genesis of the Prakrit tongue in general, and then deliberating on the changes of initial and medial consonants, vowels, **he has tried to discover two forms of the Ardhmāgadhī, one ancient and other of medieval ages,** and has proposed or suggested lines on which the so-far-critically-edited Jaina Āgamic texts **are now required to be re-edited. Although his views on the '*yoni*' of Prakrit are hardly convincing, his discovery has far-reaching implications, which are likely to be instrumental in raising new controversies inspite of their basically sound academic foundation.** Dr. Chanda deserves our sympathy for embarking on a highly sensitive project, and also **our encomiums for the academic courage he has exhibited in propounding his new discovery.**

Ahmedabad. — **Dr. N. M. Kansara**

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

इस ग्रंथ में प्राकृत भाषा के व्याकरण संबंधी नियमों का **ऊहापोहपूर्वक प्रतिपादन किया गया है, वैदुष्यपूर्ण मीमांसा की है**। विद्वान् लेखक ने प्राकृत व्याकरण की उन सभी सूक्ष्म समस्याओं पर गम्भीरता से विवेचना की है जो प्रायः प्राकृत भाषा प्रेमियों के समक्ष उपस्थित रहती हैं। सभी विषयों का विशद प्रतिपादन लेखक के गम्भीर एवं व्यापक अध्ययन तथा विस्तृत अनुभव का परिचायक है। **समस्याओं को ऐतिहासिक परिप्रेक्ष्य में समझ कर उनके निराकरण का प्रयास किया गया है**। अनेक मौलिक तथ्यों को उजागर किया गया है। लेखक की भाषा-वैज्ञानिक तथा ऐतिहासिक दृष्टि और नवोन्मेषशालिनी प्रज्ञा समग्र ग्रन्थ में प्रतिबिम्बित है। **लेखक का निवेदन है कि प्राचीन पाठ को मूल पाठ मानकर उसे प्राथमिकता दी जाय जिससे मूल प्राचीन अर्धमागधी का संरक्षण हो सके।**

पुस्तक को समग्र रूप में पढ़कर यही धारणा बनती है कि **यह प्राकृत के अध्ययन के क्षेत्र में नयी दिशा का उन्मीलन करने वाली है**। यह ग्रन्थ लेखक की नितान्त शोधवृत्ति तथा भाषा-वैज्ञानिक दृष्टि का परिचायक है। प्राकृत भाषा में रुचि रखने वालों के लिए तथा **विशेषरूप से आगमों पर शोध करने वाले विद्वज्जनों के लिए अवश्य पठनीय है, संग्रहणीय है**। ऐसा विश्वास होता है कि इसे पढ़कर उनकी अनेक भ्रान्त धारणाओं का निराकरण होगा।

श्रमण, जन-मार्च, १९९६ **—प्रो. सुरेशचन्द्र पाण्डे**

आपकी **"परम्परागत प्राकृत व्याकरण की समीक्षा और अर्धमागधी"** नामक पुस्तक भी आपकी पूर्व-प्रकाशित पुस्तकों के अनुरूप गवेषणात्मक और उपलब्ध भाषात्मक प्रयोगों पर आधारित है। इस पुस्तक द्वारा **आपने प्राकृत व्याकरण के क्षेत्र में समीक्षात्मक और ऐतिहासिक अध्ययन को गति दी है।** उपलब्ध प्राकृत व्याकरण के ग्रन्थों की अपनी सीमाएँ हैं। **उनकी सामग्री/विधानों का सूझ-बुझ के साथ ही उपयोग किया जाना चाहिए, यह आपकी इस पुस्तक ने प्रमाणित किया है।**

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

इस पुस्तक में कालानुक्रम से दिये गये कतिपय शब्दों के प्रयोगों ने **प्राचीन प्राकृत ग्रंथों के सम्पादन को भी एक दिशा दी है।** इससे यह बौद्धिक निष्कर्ष भी निकलता है कि कोई भी प्राकृत कुछ निश्चित बंधे-बंधाये नियमों के सहारे नहीं समझी जा सकती। इसके लिए सभी प्राकृतों के अन्तः- सम्बन्धों को समझना भी जरूरी है। इसे आपने अर्धमागधी के स्वरूप की कुछ विशेषताओं द्वारा समझाया भी है। पाण्डुलिपियों के प्रयोगों के महत्त्व को भी पुस्तक में रेखांकित किया है। **इस तरह का सत्प्रयत्न शौरसेनी प्राकृत के प्राचीन सिद्धान्त-ग्रन्थों की भाषा के क्षेत्र में भी होना चाहिए।** आपका यह प्रेरणास्पद सारस्वत पुरुषार्थ अभिनंदनीय है।

—डॉ. प्रेमसुमन जैन

उदयपुर

२५-२-९७

સંશોધનનું અતિસુંદર પુસ્તક. પ્રારંભમાં લેખકે સંસ્કૃત અને પ્રાકૃત ભાષાઓના પરસ્પર સંબંધને ઉદાહરણો તથા ઉદ્ધરણો આપી વિશદ રીતે સમજાવ્યો છે. આમાં "પ્રકૃતિ" અને "યોનિ" શબ્દોનો જે અર્થ કર્યો છે તે પ્રતિતિકર લાગતો નથી. પરન્તુ તે પછીનું જે મુદ્દાસર વિવેચન છે તે સઘળું દાદ માગી લે એવું છે. ઉપલબ્ધ પ્રાચીન સાહિત્ય તેમજ શિલાલેખોમાં મળતા ભાષાનાં સ્વરૂપની દૃષ્ટિએ અહીં પરંપરાગત પ્રાકૃત વ્યાકરણના કેટલાક નિયમોની સમીક્ષા કરી અર્ધમાગધી ભાષાની વિશેષતાઓ દર્શાવવાનો પ્રબળ અને પ્રશસ્ય પ્રયત્ન કર્યો છે. વિશેષાવશ્યકભાષ્યની એક પ્રાચીન તાડપત્રીય હસ્તપ્રત જેસલમેરના ભંડારમાંથી પ્રાપ્ત થઈ તેમાંના પાઠોના અભ્યાસે લેખકને આ નવી દિશા સુઝાડી.

વ્યાકરણના આ નિયમોની ચર્ચામાં વિવિધ લબ્ધપ્રતિષ્ઠિત વિદ્વાનોનાં મન્તવ્યો રજૂ કરી સરસ વિશ્લેષણ કર્યું છે. વળી આગમો આદિમાંથી થોકબંધ ઉદાહરણો આપ્યાં છે. અર્ધમાગધીનું તો વ્યાકરણ જ રચાયું નથી; આચાર્ય હેમચન્દ્ર પણ તેને 'આર્ષ' કહી અટકી ગયા છે. વ્યાકરણના નિયમો પછીની પ્રાકૃત ભાષાઓ માટે ઘડાયા છે. આથી અઘોષ વ્યંજનોનું ઘોષીકરણ, મધ્યે આવતાં વ્યંજનનો લોપ તથા ન નો ણ થવો વગેરે માટેના નિયમો પ્રાચીન અર્ધમાગધીને લાગુ પાડવા ઉચિત નથી. અર્ધમાગધી આગમોના સર્વ સંપાદકોએ વ્યાકરણના નિયમોને લક્ષમાં લઈને સંપાદન કર્યું હોવાથી ભાષામાં ખૂબ પરિવર્તન આવી ગયું છે. આ રીતે મહારાષ્ટ્રી પ્રાકૃતનાં રૂપો સારા પ્રમાણમાં ઘૂસી

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

ગયાં છે.

આ માટે એક રોચક ઉદાહરણ જોઈએ. પ્રાચીન કાળમાં ન 'L' આ રીતે લખાતો, **અને ण 'I'** આમ લખાતો. ભેદ સ્પષ્ટ હતો. ગુપ્તકાળના પ્રારંભે દેવનાગરીના બધા **અક્ષરો** ઉપર શિરોરેખાની પ્રથા થઈ આથી न ના સ્વરૂપનો ण થવા લાગ્યો. ઉચ્ચારણમાં **પણ न** નો ण વિશેષ થવા લાગ્યો. પરિણામે न નો ण થાય એવો નિયમ ઘડાયો. આ મહારાષ્ટ્રીય પ્રાકૃતનો નિયમ પૂર્વભારતમાં પાંગરેલી પ્રાચીન અર્ધમાગધીને લગાડવો એ ક્યાંનો ન્યાય ?

દૈવયોગે હસ્તપ્રતોમાં સારા પ્રમાણમાં પ્રાચીન રૂપો મળે છે. એવું પણ દષ્ટિગોચર થાય છે કે ચૂર્ણિ-ટીકાઓમાં જૂનાં રૂપો મળે છે અને જૂના મૂળ ગ્રંથોમાં નવાં રૂપો વધ્યાં છે. ડૉ. ચન્દ્રને **વિશેષાવશ્યકભાષ્ય**ની જેસલમેરની તાડપત્રીય પ્રતના નિરીક્ષણમાંથી પ્રેરણા મળી અને તેમણે મૂળ અર્ધમાગધી પ્રયોગોની શોધમાં સંશોધન આદર્યું. તેમનું આ સંશોધનનું ઊંડાણ પ્રશંસાપાત્ર છે. આમાંથી પ્રતીત થાય છે કે મૂળ ભાષામાં ધ્વન્યાત્મક દષ્ટિએ બહુ પરિવર્તન થઈ ગયું છે. એમના આ અભ્યાસનો નિષ્કર્ષ એવો છે કે :

પ્રાચીન ગ્રન્થોની ભાષા પ્રાચીન જ હોવી જોઈએ. સમયાન્તરે થયેલા વિકાર છોડી દેવા જોઈએ. પ્રમાણમાં અર્વાચીન એવી ચૂર્ણિ-ટીકાઓમાં આવતાં પ્રાચીન રૂપો આગમોમાં સ્વીકારવા જોઈએ. વળી હસ્તપ્રત-વિજ્ઞાનનો એ નિયમ છે કે ગ્રન્થોની પ્રતો જેમ વધારે ને વધારે લખાતી જાય તેમ ભાષા-પ્રયોગોમાં અધિક પરિવર્તન આવતું જાય અને તેથી જ પ્રાચીન ગ્રન્થોની સમીક્ષિત આવૃત્તિ (critical edition) થવી જોઈએ. આથી ડૉ. **ચન્દ્ર જણાવે છે કે અર્થની સંવાદિતા જળવાતી હોય તો પ્રાચીન શબ્દ-રૂપો અપનાવવા જોઈએ અને એ રીતે આ નવી દષ્ટિએ બધાં આગમોની નવી આવૃત્તિઓ થવી જોઈએ.** અવલોકનકાર તેમના આ નિષ્કર્ષ સાથે સંપૂર્ણ રીતે સહમત થાય છે અને તેનું તો એવું સૂચન છે - દઢતાપૂર્વકનું સૂચન છે કે ભારતીય પાઠ-સમીક્ષા (Indian Textual Criticism)ના માન્ય નિયમો અનુસાર આ અત્યન્ત મહત્ત્વના પ્રાચીન ગ્રન્થોની નવી આવૃત્તિ જ નહિ પણ સમીક્ષિત આવૃત્તિ (Critical Edition) કરવી ખૂબ જરૂરી છે.

ડૉ.ચન્દ્રની દષ્ટિ આપણી પ્રશંસા માગી લે છે એટલું જ નહિ, પણ તે માટે આપણે તેમના આભારી છીએ. તેમના આ પ્રયત્નોમાં તેમને સર્વે દિશાએથી પ્રોત્સાહન મળવું જોઈએ અને જૈન ધર્મના પૂજ્ય આચાર્યોએ પણ રૂઢિચુસ્તતા ન રાખતાં સંપ્રદાયના હિતમાં જ આવકારવી જોઈએ, **આવા સંશોધન દ્વારા ડૉ.ચન્દ્રએ ભારતીય સંસ્કૃતિની અનુપમ સેવા બજાવી છે અને તેઓ આ ઉત્તમ પ્રવૃત્તિમાં સતત રત રહે તેવી અભિલાષા છે.**

વડોદરા **—પ્રો.જયંત પ્રે. ઠાકર**

૧૨-૧-૯૭

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

विविध
Miscellaneous

Dear Prof. Dr. Chandra,

Received with thanks the off-print of your article on editing old Amg. texts in 'Nirgrantha', Vol. 1, 1995, S.C.E.R.Centre, Ahmedabad.

The next generation shall thank you for the great undertaking you are pursuing.

SANGLI —Prof G.V. Tagare

16-10-96

"विशेषावश्यकभाष्य" की पाण्डुलिपि पर **जो भाषा-शास्त्रीय चिन्तन आपने प्रस्तुत किया है वह महत्त्वपूर्ण है। इससे पाठ शुद्ध करने में सहयोग मिलेगा।**

हमारी दृष्टि में इसके साथ अर्थ को मुख्य आधार मानकर पाठ-शुद्धि का प्रयत्न और होना चाहिए। **केवल भाषा-शास्त्रीय दृष्टिकोण पाठ-शुद्धि के लिए अधूरा रहेगा। आपने जो परिश्रम किया है वह स्तुत्य है।**

लाडनूँ

४ नवेम्बर '९६ **—आचार्य श्री महाप्रज्ञजी**

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

आपके द्वारा प्रेषित 'विशेषावश्यकभाष्य' की एक प्रति में प्राप्य प्राचीन पाठों के आधार पर अर्धमागधी के मूल पाठ की विवेचना से संदर्भित आलेख की अनुमुद्रित प्रति प्राप्त हुई । **आपने अर्धमागधी के भाषा-वैज्ञानिक अध्ययन और पाठानुशीलन के क्षेत्र में डो. ए. एन. उपाध्ये द्वारा प्रवर्तित परम्परा को ततोऽधिक विकसित करने का ऐतिहासिक और क्रोशशिलात्मक कार्य किया है ।** इससे आपने प्राकृत वाङ्मय के अध्येता भाषाशास्त्रियों में पांक्तेयता आयत्त की है । मेरा भूरिशः साधुवाद स्वीकार करें ।

पटना

१-११-९६ **—प्रो. श्रीरंजनसूरिदेव**

Dear Professor Chandra,

Thank you very much for your article on "**Editing of ancient Ardhamāgadhī texts in view of the text of (the) Viśeṣāvaśyakabhāṣya**" and for Poddar's review of your Hindi book. **Alsdrof became more aware of the problem you are dealing with at the thesis of his student Oetjens. Thus your argument may be correct and the treatment of ancient texts by Indian scholars more careful from the linguistical point of view.** There can be found differences in Prakrit orthography in Western editions, too. We are, however, globally confronted with progressing cultural disinterest as a consequence of democracy. Interest in Jainism and Prakrit Studies is dwindling in this country and it won't be much better in India, I believe, though manuscripts and books are much nearer. **Therefore, as a Western editor of *Amg.* and *Pkt.*, I follow the rules of the Prakrit grammarians for practical reasons.**

Please keep in contact with me.

With best wishes

Heidelberg, Germany sincerely yours

12-12-96 **– Prof. W. B. Bollee**

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

FACULTY OF ASIAN STUDIES, ASIAN HISTORY CENTRE

14 April 1997 CANBERRA ACT 0200 AUSTRALIA

Dear Prakrit Jain Vidya Vikas Fund,

The exact nature of the original language of the Jaina texts is without doubt an important question for all those who have a scholarly interest in Jaina religion and literature. The plan to hold a seminar on this topic is a very welcome one and it is to be hoped that the important papers presented therein will be published to allow for the dissemination of information to a wide audience. I have no hesitation in wishing the proceedings every success.

Sincerely

Royce Wiles

Scotland,
U.K.
16/4/97

Dear Professor Chandra,

Thank you for your letter advising me about the forthcoming seminar on the "Original Language of the Jain Canonical Texts".

It is very gratifying to learn that such an academic function has been organised and that so many distinguished scholars are participating in it. As you will know, sixty or so yearss ago Heinrich Lüders saw the desirability of describing the linguistic stratum underlying the Pāli scriptures. The fragmentary results of this research appeared in his *Beobachtungen über die Sprache des buddhistischen Urkanons* and Buddhist philology has continued to benefit from his insights. **Unfortunately, with the exception of Alsdorf. no western researcher has attempted to consider the question of the original language of the Jain scriptures, so that it is very much to the credit of Indian scholars that they are beginning to ad-**

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

dress this subject in a critical and concerted manner. The first valuable results of this line of investigation are familiar to me from your Prācīn Ardhamāgadhī kī Khoj Meṃ and I would hope that the seminar leads to the emergence and dissemination of further knowledge about this fascinating subject. Only by challenging longheld presuppositions will scholarship on ancient texts be advanced. My best wishes for a successful and fruitful seminar.

Yours sincerely,
Paul Dundas
Senior Leturer in Sanskrit
University of Edinburgh, England.

Marburg, Germany
22 April 1997

Dear Dr. Chandra,

It is with great pleasure that I read your announcement of the release of the *Ācārāṅga, prathama adhyayana,* linguistically re-edited by you. Every scholar in the field of Jainism will welcome this enormous undertaking under your able hands and will very quickly realize the value of such a publication. Your work will undoubtedly be a major contribution as a basis for further research in the Jaina canonical studies.

With all good wishes for other such projects,

Yours sincerely
Jayendra Soni

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

To : The Seminar Organizers,
Jināgamõ kī Mūlabhāṣā par Vidvatsaṃgoṣṭhī,
c/o Prakrit Jain Vidya Vikas Fund,
375 Saraswati Nagar, Ahmedabad.

SOAS,
LONDON
20-4-97

Thank you for informing me of the seminar on the Original Language of the Jain Canonical Texts that is scheduled to take place shortly in Ahmedabad. **Yor are to be congratulated on the selection and range of topics, and on the timing of the conference at this important juncture in Jain Studies.**

My colleagues and I hope that, by subsequent publication of the proceedings, it will encourage and facilitate more widespread study, publication, and discussion of the primary manuscript sources. **We would also wish to convey our congratulations to Dr. K. R. Chandra on the appearance of his stimulating re-appraisal of the linguistic form of the text of Ācārāṅga.**

J. C. Wright
Professor of Sanskrit in the Univ. of London
School of Oriental and African Studies

6, Huttles Green, Shepreth,
Royston, Herts,
28/5/97

Dear Dr Chandra,

Thank you for your letter of 15/5/97. I am delighted to hear that the Seminar on the subject of The Original Language of the Jain Canonical Texts was so successful

I was interested to hear the outcome of your deliberations. I think it is very likely that Ardha-māgadhī was the original language of the Jināgama or, since the language of the original Jināgama was presumably earlier than the Ardha-māgadhī we possess now, perhaps we should call it Old Ardha-māgadhī. I believe that this

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

language was affected by the Mahārāṣṭrī Prakrit after Jainism had spread to Mahārāṣṭra, and **I would agree that the Śauraseni Agamic works are relatively later.**

If there are any plans to publish the proceedings of the Seminar I should be very glad to receive a copy.

With best wishes,

Yours sincerely.

K. R. Norman

South Asia Dept., SOAS, University of London,
Thornhaugh St., Russell Sq., London.
28/5/97

Thank yor for sending me a copy of your report on the outcome of the "Original language" Seminar.

Of course **I remain most interested in the progress of your re-appraisal of the testimony of Ācārāṅga MSS for the language of Amg. texts,** and hopeful that you can publish more of the information gleaned. Would that someone might be inspired to produce facsimile reproductions of the principal MSS, in emulation of the Śatapiṭaka Series. That is something that ought to be demanded at every conference, before the MSS disintegrate entirely.

Your findings seem to confirm that a return to the method of Jacobi's 1882 edition of Ācārāṅga would be appropriate, in case of variation, he gave in italics the most antique-looking reading that happened to be available (e.g......**nā*ta*ṃ** bhavati... ovavāiye....), even although, on his own showing, such readings can always be put down to an instinct to clarify the meaning. Thus he rightly could take note of effects like 1.2 māyā me **pi*t*ā** me and 1.6 **mā*t*araṃ** piyaraṃ. But I do not believe that it is safe to refer to this (as he did) as a 'retention' of *-t-* : one is presumably less likely to find a *-t-* in a purely Prakrit form like *bhāyā*. With *pariṇṇā*, and with the same sort of effect in *hiraṇṇeṇaṃ suvanneṇaṃ* elsewhere (ZDMG 1880), **his policy was to archaize with *parinnā*** and **suvaṇṇeṇaṃ.**

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

I take the opportunity to congratulate you on your explanation of locative -*ammi*, which seems to solve one of the most perplexing problems of all. It goes well with the texts' failure to distinguish between *o*- and *u*-, and with Bühler's suggestion that graphic confusion between *n* and *ṇ* was involved : that would seem to justify Jacobi in his willingness to emend *u*-, *ṇ*- and ṇṇ (irrespective of the actual readings, as I understand him).

Schubring's identification of two groups within the Ācārāṅga MSS, and of separate strata of verse and prose material, seems to hint that critical editing is possible (though he did not make the attempt, and It would be a thankless task without access to facsimiles of the MSS).

With all good wishes,

– J. C. Wright

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

जैन आगमों के संपादकों एवं भाषा-संशोधक विद्वानों के द्वारा कार्यान्वित करने योग्य एक उत्तम सुझाव

(A Superb Proposal worth Execution by Research Scholars of Linguistics and Editors of Jain Canonical Works)

Date 26.2.1997

Dear Dr. Chandra,

I acknowledge with thanks the receipt of the appreciative remarks of eminent scholars about your pioneering work in restoration of Ur-AMG (Ardhamāgadhī) of the Āgamas.

As you know it both in my private letters to you and in research journals, I have expressed my appreciation of your path-finding to Ur-AMG. Due to geographical distance between us and my pre-occupation with Sanskrit Mahāpurāṇas, I could not collaborate with you directly.

In fact yours **is an Epoch-making Project worth undertaking by some Research Institute,** preferably an institute for the restoration of Ur-AMG and not by frail old individual scholars like us.

I think you and like-minded scholars like Dr.Malvnia should try or move the leaders of the community **for founding such an Institute at Ahmedabad** which is a suitable place from many points of view such as availability of MSS material, co-operation of competent scholars and last but the most important factor the liberal munificence of your community.

Kindly write to me about your academic activities for though I am 86, I still take interest in such research.

With kind regards and thanks,

Yours sincerely,

G. V. Tagare

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

Publications of the author (K. R. Chandra)

Published by Prakrit Jain Vidya Vikas Fund, Ahmedabad-15

१. आचारांग, प्रथम अध्ययन (भाषिक दृष्टि से पुनः सम्पादन), १९९७.

२. परंपरागत प्राकृत व्याकरण की समीक्षा और अर्धमागधी, १९९५

३. Restoration of the Original Language of Ardhamāgadhī Canonical Texts, 1994

४. प्राचीन अर्धमागधी की खोज में, १९९१–९२

५. **Jain Philosophy** and Religion, 1996

६. प्राकृत–हिन्दी **कोश** (पाइयसद्दमहण्णवो का किञ्चित् परिवर्तित रूप), १९८७

७. सम्मयासुंदरी कहा, हिन्दी अनुवाद के साथ (सह-अनुवादक), १९८९

८. भारतीय भाषाओं के विकास और साहित्य की समृद्धि में श्रमणों का महत्त्वपूर्ण **योगदान**, १९७९

९. जैन आगम साहित्य (सेमिनार ओन जैन केनोनिकल लिटरेचर, १९८६), १९९२

Published by L.D. Institute of Indology, Ahmedabad-380 009

१०. Proceedings of the Seminar on Prakrit Studies (1973), 1978

११. Prakrit Proper Names Dictionary, Vol. I, (Co-editor), 1970

१२. Prakrit Proper Names Dictionary, Vol. II, (Co-editor), 1972

१३. प्राकृत भाषाओं का तुलनात्मक व्याकरण एवं उनमें प्राक्-संस्कृत तत्व, **प्राकृत विद्यामंडल, अहमदाबाद**, १९८२

१४. A Critical Study of Paümacariyaṃ of Vimalasūri (Part I, Comparative Study of the **Rāma Story** and other stories, Part II, **Literary and Cultural Study), Research Instt. of Prakrit, Jainology and Ahiṁsā Vaishali, 1970**

१५. Literary Evaluation of Paümacariyaṃ, **Jain Cultural Research Society; Varanasi,** 1966

१६. Bhagwān Mahāvīr : Prophet of Tolerance, **Jain Mission Society, Madras,** 1975

१७. मुणिचंद-कहाणयं, मूलकथा, गुजराती अनुवाद, तुलनात्मक एवं आलोचनात्मक अध्ययन, प्रथम संस्करण, **जयभारत प्रकाशन, १९७३,** द्वितीय संस्करण, १९७७.

१८. अभयक्खाणयं, मूलकथा, गुजराती अनुवाद, तुलनात्मक एवं आलोचनात्मक अध्ययन, **सरस्वती प्रकाशन, अहमदाबाद,** १९७५

१९. प्राकृत गद्य-पद्य-संग्रह, कक्षा, ११, १९७६

२०. पालि गद्य-पद्य-संग्रह, कक्षा, ११, १९७६

२१. प्राकृत गद्य-पद्य-संग्रह, कक्षा, १२, १९७७

सह-संपादक, गुजरात राज्य स्कूल टेक्स्ट बोर्ड, अहमदाबाद

For purchase of Books No. 1 to 5, 8 to 9 and 13 place your orders with the Prakrit Text Society, C/o. L.D. Institute of Indology, Ahmedabad-380 009 and for books No. 6 to 7 and 15 with Parshwanath Vidyapeeth, I.T.I. Road, Varanasi-221005

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

ABOUT THE AUTHOR

Dr. K. R (Rishabh). CHANDRA, M.A.,Ph.D.

Formerly Reader & Head of the Dept. of Prakrit and Pali, School of Languages, Gujarat University, Ahmedabad.

Born : 28-6-31, Palri-M., Sirohi, Rajasthan.

M.A. Pali-Prakrit (Nagpur University, 1954)

Ph.D. Prakrit & Jainology (Vaishali, 1962)

Lecturer : Nagpur Mahavidyalay, Nagpur.

Senior Research Officer, L. D. Institute of Indology, Ahmedabad.

Reader & Ph.D. Guide, Gujarat Uni. Ahmedabad.

Author, Compiler and Editor of 20 Books.

Contributed more than 100 Research papers & articles.

Presented papers in 40 Conferences and Seminars.

Organised two Seminars (1973 & 1986) UGC. aided.

Recipient of Muni Shrī Puṇyavijayajī Prize & All India Prakrit Conference Award and Hemacandrācārya Navama Janmaśatābdī Gold Medal.

Hon. Secretary of Prakrit Jain Vidya Vikas Fund.

Outstanding Works authored, compiled and edited :

- Literary Evaluation of Paumacariyaṁ, 1966
- A Critical Study of Paumacariyaṁ by Vimalasūri, 1970
- Co-compiler of Prakrit Proper Names Dictionary, Part I & II, 1970 & 1972.
- Bhagwan Mahavir . Prophet of Tolerance, 1975
- Proceedings of the Seminar (1973) on Prakrit Studies, 1978
- Restoration of the Original Language of Ardhamāgadhī Texts, 1994
- Jain Philosophy and Religion, 1996
- प्राकृत भाषाओं का तुलनात्मक व्याकरण एवं उनमें प्राक्-संस्कृत तत्त्व, १९८२
- प्राकृत हिन्दी कोश (पाइय-सद्द-महण्णवो की किंचित् परिवर्तित आवृत्ति, १९८७
- नम्मयासुंदरी कहा, हिन्दी अनुवाद सहित, १९८९
- प्राचीन अर्धमागधी की खोज में, १९९१-९२
- जैन आगम साहित्य (Seminar on Jaina Āgama,1986), 1992
- परंपरागत प्राकृत व्याकरण की समीक्षा और अर्धमागधी, १९९५
- आचाराङ्ग, प्रथम श्रुत-स्कंध, प्रथम अध्ययन (भाषिक दृष्टि से पुनः संपादन), १९९७

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

अर्धमागधी का मूल स्वरूप निर्णीत करने का स्तुत्य प्रयास

भगवान महावीर ने अपना उपदेश अर्धमागधी भाषा में दिया था। डो.चन्द्रा जो अर्धमागधी की खोज में, व्यस्त है, उन्होंने आचारांग के प्रथम अध्ययन को अर्धमागधी में रूपान्तरित करने का जो प्रयत्न किया है वह प्रशंसनीय है। डो. चन्द्रा ने जो किया है वह वे ही कर सकते हैं क्योंकि उनका ध्यान वर्षों से इस ओर है कि वास्तविक दृष्टि से अर्धमागधी का क्या स्वरूप हो। यह कार्य सरल नहीं है। आचारांग को लेकर उन्होंने जो कार्य किया है वह अपूर्व है और इसके लिए वे धन्यवाद के पात्र हैं।

अहमदाबाद —**पं. दलसुख मालवणिया**

A CONSTANT CONTINUOUS LAUDABLE EFFORT

I agree with you whole heartedly and express my admiration at the labour you have taken to go into the statistical evidence for your conclusions. **You merit greatest** praise for your work and the assumption that **the oldest Ardhamāgadhī retained the old Indo-Aryan stops.** You will have also to consider **the retention of nasal n (न) (dental), and the dental cluster nn (न्न).**

PUNE –Prof. A.M.Ghatage

A New Direction in Jaina Canonical Research

This present latest attempt aims at applying his resultant concept and principles of **restoration to one small part of the Ardhāmāgadhi texts viz., the first chapter of the Ācārāṅga which scholars have accepted as the earliest text.** Dr. Chandra's present work succeeds substantiated as it is by evidence based on comparative documentation and assessment of all available texual data, in giving as a glimpse of some phonological and morphological features of the original Āgamic Ardhamāgadhi. **Let us earnestly hope this important research work is further taken up by other students of Amg. canon for which Dr. Chandra has given the lead and has demonstrated the method.**

Ahmedabad - **Prof. H. C. Bhayani**

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org